आई.एस.एस.एन. : 2320-2467

UGC Approved Journal ID-64649

Vol.08 Issue 33 September 2017

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक एवं शोध पत्रिका

युगान्तर

त्रैमासिक पत्रिका

आरती पब्लिशिंग हाउस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

आरती पब्लिशिंग हाउस एंड ड्रिस्ट्रीब्यूटर्स
युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

मुख्य कार्यालयः आर जेड 394, गली नं. 16
कैलाशपुरी एक्सटेंसन, नई दिल्ली–110045
ई मेलः akhilesh_tiwari1979@yahoo.com वेबसाइटः http://yugantar.co.in

वर्ष 08 अंक 33 (सितम्बर 2017) **युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका** **ISSN : 2320-2467**

(A Peer-Reviewed Research Journal)

युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649

प्रधान संपादक – प्रो. अनीता कपूर, (यू.एस.ए.)

सह संपादक– डॉ. सिधांशु राय सी. एस. जे. एम. विश्वविद्यालय कानपुर

संपादक मंडल–

प्रमोद तिवारी, सांसद (मोना मिश्रा रामपुर प्रतापगढ़)
एस.के. यादव, बिलासा गर्ल्स कॉलेज बिलासुपर
डॉ. आर.के पाण्डेय, शास.विवेकानन्द महाविद्यालय मैयर
डॉ श्याम लाल निराला, छ.ग.
डॉ. डी.एस. राजपूत डॉ. एच. एस गौर, विश्वविद्यालय सागर म.प्र.
डॉ. बिसरा भारती वेस्ट बंगाल
प्रो. निरंजन पटेल, आनंद सरदार पटेल विश्वविद्यालय आनंद नगर गुजरात
डॉ. राहुल पटेल इलाहाबाद विश्वविद्यालय

प्रवासी सलाहकार मंडल

डॉ. विजय कुमार महे ता – अध्यक्ष, अखिल विश्व हिन्दी समिति न्यूयार्क अर्मेरिका
प्रो. सत्येन्द्र श्रीवास्तव – कैम्बिज्र विश्वविद्यालय, कैम्बिज्र (यू.के.)
डॉ. शरे बहादुर सिंह – विश्व हिन्दी सेवी, न्यायार्क, अर्मेरिका
डॉ. पद्मेश गुप्त –अध्यक्ष, यू.के. हिन्दी समिति लंदन
डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण – टोक्यों विश्वविद्यालय, जापान
डॉ. सुशम वेदी – कोलंबिया यूनिवर्सिटी, न्यूयार्क
प्रो.हमे राज सुन्दर–महात्मा गाधी संस्थान, मोका मारीशस
स्नेह ठाकूर – संपादक – वसुधा, टोरन्टो, कनाड़ा
उषा राजे सक्सैना – उपाध्यक्ष, यू,के. हिन्दी समिति, लंदन
डॉ. सुरेश चन्द्र शुक्ल – अध्यक्ष इण्डो नार्वेजियन सूचना एव सांस्कृतिक मंच
डॉ. ऊषा देवी शुक्ला – डर्बन विश्वविद्यालय, डर्बनी (दक्षिण अफ्रीका)
अपर्णा शिरसागर–डॉफिन विश्वविद्यालय, पेरिस, फ्रासं
डॉ. घनश्याम शर्मा – वेनिस विश्वविद्यालय, इटली
राम प्रसाद भट्ट – हैम्वर्ग विश्वविद्यालय, जर्मनी
डॉ. पूर्णिमा बर्मन – यू.ए.ई.
प्रो. तजेन्दर शर्मा – अर्मेरिका (यू.के.)
डॉ. मुदुला शर्मा – त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल

इस पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व संबंधित लेखकों का है। आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों की अपनी अभिव्यक्ति है। युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका अथवा संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नही है।

© युगांतर

शोध लेख, मूल लेख प्रकाशन एवं मंगवाने हेतु इस पते पर संपर्क करें– (कृपया लेख ई–मेल के माध्यम से ही स्वीकार्य किये जायेगें।)

Editor-in-Chief
युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
मुख्य कार्यालयः आर जेड 394, गली नं. 16
कैलाशपुरी एक्सटेंसन, नई दिल्ली–110045
संपर्कः +91 94552 51733
ई मेलः akhilesh_tiwari1979@yahoo.com वेबसाइटः http://yugantar.co.in

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

(A Peer-Reviewed Research Journal)

युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649

वर्ष 08 अंक 33 सितम्बर 2017 Impact Factor: 4.0 ISSN : 2320-2467

अनुक्रमनिका

01	संयुक्त परिवार के बदलते प्रतिमानों के सामाजिक कारण (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)/अनुराधा पाण्डेय	01-07
02	आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा संचालित योजनाओं का जनजातीय शिक्षा पर प्रभावों का अध्ययन–विशेष शहडोल जिला/ डॉ. अरूण कुमार सिंह	08-12
03	भारतीय संस्कृति में महिला सशक्तिकरण के विविध उपकरण/डॉ. पुष्पा	13-25
04	हरियाणा व भारत छोड़ो आंदोलन : प्रैस पर आधारित एक अध्ययन/ डॉ॰ नीलम रानी	26-41
05	दूरस्त शिक्षा में तकनीकी का योगदान/डा0 (श्रीमती) अंजू लता	42-45
06	हिन्दी तथा छत्तीसगढ़ी में हास्य-व्यंग्य (विमर्श)/डॉ. सत्येन्द्र कुमार कश्यप	46-49
07	अध्यापक शिक्षाः मूल्य शिक्षा हेतु पाठ्य सहगामी क्रियायें/डा0 (श्रीमती) अंजु लता	50-53
08	लिंग असमानता–एक अध्ययन/इन्दुलता सिंह	54-57
09	ग्रामीण महिलाओं के धार्मिक क्रियाकलापों में परिवर्तन–एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (शहडोल जिले के विशेष संदर्भ में)/डॉ. अमृता सिंह चौहान	58-66
10	पत्नी के रूप में नारी के सन्दर्भ एवं महत्ता/देवव्रत यादव	67-68
11	माता के रूप में नारी के सन्दर्भ एवं महत्ता/देवव्रत यादव	69-70
12	उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति भावी शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन/डॉ0 सुषमा अग्रवाल एवं नीलम यादव	71-79
13	व्यक्तित्व विकास में संस्कृत साहित्य की भूमिका/डॉ. राजू प्रसाद अहरवाल	80-88
14	बघेली कहानी : वस्तुविन्यास और जीवन दर्शन/डॉ. राधवेन्द्र तिवारी एवं कमलेश तिवारी	89-97
15	English Historiography Of Medieval India : A Brief Survey/ Dr. Neelam Rani	98-101
16	हिन्दी कविता में व्यंग्य/ डॉ. अंजलि शर्मा	102-109
17	Role Of Agriculture in Green Economy/ Dr.Paras Jain	110-118
18	रायपुर जिले में महिला उद्यमिता (समस्याएं एवं संभावनाएं)/श्रीमती प्रीति कंसारा	119-124
19	भारत में आतंकवादः एक समस्या/ कु. चॉदनी नायक	125-129
20	Uniform Civil Code: A Distant Ray of Hope/ Anju	130-137
21	बघेलखण्ड में 1857 का विप्लव एवं राजनीतिक जागरण/रिया सिंह	138-141
22	समीक्षा के कतिपय भारतीय एवं पाश्चात्य मानक/डॉ. बी.एन. सिंह	142-148
23	संस्कृत शिक्षा अथवा संस्कृत भाषा के उत्थान हेतु संस्कृत पत्रकारिता एवं वर्तमान	149-155

	चुनौतियाँ/डॉ.धीरज प्रकाश जोशी	
24	डूंगरपुर जिले की जनसख्ं या घनत्व प्रतिरूप का सामाजिक–आर्थिक विकास पर प्रभाव/डॉ. पंकज रावल	156-166
25	राजस्थानी कहावतों में वर्षा का पूर्वानुमान/सुरेश कुमार सांदू	167-172

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

संयुक्त परिवार के बदलते प्रतिमानों के सामाजिक कारण
(रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

अनुराधा पाण्डेय
अतिथि विद्वान, समाजशास्त्र

संयुक्त परिवार का अस्तित्व भारतीय समाज में अत्यंत प्राचीनकाल से रहा है। यह व्यवस्था परम्परागत कृषि समाज की आवश्यकताओं के अनुकूल एक उपयुक्त व्यवस्था रही है। परन्तु आधुनिक विकासशील आर्थिक संरचना और विकास की प्रक्रिया की पृष्ठभूमि में यह व्यवस्था अपने परम्परागत स्वरूप की निरन्तरता को बनाए रखने में कठिनाई का अनुभव कर रही है। संयुक्त परिवार के बदलते प्रतिमान और परिस्थितियों की नवीन आवश्यकताओं के साथ अभियोजन करने में इस व्यवस्था को कठिनाई का अनुभव हो रहा है। व्यक्तिवादी जीवन दर्शन के प्रसार, विवाह और परिवार से सम्बन्धित नवीन मूल्यों और आधुनिक जीवन की बढ़ती हुई जटिलताओं ने भी परम्परागत संयुक्त परिवार के समक्ष अनेक समस्याएँ उत्पन्न कर दी हैं।

उपरोक्त कठिनाइयों एवं समस्याओं को दृष्टिगत में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन संयुक्त परिवार के महत्व को उजागर करने के साथ–साथ संयुक्त परिवारों के बदलते प्रतिमानों के सामाजिक कारणों को ढूँढ़ने में मददगार साबित होगा तथा हमारे समाज को एक नई दिशा प्रदान करेगा, ऐसा शोधार्थी को विश्वास है।

वर्तमान शोध का प्रेरक तत्व आधुनिक भारतीय समाज की गतिशीलता और परिवर्तन के नवीन प्रतिमान हैं। यह शोध इस मान्यता पर आधारित है कि परितर्वन की व्यापक प्रक्रिया ने परम्परागत भारतीय सामाजिक संरचना को प्रभावित किया हैं चूँकि संयुक्त परिवार एक सामाजिक संरचना का एक मौलिक स्तम्भ है अतः परिवर्तन की नवीन शक्तियों के प्रभावों का यदि संयुक्त परिवार व्यवस्था के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाये तो यह अध्ययन भारतीय सामाजिक संरचना में होने वाले परिवर्तन की प्रकृति, विस्तार और दिशा को स्पष्ट करेगा।

वर्तमान अध्ययन का उद्देश्य परितर्वनशील नगरीय और औद्योगिक परिस्थितियों के संदर्भ में भारतीय परिवार के संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक पक्षों से सम्बन्धित नवीन प्रतिमानों का अध्ययन करना है। यह अध्ययन मात्र सरंचनात्मक और प्रकार्यात्मक विशेषताओं में होने वाले परिवर्तन तक ही सीमित नहीं है। इस अध्ययन के द्वारा यह जानने का प्रयत्न किया गया है कि क्या भारतीय परिवार की संयुक्तता आधुनिक नगरीय और औद्योगिक परिस्थितियों में विलुप्त होती जा रही है या परिवर्तन की इन नवीन शक्तियों के होते हुए भी भारतीय परिवार अपने संयुक्तता के अस्तित्व और निरन्तरता को बनाए हुए है। यदि भारतीय परिवार की संयुक्तता

नगरीय परिवेश में भी बनी हुई है तो इस संयुक्तता के नवीन आयाम क्या हैं? क्या नगरीय आवास, शिक्षा, व्यावसायिक गतिशीलता और नवीन सामाजिक मूल्यों ने भारतीय परिवार की परम्परागत संयुक्तता को नवीन स्वरूप प्रदान किए हैं या इन कारकों ने संयुक्तता को विघटित करने में योगदान दिया है?

वर्तमान अध्ययन इस तथ्य की भी गंवेषणा करता है कि आधुनिक भारतीय परिवार में एकाकी परिवारों का वास्तविक स्वरूप क्या है? एकाकी परिवार अपने आदर्श स्वरूप में व्यक्तिवादी जीवन दर्शन, सीमित सम्बन्ध और सीमित उत्तरदायित्वों का प्रतीक है। संरचनात्मक दृष्टि से एकाकी परिवार का आकार छोटा होता है जिसमें बहुधा एक या दो पीढ़ी के सदस्य निवास करते हैं। परन्तु सदस्यों की सीमित संख्या से अधिक महत्वपूर्ण उनकी जीवन शैली है जो व्यक्तिवादी मूल्यों पर आधारित होती है। क्या आधुनिक नगरीय परिवेश में ऐसे आदर्शात्मक केन्द्रीय परिवारों का विकास हो रहा है या ये केन्द्रीय परिवार निवास और व्यवसाय के दृष्टिकोण से केन्द्रीय परिवार हैं और इनकी जीवन शैली परम्परागत संयुक्त परिवार की जीवन शैली से अत्यधिक निकट है?

वर्तमान अध्ययन यह जानने का प्रयास है कि बदलते प्रतिमानों की नवीन शक्तियों विशेषकर नगरीकरण, औद्योगिकीकरण, शिक्षा, व्यावसायिक गतिशीलता इत्यादि कारकों ने भारतीय एकाकी परिवारों की जीवन शैली के किन प्रतिमानों को विकसित किया है? क्या ये परिवार उस विशिष्ट सांस्कृतिक जीवन शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो व्यक्तिवादी मूल्यों पर आधारित है या ये केन्द्रीय परिवार नवीन परिस्थितियों में परम्परागत संयुक्त परिवार के लघु संस्करण हैं?

प्रस्तुत अध्ययन पारिवारिक जीवन में होने वाले परिवर्तनों के कालक्रम और परिवर्तन के विभिन्न आयामों के संदर्भ में अध्ययन करने का प्रयत्न करता है। विगत दो पीढ़ियों की तुलना में वर्तमान पीढ़ी में निवास, व्यवसाय, शिक्षा, पारिवारिक सम्बन्ध, पारिवारिक निर्णय, पारिवारिक सत्ता, स्त्रियों की स्थिति इत्यादि के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों के अध्ययन द्वारा यह ज्ञात करने का प्रयत्न किया गया है कि कालक्रम के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक भारतीय परिवार के संरचनात्मक और प्रकार्यात्मक परिवर्तनों का वास्तविक स्वरूप क्या है?

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष–

संयुक्त परिवार की व्यवस्था ने परम्परागत भारतीय संस्कृति के स्थायित्व और निरन्तरता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आधुनिक भारत में जिन नवीन सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थितियों का विकास हो रहा है उन्होंने भारतीय सामाजिक ढाँचे के विभिन्न आधारभूत तथ्यों को प्रभावित किया है। परिवर्तन की इन नवीन शक्तियों ने संयुक्त परिवार को भी अछूत नहीं छोड़ा है। संयुक्त परिवार विशेष रूप से नगरीय परिवेश में नितान्त नवीन

परिस्थितियों के साथ अभियोजित करने में कठिनाई का अनुभव कर रहा है। संयुक्त परिवार की संरचनात्मक विशेषताएँ विशेष रूप से उसके संयुक्तता की प्रकृति सदस्यों के सम्बन्धों की पारस्परिकता, आकार, सदस्यों के व्यवसाय, आर्थिक स्तर, निवास की प्रकृति इत्यादि क्षेत्रों में परिवर्तन की व्यापक क्रियाओं ने अभियोजन, नवीनीकरण, अन्तर्द्वन्द्व आदि प्रक्रियाओं को जन्म देने में सहयोग दिया है। सीमित आकर वाले एकाकी परिवार का विकास पारिवारिक संगठन के क्षेत्र में भारतीय समाज में होने वाला एक अत्यंत महत्वपूर्ण परिवर्तन है।

पारिवारिक संगठन में होने वाले परिवर्तन के उपरोक्त परिवेश में वर्तमान अध्ययन यह देखने का प्रयत्न करता है कि आधुनिक परिवेश में पारिवारिक संगठन की संयुक्तता में क्या परिवर्तन उत्पन्न हो रहे हैं? क्या संयुक्त परिवार की संयुक्तता के आधार बिन्दु नवीन परिवर्तनशील परिस्थितियों में अपने अस्तित्व को बनाए हुए हैं या संयुक्तता के नवीन प्रतिमानों को विकसित कर रहे हैं? क्या एकाकी परिवार व्यक्तिवादी जीवन के आदर्श प्रतिमानों का वास्तविक प्रतिनिधित्व करते हैं या परम्परागत संयुक्त परिवार की जीवन शैली का ही नवीनीकृत स्वरूप प्रस्तुत करते हैं? इन प्रश्नों का अन्वेषण वर्तमान अध्ययन के संयुक्त और एकाकी परिवारों के माध्यम से किया गया है। परम्परागत संयुक्त परिवार की संयुक्तता के जिन आयामों को केन्द्र बिन्दु मानकर वर्तमान अध्ययन का संगठन किया गया है वह इस प्रकार है–

1. परिवार के सदस्यों के सम्बन्ध, संख्या और पीढ़ियों की गहराई।
2. निवास की प्रकृति।
3. व्यवसाय।
4. पैतृक सम्पत्ति का स्वरूप।
5. सम्बन्धों की पारस्परिकता।

अध्ययन में सम्मिलित संयुक्त परिवार की संरचनात्मक विशेषताओं और संयुक्तता की प्रकृति का अध्ययन परिवार के आकार, सम्बन्धों की प्रकृति, सम्पत्ति का स्वरूप, सम्बन्धों की पारस्परिकता, संस्कारों की एकता इत्यादि दृष्टिकोणों से किया जा रहा है। अध्ययन का लक्ष्य यह ज्ञात करना है कि किस मात्रा तक संयुक्त परिवार अपनी परम्परागत संयुक्तता को बनाए हुए हैं और उनकी संरचनात्मक विशेषताओं में परिवर्तन की नवीन दिशा क्या है?

प्रस्तुत अध्ययन के 300 उत्तरदाताओं में से सभी 300 उत्तरदाता संयुक्त परिवार के सदस्य है वर्तमान अध्ययन में सम्मिलित अधिकांश संयुक्त परिवार ऐसे हैं जिसमें पीढ़ियों की संख्या दो या तीन है।

संयुक्त परिवार से सम्बन्धित उत्तरदाताओं के परिवार में सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध और पीढ़ियों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि 40.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं के संयुक्त परिवार में पति–पत्नी, बच्चे या अन्य ऐसे सम्बन्धी हैं जिससे पीढ़ियों की संख्या दो से अधिक

नहीं होती है। इन परिवारों को दो पीढ़ी वाला संयुक्त परिवार कहा जा सकता है। 43.33 संयुक्त परिवारों में पति–पत्नी, विवाहित पुत्र, उनके बच्चे या अन्य ऐसे सम्बन्धी निवास करते हैं जिससे पीढ़ी की संख्या तीन से अधिक न हो। इन परिवारों को तीन पीढ़ी वाला संयुक्त परिवार कहा जा सकता है। 16.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं के संयुक्त परिवार ऐसे हैं जिसमें पति–पत्नी, विवाहित पुत्र उनके बच्चे, अन्य ऐसे सम्बन्धी निवास करते हैं जिससे पीढ़ियों की संख्या चार से अधिक न हो। इन परिवारों को चार पीढ़ी वाला संयुक्त परिवार कहा गया है।

प्रस्तुत अध्ययन के संयुक्त परिवारों में पाँच या कम सदस्य वाले परिवार का प्रतिशत 21.66 पाया गया है, 6–10 सदस्य संख्या वाले परिवार 43.33 पाया गया है, 11–15 सदस्य संख्या वाले परिवारों का प्रतिशत 18.33 पाया गया तथा 16–20 सदस्य वाले परिवारों का प्रतिशत 16.66 पाया गया है। यह तथ्य इस बात की ओर संकेत करता है कि संयुक्त कहे जाने वाले परिवारों में भी सदस्यों की संख्या अपेक्षाकृत सीमित होती जा रही है।

66.66 उत्तरदाताओं के परिवार में सम्पत्ति की प्रकृति संयुक्त है और 33.33 उत्तरदाताओं के परिवार में पारिवारिक सम्पत्ति का विभाजन हो चुका है। विभाजित सम्पत्ति वाले सूचनादाता बहुधा वे हैं जिनकी पैतृक सम्पत्ति का तो बंटवारा हो चुका है परन्तु वर्तमान पीढ़ी में भाई या जीविकोपार्जन करने वाले पुत्र के साथ निवास करते हैं तथा परिवार की संयुक्त आय एक केन्द्रीय कोष या वयोवृद्ध व्यक्ति के द्वारा निर्देशित की जाती है। अध्ययनरत संयुक्त परिवार में एक सदस्य 15.00 प्रतिशत, दो सदस्य 31.66 प्रतिशत, तीन सदस्य 30.00 प्रतिशत तथा चार सदस्य 23.33 प्रतिशत कमाने वाले पाये गए हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में उत्तरदाताओं से पूछा गया कि वे अपने निकट रक्त सम्बन्धियों विशेषकर परिवार के सदस्यों के मध्य किस प्रकार का सम्बन्ध रखते हैं। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि निकट रक्त सम्बन्धियों के साथ अत्यधिक घनिष्ठ 13.33 प्रतिशत, घनिष्ठ 50.00 प्रतिशत, औपचारिक 25.00 प्रतिशत एवं कटुतापूर्ण सम्बन्ध 11.66 प्रतिशत परिवारों में पाया गया है। तथ्यों से स्पष्ट होता है कि यद्यपि संयुक्त परिवार के सम्बन्धियों के पारस्परिक सम्बन्ध में औपचारिकता और कटुता का प्रवेश हो रहा है तथापि अभी भी अधिकांश परिवारों में घनिष्ठ (50.00) और औपचारिक सम्बन्ध (25.00) सम्बन्ध बने हुए हैं।

वर्तमान अध्ययन में 47.00 प्रतिशत परिवारों में पत्नी से सम्बन्धों की घनिष्ठता माता की तुलना में अधिक पायी गई है, 20.00 प्रतिशत परिवारों में पत्नी की अपेक्षा माता से सम्बन्ध घनिष्ठ है तथा 33.00 प्रतिशत परिवारों में पत्नी और माता से समान रूप से सम्बन्धों की घनिष्ठता पाई गई है। अतः स्पष्ट होता है कि पत्नी से अधिक सम्बन्ध मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या अपेक्षाकृत अधिक है। उत्तरदाताओं का एक बड़ा तबका अर्थात् 63.00 प्रतिशत बहन की अपेक्षा पत्नी को अधिक महत्व देते हैं, मात्र 10.00 प्रतिशत बहन को पत्नी की अपेक्षा अधिक

महत्व देते हैं जबकि 27.00 प्रतिशत परिवारों में पत्नी और बहन को समान रूप से महत्व दिया जाता है। अतः सारणी से स्पष्ट होता है कि बहन की तुलना में पत्नी से घनिष्ठता को वरीयता देने वालों की संख्या अधिक है।

परम्परागत हिन्दू संस्कारों का पारिवारिक जीवन की संयुक्तता और सम्बन्धों की पारस्परिकता बनाए रखने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण येगदान रहा है। इन संस्कारों ने न केवल विशिष्ट अवसरों पर परिवार और निकट सम्बन्धियों को एक स्थान पर उपस्थित किया है बल्कि परिवार की एकात्मकता और सम्बन्धें की निकटता को एक विशिष्ट धार्मिक और सामाजिक आधार भी प्रदान किया है। संस्कारों में सहभागिता के संदर्भ में जो तथ्य उभरे हैं वे इस प्रकार से हैं–संयुक्त परिवारों में 12.50 प्रतिशत परिवारों में संस्कार के समय सदैव सहभागिता की जाती है, 62.50 प्रतिशत परिवारों में कभी–कभी संस्कार के समय उपस्थिति दर्ज कराई जाती है तथा 25.00 प्रतिशत संयुक्त परिवारों में संस्कारों के समय कभी नहीं उपस्थित हुआ जाता है।

अध्ययनरत परिवारों की जो महिलाएँ घर के बाहर कार्यों में संलग्न हैं उनके मासिक वेतन के सम्बन्ध में तथ्यों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 37.00 प्रतिशत की मासिक आय 2000–4000 रुपये के मध्य है, 57.00 प्रतिशत की मासिक आय रुपये 4000–8000 के मध्य है तथा 8000 रुपये से अधिक की मासिक आय वाले परिवारों की महिलाओं का प्रतिशत 6.00 है। सारणी से स्पष्ट होता है कि परिवार में घर के बाहर कार्य करने वाली ये महिलाएँ परिवार के आर्थिक बोझ को कम करने में अपनी प्रमुख भूमिका निभाती हैं। 36.00 प्रतिशत महिलाएँ विवाह के पहले से ही अपने कार्यों में संलग्न हैं, 57.00 प्रतिशत महिलाएँ विवाह के बाद जीविकोपार्जन हेतु कार्य करने लगीं तथा 7.00 प्रतिशत महिलाएँ विधवा होने पर जीविकोपार्जन हेतु कार्य करने लगीं। ज्यादातर (94.00 प्रतिशत) परिवारों के पुरुष महिलाओं के घर के बाहर कार्य करने से संतुष्ट हैं मात्र 6.00 प्रतिशत परिवार के पुरुष असंतुष्ट पाए गए हैं। 57.00 प्रतिशत परिवार की महिलाएँ अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने हेतु कार्य करती हैं, 29.00 प्रतिशत परिवार की महिलाएँ अपने पति की निम्न आय के कारण घर के बाहर जीविकोपार्जन हेतु कार्य करती हैं तथा 14.00 प्रतिशत परिवार की महिलाएँ अपने को आत्मनिर्भर बनाने हेतु कार्य करती हैं।

पर्दा प्रथा के सम्बन्ध में अध्ययन में पाया गया है कि 33.00 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जहाँ की महिलाएँ पर्दा नहीं करती हैं, 50.00 प्रतिशत परिवारों की महिलाएँ घर के बुजुर्ग सदस्यों से पर्दा करती हैं तथा 17.00 प्रतिशत महिलाएँ अनजान व्यक्तियों से पर्दा करती हैं।

प्रस्तुत अध्ययन के द्वारा यह जानने का प्रयत्न किया गया है कि परिवार के जीविकोपार्जन करने वाले प्रमुख पुरुष सदस्य परिवार की स्त्रियों की शिक्षा के प्रति क्या दृष्टिकोण रखते हैं? क्या वे उन्हें अशिक्षित रखकर परम्परागत भूमिकाओं और स्थितियों से

आबद्ध रखना चाहते हैं या उन्हें शिक्षा प्रदान करके परिवार और समाज में सम्मानजनक स्थान प्रदान करना चाहते हैं। स्त्री शिक्षा सम्बन्धी दृष्टिकोण जानने पर जो तथ्य सामने आये वह इस प्रकार से हैं–30.00 प्रतिशत परिवार स्त्रियों को स्कूल स्तर तक शिक्षा देने का विचार व्यक्त करते हैं, 50.00 प्रतिशत परिवार कॉलेज स्तर तक तथा 20.00 प्रतिशत अध्ययनरत परिवार विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा स्त्रियों को देने का पक्षधर हैं। अतः अधिकांश उत्तरदाता स्त्रियों को कॉलेज स्तर तक की शिक्षा देने का विचार रखते हैं।

अतः स्पष्ट है कि वास्तविक पारिवारिक परिस्थितियों और अभिवृत्यात्मक दोनों स्तर पर ही स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। शिक्षा और आर्थिक जीवन में प्रवेश ने स्त्रियों को न केवल आत्मनिर्भर बनाया है, बल्कि पारिवारिक जीवन में उन्हें पुरुषों की तुलना में निरन्तर समान स्थिति की ओर अग्रसर किया है। परिवार के जीविकोपार्जन करने वाले पुरुष सदस्यों का स्त्रियों की परम्परागत स्थिति के प्रति दृष्टिकोण निश्चित रूप से परिवर्तित हुआ है।

वर्तमान अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर कहा जा सकता है कि संयुक्त परिवारों के प्रतिमान निश्चित रूप से बदल रहे हैं, परन्तु यह परिवर्तन सामान्यतः सीमित प्रकृति के हैं। वर्तमान अध्ययन सीमित परिवर्तन की उपकल्पना को परिपुष्ट करता है। परिवर्तन का सम्बन्ध मुख्यतः परिवार के आकार से सम्बन्धित है तथा परिवार की प्रकार्यात्मक विशेषताएँ अपेक्षाकृत कम मात्रा में परिवर्तित हुई है। प्रस्तुत अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि संयुक्त परिवार यद्यपि अपनी परम्परागत संयुक्तता को बनाए रखने में असमर्थ रहे हैं तथापि पारिवारिक संयुक्तता की आधारभूत विशेषताएँ जैसे– सम्बन्धों की पारस्परिकता, संस्कारों की एकता, अभी भी निकट रक्त सम्बन्धियों को आपस में संयुक्त करने का महत्वपूर्ण आधार बनी हुई है। एकाकी परिवार का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि अध्ययन किए गए एकाकी परिवार निवास की दृष्टि से एकाकी हैं। व्यक्तिवादी जीवनशैली या परिवर्तनशील परिवेश की आवश्यकताएँ इनका उतना प्रमुख आधार नहीं है जितना कि रोजगार व्यवसाय के अवसरों की प्रधानता जिससे वशीभूत अनेक व्यक्ति यद्यपि रीवा नगर में आकर सीमित आकर के परिवार में जीवन व्यतीत कर रहे हैं परन्तु अपने मूल परिवार से अनेक प्रकार से सम्बन्ध बनाए हुए हैं। एकाकी परिवार में सम्पत्ति का अविभाजित स्वरूप तथा मूल परिवार के सदस्यों के साथ सम्बन्धों की पारस्परिकता और संस्कारों की एकता जीवन शैली के संयुक्त प्रतिमान का अभी भी प्रतिनिधित्व करती है।

संदर्भ–

- अल्तेकर –''दि पोजीसन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, हिन्दू विश्वविद्यालय, कल्चर प्रकाशन बनारस 1938
- अल्तेकर–''एजुकेशन इन एशिएन्ट इण्डिया बनारस 1934

- आपटे, यू.एम.–''सोशल एण्ड रिलीजन लाइफ इन द गृह सूत्र बाम्बे 1954
- आनंद मुल्कराज (राम मोहन राय)–''सती'' आर.वी.पब्लिशिंग कारपोरेशन दिल्ली 1980
- अंसारी एम0ए0–''नारी चेतना और अपराध, पंचशील प्रकाशन जयपुर 1990
- अम्बेडकर भीम राव–''दी राइज एण्ड फॉल ऑफ हिन्दू वोमेन भीम पत्रिका पब्लिकेशन पंजाब, 1970
- महिमा सुदर्शन–''नारी कर्तव्य एवं अधिकार वैटम धुमा पंचकुली दिल्ली 2007
- वेदांलकर हरिदत्त–''परिवार मीमांशा सरस्वती सदन, दिल्ली 1973
- व्होरा आशारानी–''भारतीय नारी दशा दिशा नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली 1983
- व्होरा आशारानी–''भारतीय नारी अस्मिता एवं अधिकार–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली 1986
- भट्ट कृष्णा–''मध्य हिमालय की महिलाओं का सामाजिक आर्थिक जीवन, ईस्टर्न बुक लिंकति दिल्ली, 1988
- भट्ट जय श्री एस–''समाज कल्याण शिक्षा दीक्षा संस्कृति आदित्य पब्लिसिंग बीना (म0प्र0) 1998
- बेग तारा अली–वोमेन इन एशिएन इंडिया दी पब्लिकेशन डिवीजन दिल्ली 1958
- डॉ. गुप्ता सुभाषचंद्र–''कार्यशील महिला एवं भारतीय समाज'' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली–2009

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा संचालित योजनाओं का जनजातीय शिक्षा पर प्रभावों का अध्ययन–विशेष शहडोल जिला

डॉ. अरूण कुमार सिंह

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि, **"मेरे विचार से जन–साधारण की शिक्षा की अवहेलना करना महान राष्ट्रीय पाप है, जो हमारे पतन के कारणों में से एक है। सम्पूर्ण राजनीति उस समय तक विफल होती रहेगी, जब तक भारत में जन–साधारण को एब बार फिर से भली–भाँति शिक्षित नहीं किया जायेगा।"** शिक्षा मानव के विकास की जननी है, शिक्षा मानव के विकास का अद्यतम साधन है। शिक्षा वह ज्ञान है जो बालक रूपी हीरे की क्रश्मल रूपी बुराइयों को दूर कर उनके आंतरिक गुणों को जगमगाता है, जिसके प्रकाश में बालक स्वयं अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है। किसी राष्ट्र का विकास उस राष्ट्र की जन–साधारण की शिक्षा पर निर्भर है। अर्थात् शिक्षा ही राष्ट्र के विकास का मुख्य आधार है। प्रारम्भिक शिक्षा की अवहेलना करने के कारण ही देश का पतन हुआ है। अतः प्रारम्भिक शिक्षा के उत्थान से ही हमारे देश का कल्याण हो सकता है।

समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति वर्ग का शैक्षिक विकास होना आवश्यक हैं इस वर्ग के छात्रों की रुचि, योग्यता, आकांक्षा व शैक्षिक उपलब्धि स्तर के विकास हेतु शासन द्वारा आवश्यक प्रोत्साहन योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। अनुसूचित जनजाति वर्ग जब तक शिक्षा के प्रति जागरुकता नहीं आती है, वे आरक्षण की वैशाखी पर ही निर्भर रहेंगे। **महात्मा गाँधी** के अनुसार **"किसी राष्ट्र के पुनरुत्थान हेतु शिक्षा का परिशोधन एवं पुनः संशोधन शिक्षण पद्धति का एक महत्वपूर्ण घटक है।"** इस हेतु 6–14 वर्ष के सभी बालक–बालिकाओं को निःशुल्क सुविधा उपलब्ध कराये जाने का संविधान में संकल्प लिया गया, और इसके विकास हेतु पंचवर्षीय योजनाओं में जोड़ा गया। शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर सुझावों हेतु **डॉ. डी.एस. कोठारी** की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया और इस आयोग की अनुशंसा पर शासन के द्वारा अधिकाधिक शासकीय शैक्षणिक संस्थाएँ खोली गई।

देश की स्वतंत्रता के बाद जनजातीय के बहुमुखी विकास हेतु विभिन्न योजनाओं के क्रियान्वयन द्वारा निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं। ऐसी योजनाएँ केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा तैयार कर संचालित की जाती हैं। केन्द्र सरकार की योजनाएँ जहाँ समूचे राष्ट्र के जनजातियों के लिए तैयार की जाती है, वहीं राज्य सरकार द्वारा अपने राज्य में निवास करने वाली जनजातियों के विकास के लिए संचालित होती हैं। केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा संचालित प्रमुख योजनाओं में शिक्षा, रोजगार एवं राहत की योजनायें प्रमुख हैं। जनजातियों में शिक्षा

विकास की योजनाओं के अंतर्गत आदर्श उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, कन्या शिक्षा परिसर, उत्कृष्ट शिक्षा संस्थान, प्रणीण्य छात्रवृत्ति, कन्या साक्षरता प्रोत्साहन, परीक्षा शुल्क की प्रतिपूर्ति, बुक बैंक, गणवेश प्रदाय, मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाएँ, मान्यता प्राप्त अशासकीय संस्थाओं को अनुदान, भारत सरकार द्वारा स्वैच्छिक संस्थाओं को अनुदान, आदिवासी संस्कृति का परीक्षण और विकास आदि की योजनायें हैं।

उक्त योजनाओं के संचालन में आदिवासियों के शिक्षा के विकास के लिए प्रति वर्ष भारी–भरकम राशि व्यय की जा रही है। उक्त योजनाओं के संचालन एवं आर्थिक सहायता के बावजूद अभी तक जनजातियों में साक्षरता दर अत्यधिक चिंतनीय है। कुल जनजातीय जनसंख्या में मात्र 40.27 प्रतिशत जनजातीय साक्षर हैं। मध्यप्रदेश में निवास करने वाली जनजातियों में से कुछ जनजातियाँ यथा बैगा, खैरवार, भिल्लाला जैसी जनजातियाँ हैं, जिनमें साक्षरता की दर सबसे कम है, जबकि इनके शिक्षा के विकास के लिए प्रथक से योजनाएँ संचालित हैं। निष्कर्ष रूप में योजनाओं के माध्यम से जनजातियों के शिक्षा के लिए भारी–भरकम राशि व्यय किये जाने के बावजूद वांछित लक्ष्य तक नहीं पहुँचा जा सका है।

अनुसूचित जाति एवं जनजाति जीवन के अध्ययन क्रम में **शहडोल जिला** अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसके अंचल में अनेक युगों से आदिवासियों की सांस्कृतिक परम्परायें, उनके जीवन की असाधारण धारायें सुरक्षित हैं। जनजातियों की अनेक जातियाँ, उनके रीति–रिवाज एवं उनमें प्रचलित लोक–विश्वास सहज ही शोध की जिज्ञासा उत्पन्न करते हैं। प्रकृति ने भारत की दो प्रमुख नदियों के उद्गम स्थान होने का गौरव भी इसी जिले को प्रदान किया है। अमरकण्टक पर्वत से सोन और नर्मदा तथा जुहिला जैसी नदियों ने अपने जीवन की प्रथम साँस इसी जिले में पाई है। वन, पर्वत, नदियों ने सदैव से ही इन जनजातियों को आश्रय दिया है और शताब्दियों से इन जनजातियों के सांस्कृतिक जीवन, सुख–दुःख तथा संस्कृति की प्रतिध्वनि यहाँ पर गूँजी है।

शहडोल जिला प्रायद्वीपीय भारत के उत्तरी–पूर्वी भाग में विन्ध्य एवं सतपुड़ा पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य स्थित पर्वतीय एवं पठारी प्रदेश है। यह उत्तरी मध्यप्रदेश के उच्च भूमि भाग, पूर्व के बहुत ही छोटे क्षेत्र से मिलकर इसका आकार अवस्थित हुआ है। शहडोल जिला $22^0 38'$ से $24^0 18'$ उत्तरी अक्षांश तथा $80^0 31' \ 30''$ से $82^0 11'$ पूर्व देशांस के मध्य स्थित है। इसका क्षेत्रफल 14080 वर्ग किमी. है। यह उत्तर और उत्तर–पूर्व में क्रमशः सतना और सीधी जिलों, पूर्व में सरगुजा, पश्चिम में जबलपुर, दक्षिण और दक्षिण पश्चिम में मण्डला तथा दक्षिण पूर्व में बिलासपुर जिलों से घिरा हुआ है। $23^0 30'$ उत्तरी अक्षांस कर्क रेखा इस जिले को उत्तर एवं दक्षिण लगभग दो समान भागों में विभक्त करती है। 80^0 पूर्वी देशान्तर रेखा जो भारत के मध्य

से गुजरती है, इस जिले के पूर्वी भाग से होकर जाती है। अतः शहडोल जिला भारत के लगभग मध्य में स्थित है।

शहडोल जिले में **प्राथमिक शालाओं** की संख्या 1270, **मध्यमिक शालायें** 460, **हाई स्कूल** 56, **उच्चतम विद्यालय** 70 तथा **आश्रम स्कूलों** की संख्या 18 है। इन विद्यालयों में प्राथमिक स्तर पर 120266 बालक, 92160 बालिकाएँ, माध्यमिक स्तर पर 59244 बालक, 50693 बालिकाएँ अध्ययनरत हैं। इसी प्रकार प्राथमिक स्तर पर अनुसूचित जाति के बालकों की संख्या 50683 है तथा अनुसूचित जनजाति वर्ग के बालकों की संख्या संख्या 54391 है। प्रस्तुत अध्ययन मध्यप्रदेश के शहडोल जिले में आदिवासी विकास योजनाओं का जनजातीय शिक्षा के विकास में प्रभाव का मूल्यांकन किया गया है।

शोध का उद्देश्य–

किसी भी शैक्षिक शोध का उद्देश्य ज्ञान में वृद्धि करना है। मनुष्य द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य का कुछ न कुछ उद्देश्य होता है, बिना उद्देश्य निर्धारित किये कोई कार्य प्रारम्भ कर दिया जाय लेकिन सार्थक परिणाम की प्राप्ति करना असम्भव होता है। शैक्षिक अनुसंधान में उद्देश्य विहीन कार्य बिना दिशा सूचक यंत्र के घनघोर जंगल में यात्रा करने के समान है। प्रस्तुत शोध कार्य आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा संचालित योजनाओं का जनजातीय शिक्षा पर प्रभावों का अध्ययन करना रहा है। प्रस्तुत शोध के निम्नलिखित उद्देश्य थे–

- जनजातियों की सामाजिक व धार्मिक मान्यताओं, परम्पराओं, रूढ़ियों का पता लगाकर शिक्षा के प्रति बालक–बालिकाओं को प्रोत्साहित करना।
- शोध क्षेत्र के ग्रामीण अंचलों में निवास कर रहे जनजातीय वर्ग के बालक–बालिकाओं की प्रारम्भिक शिक्षा के विकास में शासन द्वारा चलायी जा रही प्रोत्साहन योजनाओं का क्या प्रभाव पड़ रहा है तथा संचालित योजनाओं की यथार्थ स्थिति क्या है।
- जनजातीय वर्ग के बालक–बालिकाओं की प्रारम्भिक शिक्षा में सहभागिता की स्थिति का पता लगाना।
- जनजातीय वर्ग के छात्रों की शाला त्यागी प्रवृत्ति की अधिकता के कौन से कारक हैं, तथा उनका निदान कैसे करना सम्भव है।
- जनजातीय वर्ग की सामाजिक–आर्थिक समस्याओं का पता लगाना।
- शिक्षा के विकास हेतु शासन द्वारा संचालित प्रोत्साहन योजनाओं का जनजातीय वर्ग के बालक–बालिकाओं को मिलने वाले लाभ का मूल्यांकन करना।
- जनजातीय वर्ग के बालक–बालिकाओं की शिक्षा के विकास की अवरोधक सामाजिक परम्पराओं का अध्ययन करना।

पूर्ववर्ती शोध कार्य–

प्रारम्भ से ही मध्यप्रदेश की जनजातियों का अध्ययन उपेक्षित रहा है। तथापि **बैरियर एल्विन** ने जो धर्म प्रचारक थे, मध्यप्रदेश में जाति–विवरणात्मक शोध का पथ–प्रदर्शन किया। उन्होंने निबन्धों की एक श्रृंखला में बैगा, अगरिया, मारिया और मुरिया पर निबन्ध लिखे तथा मध्यप्रदेश की जनजातीय संस्कृति की समृद्धि एवं परम्परा पर प्रकाश डाला है। **ग्रिग्सन (1946)** ने गोंड़ों के बीच रहकर उनके सम्पूर्ण जीवन का अध्ययन किया तथा उनके विश्वास एवं सामाजिक–आर्थिक व्यवस्था का सांगोपांग विवरण प्रस्तुत किया है।

मध्यप्रदेश एक आदिवासी विपुल जनसंख्या वाला प्रदेश है। जनजातियों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के उद्‌देश्य से उनके आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक पक्षों का अध्ययन किया गया है। प्रमुख अध्येताओं में **शिव कुमार तिवारी,** रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर, **डॉ. एस.के. शर्मा,** एच.एस. गौर विश्वविद्यालय सागर, **डॉ. विजय कुमार तिवा**री बिलासपुर, **डॉ. सी.पी. तिवारी,** अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा एवं **सतीश कुमार त्रिपाठी,** अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त प्रशासनिक अधिकारियों एवं समाजसेवियों ने अपने अध्ययनों द्वारा जनजातीय शिक्षा के साहित्य में अभिवृद्धि की है। किन्तु उपर्युक्त किसी भी अध्येता द्वारा आदिवासी विकास योजनाओं का जनजातीय शिक्षा विकास में प्रभाव का मूल्यांकन जैसा कोई अध्ययन प्रस्तुत नहीं किया गया है।

अध्ययन विधि–

शोध कार्य शहडोल जिले के आदिवासी विकास योजनाओं का जनजातीय शिक्षा विकास पर प्रभाव के मूल्यांकन से सम्बन्धित है। शोध कार्य की पूर्णता विभिन्न प्रकार के आँकड़ों की उपलब्धता पर निभर है। ऐसे आँकड़े प्रकृति में दो प्रकार के होते हैं– 1. प्राथमिक आँकड़े, 2. द्वितीयक आँकड़े।

1. प्राथमिक आँकड़े – प्राथमिक आँकड़े क्षेत्रीय सर्वेक्षण, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा एकत्रित किये जायेंगे। जिले के आकार को देखते हुए समग्र क्षेत्र का सर्वेक्षण कार्य संभव न होने के कारण दैव निदर्शन विधि द्वारा प्रति चयन विधि के उपयोग द्वारा आँकड़ों को एकत्रित किया गया है।

2. द्वितीयक आँकड़े–द्वितीयक आँकड़ों का एकत्रीकरण विभिन्न सरकारी, अर्द्धसरकारी एवं स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा प्राप्त किये जायेंगे। आँकड़ों को उपलब्ध कर विभिन्न सांख्यकी विधियों का उपयोग करते हुए उनका सारणीयन तथा विश्लेषण अध्ययन हेतु प्रयुक्त किया गया है। अध्ययन में भौगोलिक तकनीकी, मॉडलों विशेषतः जनजातियों की योजनाओं एवं शिक्षा पर प्रभाव के सम्बन्धों को प्रदर्शित करने के लिए सह–सम्बन्ध मॉडलों को सम्मिलित

किया जायेगा। अध्ययन को तथ्यपरक एवं व्यापक बनाने के लिए रेखाचित्रों, मानचित्रों एवं छायाचित्रों का भी सहारा लिया गया है।

संदर्भ–

- अमीर हसन (1979)–बुक्सास आफ तराई, बी.आर. पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली।
- अग्रवाल पी.सी. (1968)–ह्यूमन ज्योग्राफी आफ बस्तर डिस्ट्रिक्ट, गर्ग ब्रदर्स, इलाहाबाद।
- अयप्पन, ए. (1944)–इरावाज एण्ड कल्चर चेंज, गवर्नमेंट म्यूजियम, मद्रास।
- बागची, दीपिका (1970)–अलीराजपुर–ए स्टडी इन अर्बन ट्राइबल रिलेशनशिप, डीकन, जियोग्राफर।
- बहादुर के.पी. (1981)–कास्ट एण्ड कल्चर आफ इण्डिया, एसेस पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
- बालारत्नम् एल.के. (1946)–सर्पेन्ट वर्शिप इन केरला, मैन इन इण्डिया, खण्ड 26।
- बार्नेट एच.जी (1953)–इनरेवेशन : द बेसिस आफ कल्चरल चेंज, न्यूयार्क।
- बसु, कलयनाथ एवं बसु मिनेन्द्र नाथ (1975)–ए स्टडी आन मटेरियल कल्चर, द बर्ल्ड प्रेस प्रा. लि. कलकत्ता।
- बसु. एम.एन. (1957)–मटेरियल एक्जिस्टेन्स आफ मैन, कलकत्ता यूनिवर्सिटी प्रेस, कलकत्ता।
- तिवारी शिव कुमार (1984) मध्यप्रदेश के आदिवासी, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
- तिवारी चंद्रमणि प्रसाद (2003) जनजातीय पर्यावरण, आशा प्रकाशन, आगरा
- पुरे जी.एस. (1963) द शिडयूल ट्राइव पापुलर प्रकाशन मुम्बई
- विद्यार्थी लालता प्रसाद (1975) भारतीय आदिवासी, नगरी प्राचारणी, वाराणसी

खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

भारतीय संस्कृति में महिला सशक्तिकरण के विविध उपकरण

डॉ. पुष्पा

व्याख्याता (संस्कृत)
गौरी देवी राज. महिला महाविद्यालय, अलवर (राज0)
Email : dkmeena999@yahoo.com

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमो नमः।।

उपरोक्त श्लोक में नारी को शक्ति रूप में चित्रित कर समस्त प्राणी जगत का आधार बताकर वंदन किया है। भारत एक पुरूष प्रधान समाज है और 'स्त्री' को पुरूष की सहचरी रूप में भी दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती को जगत का मूल स्वीकारते हुए शक्ति का प्रतीक रूप में पूजन किया जाता है। भारतीय संस्कृति के आधारक वेद माने जाते हैं। भारतीय संस्कृति में 'वेद' बहुत प्राचीन है। वेदकालीन समाज की यदि बात करे तो हम पाते हैं कि वेदकालीन नारी स्थिति सुदृढ़ व सम्मानजनक थी। स्त्रियों में बाल विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा जैसी कुप्रथा नहीं थी। स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार की कला व युद्ध कौशल की शिक्षा ग्रहण करने की अधिकारिणी होती थी। समाज में दोनों का ही स्थान समान रूप से महत्वपूर्ण था। पितृसत्तात्मक समाज होने से पुत्र को वरीयता दी गई थी और यत्र–तत्र पुत्र कामना का वर्णन भी मिलता है। अविवाहित कुँवारी कन्या का अपने पिता की सम्पत्ति पर अधिकार होता था। अथर्वेदकालीन नारी वैदुष्य एवं शौर्य की प्रतिमूर्ति थी। उसे कुलपा प्रतारणी शिवा, सुमंगली, उद्विदन्ती, संजयंती जैसे विशेषणों से विभूषित किया गया। अर्थवेद में वर्णित अम्भृणी, वाक् ऊषा, सरस्वती व इन्द्राणी आदि देवियाँ, विदुषी व वीर नारियों का प्रतीक थी। तत्कालीन समाज और संस्कृति की स्त्रियों ने अपनी विद्वत्तता व शौर्य के बल पर समाज में सम्मानपूर्ण स्थान पाया। मुसलमान आक्रमण होने पर भारत में उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों को भोग विलास की सामग्री रूप में माना गया। बहु–पत्नि विवाह का भी प्रचलन बढ़ने लगा।

रामायण काल में हमें यह ज्ञात है कि सीता की अनुपस्थिति में श्रीराम ने याज्ञिक अवसर पर सीता के स्थान पर उनकी सुवर्ण प्रतिमा को स्थापित करवाया। इससे धार्मिक क्रियाओं में स्त्रियों की समान सहभागिता का दिग्दर्शन होता है। उसके उपरांत महाभारतकाल में भार्या को मनुष्य का आधा भाग स्वीकार किया है, भार्या श्रेष्ठ सखी, धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष का मूल है यथा –

अर्द्ध भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतमः सखा।
भार्या मूलं त्रिवर्गस्य भार्या मूलं तरिष्यतः।।

(महाभारत आदिपर्व 74/41)

गृहस्थ जीवन की मूलमन्त्र नारी है, नारी ग्रह प्रशासिका है :–

यथा सिन्धुर्नदोनी साम्राज्य सुषुवेवृषा।
एवा त्वां साम्राज्येधि पत्युरस्ते परेत्य।।

(अथर्ववेद 14–1–43)

इसी प्रकार 'मनु' ने नारी तिरस्कार करने वाले समाज की समस्त क्रियाओं को निष्फल बताते हुए उद्घोष किया है :–

''यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।''

(मनुस्मृति 3/6)

व्यास स्मृति में स्त्री को सर्वदा पूर्ण बताया है वह आधे शरीर से पति और आधे शरीर से पत्नी होती है। (व्यास स्मृति 2/13)।

कहने का अभिप्राय यह है कि पुरूष और स्त्री एक दूसरे के पूरक है। दोनों में से एक के भी अभाव में सृष्टि की कल्पना नहीं की जा सकती। हमारे मान्नीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर कहा था कि ''देश की तरक्की के लिए पहले हमें भारत की महिलाओं को सशक्त बनाना है।'' सशक्तिकरण एक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से जागरूकता, कार्यशीलता, अपने विषय में निर्णय लेने में समर्थता व स्वतंत्रता, अपने अधिकारों के लिए खड़े होने का साहस, आत्मविश्वास, जागरूकता, अपने अस्तित्व की पहचान इत्यादि सम्मिलित है। दूसरों शब्दों में सशक्तिकरण एक अनुभूति है जिसके फलस्वरूप व्यक्ति को मानसिक ऊर्जा मिलती है ओर मानव अपने लक्ष्यों के प्राप्त करने के लिए सफल होता है। जब हम महिला सशक्तिकरण की बात करते हैं तो हमारा उद्देश्य महिलाओं और पुरूषों में प्रतिस्पर्धा करना नहीं है अपितु दोनों को समता के धरातल पर अवतिष्ठित करना है। महिला और पुरूष सृष्टि की दो महत्वपूर्ण रचना है परन्तु भारतीय समाज में पुरूष की अपेक्षा स्त्री को कहीं न कहीं हीन दृष्टि से देखा व आँका जाता था। अतः समय के परिवर्तन से 'महिला सशक्तिकरण' का विचार जोर–शोर से चहुँ ओर विस्तृत होने लगा। परिणामस्वरूप महिलाओं की स्थिति अपेक्षाकृत बलवती हुई। महिलाओं की स्थिति को मजबूती प्रदान करने के लिए कुछ उपकरण अथवा साधन महत्वपूर्ण सिद्ध हुए जिसमें से कुछ उपकरण निम्न रूपेण हैः यथा –

1. **<u>शिक्षा</u>** – वेदों के छः अंगों में से एक है – 'शिक्षा' वेद के छः अंग बताए हैं वह है – शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, ज्योतिष और छन्द। शिक्षा को वेद रूपी पुरूष के 'नेत्र' बताया गया है।

शिक्षा शब्द शास् धातु से निष्पन्न शब्द है जिसका अभिप्राय है शासन करना, बताना अथवा व्याख्या करना। शिक्षा वह माध्यम है जो बड़े–बड़े परिवर्तन करने में समर्थ है। भारत के इतिहास पर दृष्टि डाले तो हम पाते हैं कि जो भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सकारात्मक परिवर्तन आये हैं उसमें शिक्षा की भूमिका अविस्मरणीय है। इसी प्रकार महिला सशक्तिकरण में भी शिक्षा की भूमिका अतीव उपयोगी है। यह शिक्षा औषधी तुल्य संजीवनी की भाँति महिला सशक्तिकरण की दिशा में कार्य करती है। शिक्षा वह अधिकार है जो जीवन की दिशा व दशा में, 'मील का पत्थर' बनकर, बिना हिंसा के ही सकारात्मक परिवर्तन लाने में समर्थ है क्योंकि राष्ट्रीय विकास की धारा में भागीदारी करने के लिए व्यक्ति का शिक्षित और जागरूक होना परम आवश्यक है। हमारे देश के संविधान की धारा 45 में प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के उद्देश्य से निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा को राज्य का एक नीति निदेशक सिद्धांत घोषित किया गया है जिसमे बताया है कि देश में संविधान लागू होने के समय से 10 वर्ष के अन्दर 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है।

शिक्षा प्राप्ति का उद्देश्य महिलाओं को स्वावलंबी बनाना ही नहीं नौकरी पेशा बनाना ही नहीं, ऊँचा पद हासिल करना ही नहीं अपितु शिक्षा द्वारा समाज की विकृत मानसिकता का परिमार्जन व शुद्धिकरण करना तथा स्त्री को सम्मानजनक पद पर प्रतिष्ठित करना है। शिक्षा द्वारा रोजगार के नये अवसर तलाशने के अतिरिक्त निम्न उद्देश्य भी है :–

(प) महिलाओं में आत्म सम्मान व आत्म विश्वास की भावना उत्पन्न करना।

(पप) महिलाओं में निर्णय लेने की योग्यता का विकास करना।

(पपप) महिलाओं में आलोचनात्मक चिंतन का विकास करना।

(पअ) महिलाओं के कर्तव्यों के साथ–साथ अधिकारों की भी पूर्व जानकारी देना।

(अ) अन्याय के खिलाफ खड़े होने की ताकत का विकास।

(अप) सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्रों में सहभागिता को बढ़ावा

लोगों में जनचेतना व सरकारी प्रयासों द्वारा आज हम देखते हैं कि महिलाओं की साक्षरतादर में वृद्धि आई है। शहरों में तो अपेक्षाकृत महिला साक्षरता की दर अधिक थी परन्तु वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गाँवों में भी महिला साक्षरता दर में वृद्धि हुई है। महिला शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए सभी देशों में एवं सभी स्तरों पर प्रयास किये जा रहे हैं जिसका सकारात्मक परिणाम दृष्टिगोचर हो रहा है क्योंकि शिक्षा और विकास एक ही सिक्के दो पहलू है इन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। साक्षरता किसी भी देश के सामाजिक व आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण पहलू होता है। अतः महिला शिक्षा के अधिकाधिक अवसरों का

सृजन तथा उन अवसरों द्वारा लाभान्वित करना ही महिला सशक्तिकरण हेतु अनिवार्य कदम है।

(2) **विविध सरकारी योजनाएँ** – महिलाओं के समुचित विकास के लिए सरकारी योजनाओं, महिलाओं के अधिकारों के माध्यम से लगातार महिलाओं की स्थिति में सुधार हो रहा है तभी तो 21वीं शताब्दी की महिला शताब्दी के नाम से पुकारा जाता है। महिलाओं के सर्वांगीण विकास चाहे वह आर्थिक, राजनैतिक या सामाजिक विकास हो सभी के लिए महिला आगे आकर अपने अधिकारों के प्रति अपनी आवाज को बुलंद कर रही है। भारत में बालविवाह, सती प्रथा, विधवा पुनर्विवाह का अभाव, दहेज प्रथा, तलाक, बेमेल विवाह, बहु विवाह, अन्तर्जातीय विवाह का अभाव, पर्दा प्रथा, वैश्यावृत्ति, शैक्षणिक, आर्थिक समस्याएँ इत्यादि भारतीय समाज में व्याप्त कुप्रथाएँ इन सभी को नकार कर खारिज़ कर दिया है परन्तु आज भी समाज में 'पुत्रमोह' व्याप्त है पुत्री की तुलना में पुत्र लालसा इस ओर स्पष्ट संकेत है कि अभी भी समाज में पुरूषों के बराबर स्त्री को स्थान नहीं प्राप्त हुआ है। आज हम भले ही महिला शिक्षा की ओर जाग्रत हुए हैं परन्तु आज भी महिला भोग की वस्तुरूप में ही समझी जाती है इसका ज्वलंत दृष्टांत रामरहीम जिसने साध्वी को भी नहीं बक्शा, निर्भया काण्ड मानवता को शर्मसार करने वाली असंख्य घटनाएँ प्रतिदिन हो रही है। ऐसे घिनौने अपराध हमारी मानवता पर प्रश्न चिन्ह लगाते हैं क्या हम सीता, झाँसी की रानी, अहिल्या, मीरा, वैदिक स्त्रियाँ घोषा, अपाला, मैत्रेयी, देवयानी इत्यादि हमारी पूज्यनीय देवियाँ दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी, काली, गायत्री इत्यादि को पूरी तरह विस्मृत कर बैठे हैं क्या ?

किसी भी समाज के विकास सीधा सम्बन्ध उस समाज की महिलाओं के विकास से जुड़ा होता है। महिलाओं के विकास के बिना व्यक्ति परिवार और समाज की कल्पना नहीं कर सकते। एक महिला दो परिवारों के बीच कड़ी का कार्य कर दो परिवारों को शिक्षित कर संस्कारों को आधान करने के दायित्व को पूरी जिम्मेदारी से वहन करती है। इसी उद्देश्य से सरकार ने भी महिलाओं के विकास व आत्मचेतना की जाग्रति हेतु महिलाओं के लिए निम्न योजनाएँ प्रारंभ की।

(क) भामाशाह योजना –

राजस्थान सरकार ने महिला सशक्तिकरण और सरकारी योजनाओं का लाभ सीधे और पारदर्शी तरीके से पहुँचाने के लिए 15 अगस्त, 2014 से भामाशाह योजना की शुरूआत की। जिसमें परिवार की महिला को मुखिया बनाकर परिवार के बैंक खाते उनके नाम से खाले गये जिसमें सरकारी नकदी लाभ जैसे – पेंशन, नरेगा, छात्रवृत्ति, जननी सुरक्षा आदि सरकार उनके खाते में पहुँचा रही है। राजस्थान भारत का पहला राज्य है जहाँ महिला सशक्तिकरण की दिशा में महिलाओं को आर्थिक रूप से सुदृढ़ बनाया है। इस

योजना में लाभार्थी की रूपे कार्ड की सुविधा दी जाती है जिसमें वह नजदीकी बी.सी. केन्द्र में प्रयोग कर आसासी से पैसे निकाल सकती है। राज्य सरकार ने पूरे राजस्थान में 25,000 बी. सी. स्थापित किये हैं। 15,000 और नये बी.सी. स्थापित करने है। भामाशाह योजना से सरकारी योजनाओं का पूरा नकद लाभ बिना समय नष्ट किये, बिना परेशानी के, सीधे महिलाओं के बैंक खातों में हस्तान्तरित किया जाता है। इसके अतिरिक्त गैर नकद लाभ जैसे – राशन वितरण भी अब बायोमैट्रिक पहचान द्वारा पात्र व्यक्तियों को दिया जा रहा है। इस भामाशाह योजना से भविष्य में आने वाली योजनाओं को भी जोड़ा जायेगा जिससे की आम लोग विशेषकर महिलाएँ अधिकाधिक लाभान्वित हो सके।

इसके अतिरिक्त नामांकित सभी बीपीएल, स्टेट बीपीएल, अन्त्योदय व अन्नपूर्णा में चयनित परिवारों की महिला मुखिया के बैंक खाते में सहायता राशि के रूप में एक बार 2000/– एकमुश्त जमा करवाये जाते हैं। भामाशाह योजना महिला सशक्तिकरण का सशक्त उपकरण सिद्ध हो रहा है।

(ख) **बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना** – (ठठठच) महिला एवं बाल एवं विकास मंत्रालय, स्वास्थ्य मंत्रालय और परिवार कल्याण मन्त्रालय एवं मानव संसाधन विकास की संयुक्त पहल के रूप में बालिकाओं की स्थिति को सुधारने व सशक्त करने के लिए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 22 जनवरी, 2015 को निम्न लिंगानुपात वाले 100 जिलों में प्रारंभ किया गया है। बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ न केवल कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए अपितु बेटियों की रक्षा के लिए शुरू किया गया है। वित्त मंत्री अरूण जेटली ने अपने बजट में 100 करोड़ की शुरूआती राशि की घोषणा इस योजना के लिए की है। बालिकाओं के अस्तित्व, संरक्षण, शिक्षा में बढ़ावा देने के लिए इस योजना का प्रारंभ किया गया। जिससे गिरते लिंगानुपात के मुद्दे के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़े और लोग बालक की ही भाँति बालिका को भी शिक्षा ग्रहण करने के लिए स्कूल भेजे। शिक्षित होकर वह अपना और परिवार का, समाज का कल्याण कर सकती है।

(ग) **सुकन्या समृद्धि खाता योजना**– यह एक बैंक खाता है जो 10 वर्ष से कम उम्र की बेटियों के लिए शुरू किया गया है। यह अकाउंट/ खाता बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी का कार्य कर बेटियों के भविष्य को सुरक्षित करता है।

(घ) **राजीव गाँधी योजना (सबल)** –केन्द्र सरकार द्वारा 1 अप्रैल, 2011 से इस कार्यक्रम के अन्तर्गत भारत के 200 जिलों से चयनित 11–18 आयु वर्ग की किशोरियों की देखभाल 'समेकित बाल विकास परियोजना' के अन्तर्गत की जाती है। जिसमें 11–15 वर्ष तक की बालिकाओं को पका हुआ खाना दिया जाता है और 15–18 वर्ष की बालिकाओं को आयरन की गोलियाँ सहित अन्य दवाइयाँ भी दी जाती है।

(ड़) **इंदिरा गाँधी मातृत्व सहयोग योजना** – यह मातृत्व लाभ कार्यक्रम 28 अक्टूबर, 2010 को शुरू किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य 19 वर्ष या उससे अधिक उम्र की गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं को पहले ही बच्चों के जन्म तक वित्तीय सहायता उपलब्ध करवाना। सरकार द्वारा नवजात शिशु और स्तनपान कराने वाली माताओं को बेहतर देखभाल के लिए 6000/– की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

(च) **कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालय योजना** – इस योजना का प्रारंभ 2004 में किया गया। जिसमें बालिकाओं की शिक्षा के लिए 75 प्रतिशत और 25 प्रतिशत केन्द्र व राज्य सरकार खर्च करेगी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य 75 प्रतिशत अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक समुदाय तथा 25 प्रतिशत गरीबी रेखा से निम्न परिवार की बालिकाओं को शिक्षा के लिए सुलभ मार्ग उपलब्ध करवाना है।

(छ) **प्रधानमंत्री उज्जवला योजना** – इस योजना का शुभारंभ प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा 1 मई, 2016 को किया जिसमें गरीब महिलाओं को मुफ्त एलपीजी गैस कनेक्शन देना है। जिसके माध्यम से पर्यावरण को स्वास्थ्यवर्धक बनाने में महिलाओं की भूमिका अहम होगी क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में खाना बनाने के लिए जीवाश्म ईंधन की जगह एलपीजी के प्रयोग को बढ़ाकर महिलाओं के लिए स्वाधार धर योजना – महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के माध्यम से योजना 2001–02 को शुरू हुई जिसमें वैश्यावृति से युक्त महिलाएँ, रिहा कैदी महिलाएँ, विधवाएँ, मानसिक रूप से विकलांग, बेसहारा, तस्करी से पीडित महिलाओं के पुनर्वास की व्यवस्था कर नये तरीके से जीवन की शुरूआत करने के लिए शारीरिक व मानसिक संबल प्रदान किया जाता है जिससे वे आत्मनिर्भर बन कर देश के विकास में सहयोग करने में समर्थ हो सके। महिलाओं के लिए प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रम (STEP) 1986–87 में केन्द्रीय योजना रूप में महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने प्रारम्भ किया। महिलाओं में कौशल की विकसित कर आत्मनिर्भर बनाने की भावना से प्रेरित योजना महिलाओं की स्व रोजगार या उद्यमी बनाने का हुनर सिखाती है। जिसमें महिला विभिन्न प्रकार के लघु उद्योगों को सीखकर स्वयं का उद्योग स्थापित करने की दिशा में प्रयास करे। इसी प्रकार सरकार विधवाओं के खाते में प्रत्येक महीना 3000/– रूपये डालकर उनके गुजर बसर में मदद करती है।

(3) **महिलाओं के अधिकार** – भारत में महिला मानवाधिकारी को मूल अधिकारों के साथ जोड़ा गया। भारत की महिलाओं को अनेकानेक कानूनी व्यवस्थाओं द्वारा उनके अधिकारों की सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान करने का प्रावधान है। महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने उन्हें शोषण और अत्याचार से मुक्त कराने व संवैधानिक अधिकारों की क्रियान्वित को सुनिश्चित करने के लिए 1990 में संसद द्वारा महिला आयोग अधिनियम पारित किया गया। भारत में

1992 में राष्ट्रीय महिला अधिकार आयोग का गठन किया। 1979 में एक अनिवार्य अन्तर्राष्ट्रीय समझौता आमसभा द्वारा अपनाया गया जिसे ''महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन उद्घोषणा'' नाम से जाना जाता है। इसके अन्दर प्रस्तावना व 30 धाराएँ है। यह समझौता विश्वव्यापी मानव अधिकार दस्तावेजों में सबसे आधुनिक है। विश्व में 1990 से 2000 का दशक महिला दशक के रूप में मनाया जाता है। इसी दिशा में प्रथम विश्व महिला सम्मेलन 1975 में मैक्सिको में हुआ। महिला सबलीकरण हेतु सम्पूर्ण विश्व में 8 मार्च 'अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस' के रूप में प्रति वर्ष मनाया जाता है। महिलाओं की स्थिति के सुदृढीकरण के लिए भारतीय संविधान में महिलाओं के हितों की सुरक्षा हेतु कुछ अधिकारों का प्रावधान किया है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39, 42, 51, 325, 326, 16, 21, 23 महिलाओं की सुरक्षा व हितों से सुरक्षित है। इसी प्रकार महिलाओं के लिए कुछ अधिनियम जैसे – सती प्रथा निषेध अधिनियम 1829, सती प्रथा निवारण अनिधियम 1987, विधवा पुनर्विवाह अधिनियम 1856, बाल विवाह निषेध अधिनियम 1929, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948, हिन्दू विाह अधिनियम 1955, हिन्दू स्त्रियों का सम्पत्ति अधिनियम 1956, दहेज निवारण अधिनियम 1961, संविधान संशोधन 73, 74 के द्वारा कानूनी रूप से महिलाओं को मजबूती प्रदान की गई है।

(4) **मीडिया** – वर्तमान समय में मीडिया के अभाव में जीवन की कल्पना अर्थहीन लगती है। आज मीडिया ने जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित कर रखा है। महिला उत्थान में भी मीडिया की भूमिका सराहनीय है क्योंकि यदि मीडिया इतना सशक्त माध्यम नहीं होती तो महिलाओं की भी भारत में इतनी उन्नति शायद न होती। यदि हम बात करे टेलीविजन की, तो शायद ही कोई ऐसवा चैनल होगा जिस पर महिला की उपस्थिति दर्ज न हो। समाचार वाचक, उद्घोषिका, कार्यक्रम संचालिका, प्रेस रिपोर्टर, पाक कला सीखाती हुई, विविध प्रकार के सामान बेचती हुई तथा विविध किरदारो में सजीव व सटीक रूप से अभिनय करती हुई विविध रूपों में महिला दृष्टिगोचर होती है। विभिन्न विज्ञापनों में भी महिला की उपस्थिति उस अमुक वस्तु के प्रति सकारात्मकता को उत्पन्न करती है। यदि हम कल्पना करे की बिना महिला के टेलीविजन, ऐसा फीका सा लगेगा जैसे स्वादिष्ट व्यंजन बिना नमक के बेस्वाद लगते हैं। उसी प्रकार महिला भी अपनी कोमलता, सुन्दरता, मीठी आवाज से सबको अपनी ओर आकर्षिक करती है। महिला सशक्तिकरण का महत्वपूर्ण साधन है – मीडिया, क्योंकि मीडिया द्वारा लोगों में स्त्री शिक्षा के प्रति जनचेतना का अलख जगी है। आज मीडिया चाहे समाचार पत्र–पत्रिकाएँ, किताबें या इलैक्ट्रोनिक मीडिया जिसमें टेलीविजन, रेडियो, इन्टरनेट इत्यादि शामिल है, द्वारा लोगों में चेतना का संचार तीव्रगामी व प्रभावशाली तरीके से हुआ है।

लोगों को यह बात अच्छी तरह समझ में आ गई है कि बेटियों को शिक्षित करने में अनेक फायदे है इसीलिए पिछले कुछ वर्षों में महिला साक्षरता के प्रतिशत में बढ़ोतरी हुई है।

मीडिया द्वारा महिलाओं के सम्मान में वृद्धि हुई है। लोगों की सोच में परिवर्तन हुआ है। आज लोग अपनी विकृत मानसिकता, अंधविश्वास को छोड़कर महिला उत्थान की दिशा में प्रयासरत हो रहे हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में महिलाओं का नौकरी या व्यवसाय कर धर्नाजन करना शर्मनाक नहीं अपितु सम्मानजनक माना जाता है। महिलाएँ भी मीडिया के माध्यम से अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई है। उन्होंने अपने अधिकारों के लिए आवाज़ भी उठाई है जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण है मुसलमान महिलाओं की तीन तलाक की कुप्रथा से निजात मिली है और गुलाबी गैंग की महिलाओं ने समाज के लिए कलंक स्वरूप शराब खोरी पर प्रतिबंध लगाया स्वयं के प्रयास द्वारा ही शराब बनाने के ठिकानों पर धावा बोलकर उन्हें बंद कराया है। इसी प्रकार निर्भया काण्ड के बाद ऐसे दुष्कर्म के मामले में तुरन्त सुनवाई व फैसला सुनाने का निर्णय अपने आप में मील का पत्थर है। महिलाओं का शोषण पहले भी होता था और आज भी लगातार हो रहा है परन्तु पहले महिलाएँ लोकलाज के कारण बताती नहीं थी परन्तु मीडिया ने ऐसी महिलाओं को शब्दों की ताकत की, उनके अधिकारों से उन्हें रूबरू कराया। मीडिया द्वारा महिलाएँ चाहे किसी भी वर्ग या समाज को ही उन्हें यह अच्छी तरह ज्ञात हो गया है कि महिलाएँ सामान नहीं है इंसान है। यदि उनके साथ अत्याचार होता है तो उन्हें चुप रहकर या सहकर नहीं अपितु अपनी बात सबके सामने रखनी होगी, सरेआम दोषी के चेहरे पर से शराफत का मुखौटा उतारकर दण्ड़ दिलाना होगा तभी इंसाफ होगा। क्योंकि महिला भी पुरूष के सामान है, भारत एक लोकतांत्रिक देश है, जहाँ स्त्री और पुरूष को एक समान आधिकार प्राप्त है। कानून की नजरों में दोनों बराबर है। यह संभव हो पाया है मीडिया की ही बदौलत।

महिलाओं के प्रति समाज में व्याप्त कुप्रथाओं का निवारण भी मीडिया द्वारा लाकर महिला सशक्तिकरण को संबल प्रदान करवाया है यथा – सती प्रथा, दहेज प्रथा, बेमेल विवाह, देह व्यापार, बाल विवाह, बहु विवाह, कन्या भ्रूण हत्या इत्यादि। अभी हाल ही में महिला को डायन बताकर पीट–पीटकर जान से मार दिया उसे अंधविश्वासी लोग डायन ही समझते रहते परन्तु मीडिया द्वारा ही यह चेतना जाग्रत कर प्रसारित की गई कि आज के वैज्ञानिक युग में कोई महिला डायन कैसे हो सकती है ? मीडिया द्वारा 'राम रहीम' को दोषी करार देने, सजा सुनाने, जेल जाने, जेल में किये जाने वाले कार्य व दिनचर्या का पूरा ब्यौरा टी.वी. के विविध चैनल्स द्वारा प्रसारित कर लोगों को बताया कि यदि महिला के साथ अनैतिक कृत्य होगा तो सजा तो अवश्य मिलेगी, चाहे दोषी कितना भी बड़ा, रसूख रखता हो।

मीडिया की ही बदौलत आज महिलाओं की सामाजिक, बौद्धिक, शारीरिक, आर्थिक, राजनैतिक उन्नति हुई है। मीडिया महिलाओं हेतु एक शिक्षक उपदेशक, पथ प्रदर्शक व भविष्य वक्ता की भूमिका वहन करता है। राजनीति के क्षेत्र में भी महिलाएँ आज सफल है यथा – वसुन्धरा राजे, मायावती, सुषमा स्वराज, राबड़ी देवी, सोनिया गाँधी इत्यादि। आज जब महिलाएँ स्वावलंबी होकर धनार्जन कर रही है तो परिवार, समाज व देश में उनकी इज्जत बढ़ी है और वह घर की भी भाँति देश की भी महत्वपूर्ण नागरिक रूप में स्वीकार की जाने लगी है। खेल जगत में, मनोरंजन के क्षेत्र में, धार्मिक क्षेत्र में उसमें अपनी प्रतिभागिता संसार में प्रत्येक वस्तु के दो पहलू होते हैं। ऐसे दृष्टांत नकारात्मकता की ओर अग्रसर करते हैं जबकि दूसरी ओर समाज में सम्मान व पद प्राप्त करने वाली किरण बेदी, सायना नेहवाल, सीता–गीता पहलवान, इंदिरा गांधी, पी.टी. ऊषा, मदर टेरेसा, सानिया मिर्जा, पी.वी. संधु इत्यादि का जब नाम आता है हमारे देश की हजारो–लाखों बेटियाँ इनसे प्रेरणा पाकर सकारात्मक ऊर्जा ग्रहण कर कुछ करने का सपना साकार करती है। अतः हमें समाज व देश के विकास के लिए सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करने वाले पहलू को समाज का अभिन्न अंग बनाने की ओर सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। इसके लिए हमें बालपन से ही बच्चों में स्त्री सम्मान की शिक्षा देनी होगी। उनकी नींव ऐसे डाले जिसमें स्त्री–पुरूष बराबर है। कोई भेदभाव नहीं लिंग के आधार पर भेदभाव गलत है, ठीक नहीं है। बच्चों को बचपन से ही नारी की इज्जत करने की शिक्षा देनी चाहिए न कि यह की ''भारत एक पुरूष प्रधान देश है, जहाँ नारी उसकी गुलाम' ऐसी विकृत मानसिकता का बीज़ हमें नहीं बोना है। स्त्री सम्मान की शिक्षा की नींव घर से ही पड़नी चाहिए। केवल हम थोथे शब्द ही नहीं अपितु व्यवहारिकता से भी समझाएँ परिवार में बेटा–बेटी के प्रति भेदभाव के रवैये को त्यागकर दोनों को सम्मान धरातल पर स्नेह, शिक्षा व संस्कार प्रदान करें जिससे वे देश के उपयोगी नागरिक बनकर महिलाओं के विकास में पूर्ण सहयोग करें। जहाँ महिला पुरूष के सहचर्य से सृष्टि कार्य करती है वहीं दूसरी ओर पुरूष उसका शोषण करता है। अतः हमे मानसिकता विकृतियों को दूर भगाकर महिला सशक्तिकरण में सहयोग प्रदान करना है। ऐसी सोच पुरूषों को विकसित करनी होगी कि पुरूष और महिला बराबर है। अतः व्यवहार में भी उसे बराबर का दर्जा देते हुए भावनात्मक रूप से उसके मनोबल में वृद्धि करने का महत्वपूर्ण कार्य पुरूष ही कर सकता है तभी समाज और देश की तस्वीर बदलेगी।

(5) **सरकारी बैंकों में महिलाओं के लिये योजनाएँ** – महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक और महत्वपूर्ण कदम है, भारत में महिला बैंक की स्थापना, भारत में पहला महिला बैंक 19 नवम्बर, 2013 में मुम्बई में स्थापित किया गया। जिसकी सात शाखाएँ – मुम्बई, बैंगलोर, कलकत्ता, चेन्नई, अहमदाबाद, लखनऊ, गुवाहाटी में स्थित है। 2014 तक 25 शाखाएँ

स्थापित करने की योजना है। इस बैंक की यह विशेषता है कि इस बैंक में सभी कर्मचारी महिलाएँ हैं। महिला बैंक के अतिरिक्त महिलाओं के लिए सस्ता ऋण लेकर कारोबार शुरू करने के लिए ''प्रधानमंत्री मुद्रा लोन योजना'' इसी प्रकार महिलाओं के लिए रोजगार के क्षेत्रों में वृद्धि के लिए लागू की गई कौशल्या योजना, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना इत्यादि। भारत की अधिक से अधिक महिलाएँ आत्मनिर्भर बने, स्वयं का कार्य प्रारंभ करे इसी उद्देश्य से भारत के विविध सरकारी बैंक महिलाओं को निम्न ऋण सविधा का भी लाभ दे रहे हैं :–

(अ) **विजया बैंक की 'वी' शक्ति योजना** – इस योजना के अन्तर्गत महिलाओं को स्वयं का कार्य शुरू करने के लिए ऋण देने की व्यवस्था की है जिसमें अधिकतम 5 लाख रूपये तक का ऋण बिना गारन्टर के देने का प्रावधान है। यह ऋण निम्न कार्य शुरू करने जैसे – आचार, मसाले, मोमबत्ती, पापड़ बनाने, टेलरिंग, कैटरिंग, ब्यूटी पार्लर, क्रैच, प्ले स्कूल, ट्यूशन, कोचिंग, लाइब्रेरी, हस्तनिर्मित वस्तुओं, हैल्थ सैंटर, बेकरी, ट्रैवल एजेन्सी, मैडिकल दुकान, इत्यादि कार्यों के लिए महिलाओं के ऋण देने की व्यवस्था है।

(ब) **वी मंगला** – विजय बैंक से गृह ऋण लेने वाली महिलाओं को तथा गृह ऋण लेने वोले पुरूषों की महिलाओं को चौपहिया, दुपहिया वाहन क्रय करने के लिए, आभूषण क्रय के लिये, महिलाओं को लगभग 3 लाख तक ऋण देने की व्यवस्था है। यह ऋण साधारण ऋण से 1 फीसदी कम ब्याज दर पर दिया जाता है तथा मुफ्त क्रेडिट कार्ड भी दिया जाता है।

(स) **एस.बी.आई. का स्त्री शक्ति पैकेज** – महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने के लिए 5 लाख तक ऋण देने की व्यवस्था है। महिलाओं को ऋण, प्रोजेक्ट रिपोर्ट के आधार पर दिया जाता है जिसमें ब्याज दरों में 0.25 फीसदी की रियायत महिलाओं के लिए दी जाती है।

(द) **केनरा बैंक की केन महिला लोन स्कीम** – 18 से 55 आयु वर्ग की घरेलू, कामकाजी महिलाओं को घर का सामान, आभूषण, कम्प्यूटर आदि खरीदने के लिए ऋण देने की व्यवस्था है।

(य) **बैंक ऑफ इंडिया की प्रियदर्शनी योजना** – उद्योगों को बढ़ावा देने तथा महिलाओं को रोजगार से जोड़े रखने के उद्देश्य से महिलाओं को उद्योगों को शुरूआत करने के लिए बैंक 2 लाख तक का लोन कम ब्याज दर पर उपलब्ध करवाती है। जिससे महिला को बड़ा, छोटा या मध्यम आकार का उद्य़ोग स्थापित कर स्वावलंबी बन सके।

(र) **ओरियन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स की महिला विकास योजना** – यह बैंक 2 लाख से 10 लाख तक का लोन, सात वर्ष के लिए 2 फीसदी कम ब्याज दर पर दिया जाता है। 10 लाख से अधिक राशि के ऋण पर ब्याज दर में 1 फीसदी की छूट मिलती है।

(ल) **<u>सिंडिकेट बैंक 'सिंड महिला शक्ति'</u>** :– देश में 20,000 महिला कारोबारियों को कम ब्याज दर पर 5 करोड़ तक के ऋण की सुविधा, छोटे, बड़े, मध्यम आकार के व्यवसाय शुरू करने के लिए ऋण के साथ क्रेडिट कार्ड, ग्लोबल डेबिट कार्ड, एटीएम कार्ड, एस.एम.एस. बैंकिंग के साथ सिंड सुरक्षा इंश्योरेंस की सुविधा भी महिलाओं को दी जाती है।

(व) **<u>पी.एन.बी. योजनाएँ</u>** – महिलाओं के लिए पंजाब नेशनल बैंक की महिला उद्यम निधि स्कीम, महिला समृद्धि योजना, कल्याणी कार्ड योजना इत्यादि महिला स्वावलम्बन के लिए बाँस से लेकर हवाई जहाज़ बनाने तक के लिए 5000 से लेकर 5 हजार करोड़ रूपये तक का ऋृण दिया जाता है। 5 से 25 हजार रूपये तक का लोन महिलाओं को उपलब्ध करवाने की व्यवस्था महिला सशक्तिकरण की दिशा में सराहनीय प्रयास है।

(श) **<u>सरकार की मुद्रा योजना</u>** – यह योजना किसी भी बैंक में मिल जाती है। लघु उद्योग चलाने वाली महिलाओं को 50 हजार से 10 लाख रूपये तक का ऋण की व्यवस्था। इस ऋण के लिए डिप्लोमा, डिग्री की आवश्यकता नहीं है, न ही गारन्टर केवल बारीकी से प्रोजेक्ट रिपोर्ट का अध्ययन कर ऋण उपलब्ध कराया जाता है। इसी प्रकार सरकारी योजनाओं में से कुछ महत्वपूर्ण योजनाएँ यह है जो महिलाओं को संबल प्रदान करती है। जैसे – 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ योजना', 'सुकन्या समृद्धि योजना', 'कस्तूरबा बालिका विद्यालय योजना', 'उज्जवला योजना' इत्यादि।

(6) **तीन तलाक की कुप्रथा का नाश** – महिला सशक्तिकरण की दिशा में भारत के इतिहास में 9 करोड़ मुस्लिम महिलाओं के सम्मान में 1400 वर्ष की तीन तलाक की प्रथा पर रोक लगाकर महिलाओं के अपमान को तिलाळजलि दी गई है। चीफ जस्टि्स जे.एस. खेहर, जस्टि्स अब्दुल नजीर, जस्टि्स जोसेफ, जस्टि्स नरीमन, जस्टि्स यू.यू. ललित भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 5 धर्मों के जजों ने 28 मिनट में यह फैसला सुनकर भारत की मुस्लिम महिलाओं के प्रति होने वाले अन्याय पर लगाम लगाई है। मुस्लिम महिलाओं के लिए यह लड़ाई 5 महिलाओं ने लड़ी है। इससे पहले मुस्लिम महिलाओं की खौफ में जिंदगी बसर करनी पड़ती थी कि न जाने कब उन्हें तलाक दे दिया जाए। ट्रिपल तलाक (तलाक–तलाक–तलाक) अर्थात् त्वरित ट्रिपल तलाक कहने से निकाह तोड़ देने की इस परम्परा को खारिज कर दिया गया है। महिलाओं की मानसिक व शारीरिक प्रताड़ना से निजात दिलाने का कार्य वास्तव में सर्वोच्च न्यायालय ही कर सकता है क्योंकि इस महिला विरोधी अपितु मानवता को कुचलने वाले कृत्य को धार्मिक ढ़ाल से बचाया जा रहा था, इस कुप्रथा को सामाजिक संरक्षण दिया जाता था। सुप्रीम कोर्ट ने कुरान–ए–पाक की तलाक संबंधी सूरा और आपत्ति का विस्तार से जिक्र किया है। एक–एक पंक्ति में समझाया है कि किस तरह कुरान महिलाओं को हक–ओ–हकूक और इज्जत का सबक देता है। सुन्नत–जो

हदीस मे दर्ज़ पैगम्बर का आचरण है भी ऐसे आवेश में दिए तलाक को नहीं मानता और न ही 'इज़्या' जो आम सहमति से बनी प्रथाओं का दस्तावेज है। महिला सशक्तिकरण के इस अद्भुत दृष्टान्त में मुस्लिम महिलाओं की पहल से ही यह मजबूत कदम उठाया गया है।

वर्तमान समय में आज विश्व में महिलाओं के समुचित विकास के लिए अनुकूल वातावरण बनता जा रहा है। इसीलिए 21वीं शताब्दी की महिला शताब्दी के नाम से पुकारा जाने लगा है। विकसित या विकासशील कोई भी देश ही महिलाएँ पुरूषों के साथ कदम मिलाकर अपनी अन्तर्निहित क्षमता, आत्मविश्वास, साहस तथा दृढ़ निश्चय के साथ पुरूष प्रधान समाज में अपने अस्तित्व के सबलीकरण हेतु अनवरत प्रत्यनशील है। वह अपने कर्तव्य निर्वहन के साथ अपने अधिकारों के प्रति भी सचेत है।

हमारा इतिहास इस बात का साक्षी है कि महिला सशक्तिकरण की दिशा में राजाराम मोहन राय, आचार्य विनोबा भावे, ईश्वर चंद्र, व़िद्या सागर, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा ज्योतिराव फुले, सावित्री बाई फुले इत्यादि ने महिला उत्थान की दिशा में अविस्मरणीय सहयोग प्रदान कर समाज व देश का कल्याण किया। भारत में ईश्वर चंद्र, विद्या सागर के प्रयासों से विधवा पुनर्विवाह अधिनियम (1856) बनाया। यह कदम महिलाओं की स्थिति सुधारने में महत्वशाली था। इसी प्रकार अनेक कानूनी अधिनियम जैसे – अनैतिक व्यापार (रोकथाम) अधिनियम 1956, दहेज प्रथा उन्मूलन अधिनियम 1961, एक समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेग्नेंसी एक्ट 1987, लिंग परीक्षण रोंकथाम अधिनियम 1994, लिंग परीक्षा 1994, बाल विवाह रोकथाम 2006, कार्यस्थल पर महिला शोषण रोकथाम अधिनियम 2013 इत्यादि के फलस्वरूप हमें अद्भुत विभूतियाँ प्राप्त हुई –

सर्वश्रेष्ठ बॉक्सर	–	मेरी कॉम
गोल्डन गर्ल	–	पी.टी. ऊषा
टेनिस खिलाड़ी	–	सानिया मिर्जा
बैडमिंटन खिलाड़ी	–	सायना नेहवाल
बहादुर हिरोइन ऑफ हाईजैक	–	नीरजा भनोट
भारत की बेटी	–	कल्पना चावला
गायन कोकिला	–	लता मंगेशकर
मिस वर्ल्ड	–	ऐश्वर्या रॉय

निष्कर्ष – आज यदि हम बात करे तो प्रत्येक क्षेत्र में महिला की उपस्थिति दर्ज है यथा – प्रथम डी.टी.सी. बास चालक महिला 'वी. सरिता' तेलंगाना की निवासी, वर्तमान में नई दिल्ली में सरोजनी नगर डिपो में तैनात है, प्रथम बस कण्डक्टर महिला – 'अवनीश

जायसवाल', प्रथम ऑटो चालक महिला मुंबई की (ठाणे) 'अनामिका' सफर के दौरान यात्रियों को मुफ्त में वाई–फाई सुविधा भी प्रदान करवाती है। केवल आज वर्तमान मे ही नहीं इससे पहले भी पहला प्राथमिक स्कूल खोलने वाली भगिनी निवेदिता, पहली महिला गवर्नर – सरोजनी नायडू, भारत की पहली महिला अध्यक्ष यू.एन.ए में विजय लक्ष्मी पं. प्रथम मुख्यमंत्री सुचेताकृपलानी, सुप्रीमकोर्ट की प्रथम महिला जज – 'फातिमा बीवी' और नोबेल पुरूस्कार विजेता तथा सम्पूर्ण जीवन मानव सेवा में अर्पित करने वाली विभूति 'मदर टेरेसा' जैसी महिला शायद ही किसी देश में जन्म ले। ऐसी महिलाएँ हमारा सिर गर्व से ऊँचा कर सभी महिलाओं को भी ऊँचाईयों के शिखर तक ले जाती है।

भारत में महिला सशक्तिकरण की अवधारण अत्यन्त ही व्यापक है जिसमें शक्ति का अधिग्रहण मात्र ही शामिल नहीं है अपितु महिलाओं में शक्ति के प्रयोग की क्षमता का भी उचित तरीके से विकास होना अति महत्वपूर्ण घटक है। उसमें आश्रित रहने की भावना को समाप्त कर, हीन भावना को दूर कर यथोचित विकास शामिल है जिसमें विविध उपकरण उसके सहयोगी बन गये हैं यथा – शिक्षा, मीडिया, कानून, सरकारी योजनाएँ इत्यादि। विभिन्न सहयोगी साधन महिला सशक्तिकरण की दिशा में अपना विशिष्ट योगदान प्रदान करते थे, करते हैं और निःसंदेह भविष्य में भी करते रहेंगे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

01. संस्कृत साहित्य का इतिहास, बलदेव उपाध्याय।
02. भारत में सामाजिक परिवर्तन, वी.पी. शर्मा (1999) पंचशील प्रकाशन, जयपुर।
03. नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे, सम्पादक – साधना आर्य निवेदिता मेनन, जिनी लोकनीता, हिन्दी माध्यम निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, चतुर्थ संस्करण, अक्टूबर, 2013।
04. भारत में स्त्री असमानता एक विमर्श, गोपा जोशी, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिसम्बर, 2011।
05. मानवाधिकार उत्पत्ति, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन, डॉ. आलोक कुमार मीणा, डॉ. मीनाक्षी मीणा वर्ष 2013, गौतम बुक कम्पनी, राजा पार्क, जयपुर।
06. भारतीय संस्कृति, डॉ. किरण टंडन, ईस्टर्न बुक लिंकर्स, दिल्ली – 1994।
07. महिला और मानवाधिकार, एम.ए. अंसारी (2007), ज्योति प्रकाशन, जयपुर।
08. www.nmew.gov.in (Website)
09. www.sarkariyojna.co.in (Website)
10. दैनिक भास्कर समाचार पत्र, मुख पृष्ठ दिनांक 24.08.2017

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

हरियाणा व भारत छोड़ो आंदोलन : प्रैस पर आधारित एक अध्ययन

डॉ॰ नीलम रानी
एसिसटैन्ट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, म॰द॰वि॰, रोहतक
Mail ID : neelamrani1284@gmail.com

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का अन्तिम व महत्वपूर्ण आंदोलन ःभारत छोड़ो आंदोलन' था। इस आंदोलन को 'अगस्त क्रांति' के नाम से भी जाना जाता था, जो कि भारतीय जनता की वीरता और लड़ाकूपन की अद्वितीय मिसाल है। उसका दमन भी उतना ही पाश्विक और अभूतपर्व था। जिन परिस्थितियों में यह संघर्ष छेड़ा गया। वैसी प्रतिकूल स्थितियाँ भी राष्ट्रीय आंदोलन में अब तक नहीं आई थी। युद्ध की आड़ लेकर सरकार ने अपने को सख्त से सख्त कानूनों से लैस कर लिया था और शांतिपूर्ण राजनीतिक गतिविधियों को भी प्रतिबंधित कर दिया था। अतः यह जानना बहुत ही जरूरी है कि कैसी कौन सी परिस्थितियाँ थी जिनकी वजह से इतना बड़ा संघर्ष जरूरी हो गया था।[1]

सविनय अवज्ञा आंदोलन के समाप्त होने पर भी ऐसी अनेक घटनाएँ घटी जो अगस्त 1942 में 'भारत छोड़ो आंदोलन' को आरम्भ करने के लिए उत्तरदायी थी। 3 सितम्बर 1939 को दूसरा विश्वयुद्ध आरम्भ होने से सारी दुनिया विशेषकर अंग्रेजों द्वारा शासित, युद्ध में विश्व दो गुटों में बंट गया। एक तरफ ये इंग्लैंड, फ्रांस व रूस तथा अमेरिका। दूसरी तरफ जर्मनी, इटली और जापान। भारत के आंतरिक मामलों में उस वक्त एक गंभीर मोड़ आया। जब वायसराय लार्ड लिनलिथगों ने इंडियन नेशनल कांग्रेस से परामर्श किए बिना ही भारत की ओर से युद्ध की घोषणा कर दी और देश के अंदर भारतीय सुरक्षा अध्यादेश नामक दमनकारी कानून लागू कर दिया। अतः कांग्रेस ने अपना विरोध प्रकट किया और कांग्रेस शासित सभी प्रांतों के मंत्रीमंडलों ने अक्तूबर 1939 में त्यागपत्र दे दिया।[2] गाँधी जी ने सांकेतिक विरोध के रूप में नवम्बर 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन आरम्भ कर दिया। यह आंदोलन शांतिपूर्ण था और इसका उद्देश्य सरकार के युद्ध कार्यों में किसी प्रकार की बाधा डालना नहीं था।

इसी समय जून 1941 में जर्मनी ने रूस पर आक्रमण कर दिया। दिसम्बर 1941 में जापान ने मित्र–राष्ट्रों के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। जापान तेजी से बढ़ता हुआ भारत की सीमा तक आ पहुँचा। ऐसी स्थिति में ब्रिटिश सरकार भारत का सहयोग पाना चाहती थी। इसी समय सुभाष चन्द्र बोस ने जर्मनी, जापान के सहयोग से आजाद हिन्द फौज का गठन किया और 'दिल्ली चलो' का नारा दिया। आजाद हिंद फौज के वीर सैनिकों ने असम की पहाड़ियों और मैदानों में ब्रिटिश सरकार ने जमकर लोहा लिया।[3]

सरकार ने अप्रैल 1942 में कांग्रेस से समझौता करने के लिए 'सर स्टैफोर्ड क्रिप्स'[4] को भारत भेजा। वे 22 मार्च 1942 को भारत पहुँचे। उन्होंने 30 मार्च को अपने सुझाव पेश किए जिनमें भारत में औपनिवेशिक राज्य की स्थापना करना, नये संविधान का गठन, प्रांतों को पृथक् संविधान बनाने का अधिकार आदि शामिल थे।[5]

क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों को भारतीय लोकमत के प्रत्येक वर्ग ने अस्वीकार कर दिया। गांधी जी ने कहा– "क्रिप्स योजना ऐसे बैंकों की योजना के समान थी जो कि फेल होने जा रहे हों। वे पोस्ट डेटिड चैक के समान थी।"[6] पं० जवाहर लाल नेहरू के अनुसार, उनके पुराने मित्र क्रिप्स 'शैतान के वकील' बनकर आए थे और उनकी योजना देश के विभाजन के अनगिनत द्वार खोल रही थी। मुस्लिम लोगों ने इसमें साम्प्रदायिक आधार पर देशविभाजन की मांग को अस्वीकार कर दिया। अतः क्रिप्स मिशन अपने मकसद में नाकाम रहा। हिन्दी व मुस्लिम दोनों ने ही इसे अस्वीकार कर दिया।[7]

भारत छोड़ो आंदोलन आरम्भ करने के पूर्व महात्मा गांधी जी ने एक और महत्वपूर्ण आंदोलन चलाया था। जिसे 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' के नाम से जाना जाता है। गांधी जी ने 17 अक्तूबर 1940 को व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन को आरम्भ किया। (यह आंदोलन द्वितीय विश्व–युद्ध में जबरदस्ती भारतीयों को धकेलने, भारत की स्वतंत्रता के लिए तथा भारत के विभाजन को रोकने के लिए चलाया)। यह आंदोलन भी महात्मा गांधी जी के ढांचागत कार्यक्रम, चरखा कातने व खादी का प्रचार करने, सत्य अहिंसा जैसे सिद्धान्तों व कार्यक्रमों पर आधारित था। उनका मानना था कि ये कार्य संसार की आत्मा को जगा देंगे।[8]

यह एक तरह का अनोखा आंदोलन था, जिसें एक सत्याग्रही को गलियों में जाकर युद्ध के खिलाफ सलोगन गाकर स्वयं की गिरफ्तारी देनी होती थी। गांधीजी ने श्री विनोबाभावे को पहला सत्याग्रही नियुक्त किया। बाद में जवाहरलाल नेहरू व वल्लभभाई पटेल ने भी गिरफ्तारियाँ दी।[9] इसके बाद कांग्रेस के सदस्यों व अन्य कार्यकर्त्ताओं ने भी ऐसा ही किया।

गांधीजी के व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन का असर हरियाणा में भी पड़ा। कुछ हरियाणावासियों ने भी व्यक्तिगत सत्याग्रह के अंतर्गत स्वयं को सत्याग्रहीय नियुक्त किया। जिनमें पं० नेकीराम शर्मा पहला सत्याग्रही था।[10] जिसने भिवानी से 5 दिसम्बर 1940 को स्वयं को सत्याग्रही नियुक्त किया। हरियाणा में 600 के करीब लोगों को गिरफ्तार किया गया।[11]

हरियाणा में सत्याग्रही का सलोगन गाते थे– "युद्ध में शैतानी सरकार की सहायता करना पान है।" उस शैतानी सरकार के लिए व थोड़े पैसों के लिए अपने पुत्रों को कसाई मत बनाओ, इनके लिए मरने से तो अच्छा है। अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए मरना, या फिर क्रांति के लिए लम्बे समय तक जीवित रहना। सरकार ने शीघ्र ही बहुत कठोर कदम उठाए व

अनेकों सत्याग्रहियों को गिरफ्तार कर लिया। जिसमें हरियाणा व पंजाब से 1372 व्यक्तियों को जेल में डाला गया। 15 महिनों के बाद महात्मा गांधी जी ने इस आंदोलन को वापिस ले लिया।[12]

इस आंदोलन में जिन व्यक्तियों ने अपनी गिरफ्तारियाँ दी उनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं– चौ॰ भारत सिंह मोखरा, राव मंगलीराम, मास्टर नान्हूराम जसराना, चौधरी चन्द्रभान लौहारहेड़ी, चौ॰ रणवीर सिंह सांघी, चौ॰ मेहरसिंह दांगी, चौ॰ रूद्रसिंह बोहर, रामसिंह जाखड़ लडायन, बाबा सूरत सिंह छारा, चौ॰ अमरसिंह बल्व, चौ॰ पृथीसिंह गरावड़ भगवान दास रिवाड़ी खेड़ा, रामसिंह रिठाल, चौ॰ गरीबराम पुरखास, चौ॰ जागेराम खाण्डा, चौ॰ चरण सिंह भगान, चौ॰ बनवारीलाल, चौ॰ दानीराम विधलाना,[13] श्रीमती मन्हींदेवी, दड़कादेवी व कस्तुरी बाई व धापा देवी आदि।[14]

व्यक्तिगत सत्याग्रह में रोहतक जिले से भी 266 व्यक्ति जेल में गये। जिनमें हिसार के बाबू श्यामलाल, लाल बलवन्त राय तायल, बाकू जुगलकिशोर एडवोकेट हिसार, पं॰ रामकुमार विधात, डॉ॰ शीशपाल सिंह भिवानी, जमादार अखेराम, चौ॰ कृपाराम स्याहड़वा, लाला हरदेव सहाय व छोटे लाल सातरोड़, डॉ॰ मुरली मनोहर सिरसा, चौ॰ साहब राम व डूंगरमल चौटाला, वैद्य रामदयाल डबवाली व करनाल के डॉ॰ सार के कृष्ण लाला, ईश्वरचन्द्र, डॉ॰ माधोराम पानीपत, पं॰ चन्द्रकीर्ति व गुड़गांव के बाबू दयाल शर्मा मालपुरा, बाबू जीवनलाल सेही, श्री योगेन्द्रपाल भारती पलवल, महाशय बनारसीदास कैथल, श्री काकाराम कैथल, श्री रूपलाल पहवा, पलवल ठाकुर, रामसिंह खोल, डॉ॰ शिवनारायण रिवाड़ी, महाशय भगवान दास रिवाड़ी के साथ कई सौ सत्याग्रहियों ने भाग लिया व जेल गए।[15]

जिलावार : व्यक्तिगत सत्याग्रह में गिरफ्तारियाँ

हरियाणा तिलक अखबार अक्तूबर से दिसम्बर (1940–1941) में इसे प्रदर्शित करता है–

	जिला	**गिरफ्तार व्यक्ति**
1.	अम्बाला	171
2.	करनाल	48
3.	गुड़गांव	58
4.	रोहतक	264
5.	हिसार	86
हरियाणा में कुल गिरफ्तारियाँ		627[16]

व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन पूर्णतया असफल रहा, यह सरकार पर किसी तरह का दबाव न बना सका।

भारत छोड़ो आंदोलन व अगस्त प्रस्ताव

व्यक्तिगत सत्याग्रह व क्रिप्स मिशन की विफलता के बाद गांधी जी तो विशेष रूप से निराश हो गए। उनके विचारों में परिवर्तन आया तथा वे ब्रिटिश विरोध हो गए। गांधी जी ने 'हरिजन' नामक पत्रिका में लिखा है– "अंग्रेजों भारत छोड़ो', यदि मैं तुम्हारी लगातार प्रतीक्षा करूँ तो मैं मृत्युपर्यन्त प्रतीक्षा कर सकता हूँ। मैं दासता से व्यक्तिगत रूप से बीमार पड़ चुका हूँ। इसलिए मैं अराजकता को बनाए रखना चाहता हूँ ... "यदि तुम सोचते हो कि भारत छोड़ जाने से इस देश में अराजकता छा जाएगी तो होने दो अराजकता, तुम्हें भारत की फिक्र करने की जरूरत नहीं है। उसे अराजकता की स्थिति में छोड़ दो।"[17]

14 जुलाई 1942 में कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक हुई। इसमें कहा गया कि ब्रिटिश शासन को भारत में शीघ्र ही समाप्त होना चाहिए तथा भारत को आजादी मिलनी चाहिए। जरूरी है कि भारत को ही नहीं बल्कि सारे संसार में शांति व सुरक्षा की भी बहुत जरूरत है। गांधी जी ने यह बात स्पष्ट कर दी थी कि वे आजादी से कम कुछ भी नहीं लेंगे।[18]

8 अगस्त 1942 के दिन मुम्बई अधिवेशन में 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया गया जिसकी मुख्य बातें इस प्रकार थी–

1. भारत में ब्रिटिश शासन का अंत व तत्काल भारत की स्वतंत्रता की स्वीकृति।
2. 'स्वतंत्रता की लालिमा' से ही भारत में ब्रिटिश विरोधी भावना सद्भावना में बदल सकती है।
3. भारत की आजादी केवल भारत के लिए ही नहीं बल्कि संयुक्त राष्ट्रों की सुरक्षा व सफलता के लिए आवश्यक है।
4. भारत में सांप्रदायिकता विदेशी हुकूमत की फूट डालो व राज करो की नीति का परिणाम थी।
5. भारत की आजादी की घोषणा होने पर एक अस्थाई सरकार का गठन किया जायेगा और भारत उन राष्ट्रों का साथी बन जायेगा। वह उन राष्ट्रों की स्वंतत्रता और लोकतंत्र की रक्षार्थ उनके सभी परीक्षणों और संकेतों में भागीदार होगा।
6. एक संवैधानिक सभा की स्थापना की जायेगी जो सर्वस्वीकृत संविधान का निर्माण करेगी।
7. भारत में ब्रिटिश शासन की समाप्ति की मांग करके कांग्रेस ब्रिटेन तथा मित्र राष्ट्रों के युद्ध प्रयासों में बाधा नहीं डालना चाहती है और न ही किसी आक्रमण को बढ़ावा देना चाहती है।

8. इसमें यह भी चेतावनी दी गई यदि ब्रिटिश सरकार भारत की स्वतंत्रता की मांग को स्वीकार नहीं करती तो कांग्रेस स्वतंत्रता के इस अविभाजितीय को प्राप्त करने के लिए गांधी जी के नेतृत्व में, अहिंसक शक्ति के गठन के आधार पर एक विशाल जन–आंदोलन का आरम्भ करेगी।[19]

अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति के प्रस्ताव में 'भारत छोड़ों' शब्द का प्रयोग नहीं किया गया था। इस शब्द का प्रयोग तो एक अमेरिकन पत्रकार ने गांधी जी के साथ भेंट में किया था, जिसका प्रयोग बाद में सरकार प्रेस और लोगों ने किया।[20]

कांग्रेस महासमिति के 'भारत छोड़ों आंदोलन' प्रस्ताव पास हो जाने के बाद गांधी जी ने लगभग 70 मिनट तक भाषण दिया और 'करो या मरो' का नारा दिया। गांधी जी का यह भाषण युगान्तकारी था। गांधी जी ने कहा– "असली संघर्ष इसी क्षण से शुरू हो रहा है। आपने सिर्फ अपना फैसला करने का सम्पूर्ण अधिकार मुझे सौंपना है। अब मैं वायसराय से मिलूंगा और उनसे कहूँगा कि वे कांग्रेस का प्रस्ताव स्वीकार कर लें। इसमें दो या तीन हफ्ते लग जायेंगे।" लेकिन "आप निश्चित जान लें कि मैं मंत्रिमंडलों पर वायसराय से कोई समझौता नहीं करने जा रहा हूँ। सम्पूर्ण आजादी से कम में किसी भी चीज से मैं संतुष्ट होने वाला नहीं।"[21]

इसके बाद उन्होंने 'करो या मरो' का नारा दिया। "मैं तुम्हें एक मंत्र देता हूँ, छोटा सा मन्त्र, उसे आप अपने हृदय से अंकित कर सकते हैं और अपनी सांस– सांस द्वारा व्यक्त कर सकते हैं। वह मन्त्र है 'करो या मरो' या तो हम भारत को आजाद करायेंगे या इसी कोशिश में अपनी जान देंगे। अपनी गुलामी का स्थायित्व देखने के लिए हम जिन्दा नहीं रहेंगे।"[22]

कार्यक्रम

गाँधी जी के भाषण में विभिन्न वर्गों को साफ–साफ निर्देश दिए गए थे। सरकारी कर्मचारी नौकरी न छोड़े, लेकिन कांग्रेस के प्रति अपनी निष्ठा न छोड़े। सैनिक अपने देशवासियों पर गोली चलाने से इंकार कर दें। राजा महाराजा जनता की प्रभुसत्ता स्वीकार करें और उनकी रियासतों में रहने वाली जनता अपने को भारतीय राष्ट्र का अंग घोषित कर दें तथा राजाओं का नेतृत्व तभी मंजूर करें, जब कि अपना भविष्य जनता के साथ जोड़ लें। छात्र पढ़ाई तभी छोड़ें जब आजादी हासिल हो जाने तक अपने इस निर्णय पर दृढ़ रह सकें। सरकार का पक्ष लेने वाले जमींदारों को भी किसी प्रकार का कर न दिया जाए। सार्वजनिक सभाएँ की जाएं तथा अहिंसक हड़तालों का आयोजन किया जाए। इस तरह अहिंसक ढंग से अंग्रेजों के साथ पूरी तरह असहयोग किया जाए। अखबारों को स्वतंत्रतापूर्वक व निर्भीक होकर अपना कर्त्तव्य पालन करना चाहिए। गांधीजी की आकस्मिक गिरफ्तारी के कारण ये निर्देश जारी नहीं हो सकें। इस तरह अहिंसक ढंग से अंग्रेजों के साथ पूरी तरह असहयोग किया जाए।[23]

आंदोलन का आरम्भ व प्रगति

8 अगस्त 1942 को महात्मा गांधी जी ने एक बहुत ही शक्तिशाली जन–आंदोलन के प्रस्ताव को पारित किया। जैसे ही उसे कार्यकारिणी का अनुमोदन मिला। वैसे ही 9 अगस्त को सरकार ने गांधी जी और उनके साथी सविच महादेव देसाई, उनकी पत्नी कस्तूरबा बाई और श्रीमती नायडू को गिरफ्तार कर लिया गया व उन्हें आगा खाँ महल में पूना ले जाया गया। साथ ही मुम्बई में कार्यसमिति के सारे सदस्यों को गिरफ्तार कर अहमदनगर के किले में कैद कर लिया गया। फिर सारे भारत में गिरफ्तारियाँ हुई व कांग्रेस के अनेकों सदस्यों को जेल में डाल दिया गया।[24]

अभी आंदोलन आरम्भ भी नहीं हुआ था कि सरकार ने इसे नेतृत्वविहीन बना दिया। तमाम कांग्रेस समितियों को बंद कर दिया। इस बात की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। इस खबर के फैलते ही 9 अगस्त को बम्बई, अहमदाबाद और पूना में बड़ी–बड़ी सभाएँ हुई। जुलूस निकाले गए, प्रदर्शन हुए। ऐसा ही दिल्ली व उत्तर भारत के अन्य नगरों में हुआ। देश के एक कोने से दूसरे कोने में हड़तालों, धरनों, सविनय अवज्ञा आंदोलन आदि की भरमार हो गई।[25]

इसके साथ ही सरकार ने प्रेस पर भी हमला बोल दिया। बहुत से अखबार पूरे आंदोलन के समय तक बंद रहे। जैसे 'नेशनल हेराल्ड' व 'हरिजन' तो पूरे आंदोलन के दौरान नहीं निकले।[26] वर्नाकूलर समाचार–पत्रों पर भी प्रतिबंध लगाया गया। हरियाणा से निकलने वाले कई प्रमुख समाचार–पत्रों को भी पूरे आंदोलन के समय बंद रहना पड़ा। जिसमें हरियाणा तिलक व जाट गजट का नाम प्रमुख है। हरियाणा में हरियाणा तिलक अखबार की भारत छोड़ों आंदोलन से पहले भी जब्ती मांगी गई। यह 14 अगस्त 1939 को मांगी ताकि इसे बंद किया जा सके लेकिन ऐसा नहीं हो सका।[27]

लेकिन 22 दिसम्बर 1939 को सर सिकन्दर हकूमत ने हरियाणा तिलक अखबार को जब्त करने का नोटिस जारी कर दिया। शिमला से 8 सितम्बर को हरियाणा तिलक अखबार बंद करने के लिए सरकार ने नोटिस जारी कर दिया।[28] दिसम्बर 1939 में हरियाणा तिलक अखबार को पंजाब सरकार ने जब्त कर लिया और 10 जनवरी 1940 को यह 'जलावतन' के नाम से गाजियाबाद से जारी हुआ।[29]

सरकार की प्रेस विरोधी नीति का समाचार–पत्र पर सीधा प्रभाव पड़ा, जिससे बहुत से राष्ट्रीय समाचार–पत्रों को बंद करना पड़ा। परन्तु फिर भी बहुत से समाचार–पत्र प्रतिबंध के समय में भी निकलते रहे जिन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन की मशाल को जलाए रखा।

जहाँ तक हरियाणा का भारत छोड़ों आंदोलन से सम्बन्ध है, हरियाणा में भी 9 अगस्त को नेताओं की गिरफ्तारियाँ होते ही आंदोलन जोर पकड़ गया। यह खबर सारे भारत में जंगल

की आग की तरह फैल गई। हरियाणा के जन–साधारण किसान, साधारण मजदूर, किसान, छोटा कर्मचारी सब मैदान में निकल पड़े। सब हड़तालें हो गई जलसे–जुलूसों के माध्यम से सरकार की भर्त्सना की गई।[30]

हरियाणा में भारत छोड़ों आंदोलन 10 अगस्त 1942 को आरम्भ होता है तथा मार्च 1945 तक चलता है। हरियाणा में यह आंदोलन ब्रिटिश राज विरोधी था। हरियाणा में 'भारत छोड़ो आंदोलन' का आरम्भ बिन्दु 8–9 अगस्त 1942 की जन–सामान्य की गिरफ्तारियाँ थी। मुम्बई अधिवेशन में कुछ हरियाणा के नेताओं को भी गिरफ्तार कर लिया तथा कुछ वहाँ से बचकर आ गए। जिनमें हरियाणा के पं॰ श्रीराम शर्मा, चौ॰ रणवीर सिंह रोहतक सांघी, पं॰ रामकुमार भिवानी, ठाकुर रत्नसिंह अम्बाला, बाबू श्यामलाल हिसार आदि।[31] इन्हीं नेताओं ने हरियाणा में आंदोलन की मशाल को जलाया। अनेकों जिलों में धरना प्रदर्शन किया गया।

भारत छोड़ों आंदोलन को तीन चरणों में विभाजित करके इसका अध्ययन किया गया। प्रथम चरण जनमानस की भागीदारी का था जो कि 10 अगस्त 1942 से आरम्भ होता है तथा 31 अगस्त 1942 तक चलता है। दूसरा चरण 1 सितम्बर 1942 से फरवरी 1943 तक चलता है। भारत छोड़ों आंदोलन का तीसरा व अन्तिम चरण 10 फरवरी 1943 से 6 मई 1944 तक है। जब तक आंदोलन स्थगित नहीं हो जाता है। यह समय गांधी जी के पूरक ढांचागत कार्यक्रमों का था, जोकि उन्होंने ब्रिटिश राज के विरूद्ध प्रयोग किये थे।[32]

हरियाणा ने भी भारत छोड़ों आंदोलन में बढ़–चढ़कर भाग लिया व इस आंदोलन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। जिसका विवरण इस प्रकार हैः–

हिसार

9 अगस्त की प्रातः को गांधी जी व अन्य कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी के बाद 10 अगस्त को मुम्बई में श्रीमती अरूणा आसफअली द्वारा आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के 35 सदस्यों की एग गोपनीय सभा का आयोजन किया गया। जिसमें भारत छोड़ों आंदोलन को आम जनता द्वारा सफल बनाने के लिए 12 सूत्री कार्यक्रम का मसौदा तैयार किया गया। हिसार जिले से पं॰ नेकीराम शर्मा ने इस सभा के आयोजन तथा कारवाई में प्रमुख रूप से भाग लिया। उन्होंने 14 अगस्त 1942 को भिवानी के स्थानीय कांग्रेस सदस्यों को 12 सूत्री कार्यक्रम की जानकारी दी। जिसके बाद उन्हें 'डिफेन्स ऑफ इण्डिया' रूल्स के तहत गिरफ्तार कर लिया गया तथा उन्हें जुलाई 1944 को रिहा किया गया।[33]

अगस्त के दूसरे सप्ताह में हिसार के वीरों में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए कुछ करने या मरने का जोश ठाठे मारने लगा। पूरे हिसार में नगर व गांवों में आंदोलन के सम्बन्ध में जुलूस–प्रदर्शन होने लगे। 'अंग्रेजों भारत से निकल जाओ', 'करो या मरो' के गगनभेदी नारे

गूंज उठे। देशभक्त अपने सिर पर कफन बांधकर अपनी माताओं व बहिनों से तिलक करवाकर रणभूमि में कूद पड़े। हिसार, जिसमें सिरसा भिवानी की तहसीलें भी शामिल थी,[34] के क्रोधित व्यक्तियों ने रेल की पटरियाँ उखाड़ी, सिरसा के बीच व हिसार रेलवे स्टेशन को क्षति पहुँचाई व विद्रोहपूर्ण साहित्य में बांटा गया।[35]

जिससे क्रोधित सरकार ने स्वतंत्रता सेनानियों की गिरफ्तारियाँ करनी आरम्भ कर दी। जिसमें हिसार से लाला हरदेव सहाय जी,[36] पं॰ नेकीराम शर्मा, श्री बलवंतराय तायल, दादा गणेशीलाल, बाबू जुगलकिशोर एडवोकेट, डॉ॰ मदन गोपाल, डॉ॰ रामप्रकाश बंसल, दादा पतराम शर्मा, श्रीमदनलाल बागी, श्री रामकुमार विधात भिवानी, महाशय लक्ष्मणदेव आर्य, मातश्याम, श्रीफतेह सिंह, मास्टर घिराय, श्री छोटे लाल वर्मा व चन्दीराम वर्मा (दोनों भाई) सातरोड़ खुर्द, श्री स्वरूप सिंह भारद्वाज गोरखपुर, श्री अमीलाल वर्मा, श्री हरिराम धानुसुख व श्री कृपाराम स्याहड़वा, चौ॰ देवीलाल चौटाला (सिरसा), चौ॰ साहबराम व सर्वश्री खेताराम, कुभाराम, गंगाराम, लेखराम तथा श्री हुक्मराम, लाला डुंगरमल चौटाला, मंडी डबवाली से रामदयाल, महाशय हुक्मचंद, मदनमोहन, रूलदूराम गुप्ता, गिरिश गुप्ता, सिरसा से चाननमल कटलीवाला, त्रिलोकचंद, विश्वनाि महीपाल, जॉन मोहम्मद, अर्जुनसिंह ऐलनाबाद, श्री लादूराम वर्मा, श्री पतराम वर्मा (दोनो भाई), सूरजप्रकाश कालावाड़ी मंडी से सूरज प्रकाश, नन्दलाल, बाबा गंगाराम, कामरेड राधाकिशन व ठाकुर शीशपाल भिवानी से, लाला देवीसहाय मिताथल, हरिसिंह सैनी हांसी से आदि को गिरफ्तार किया गया व हिसार के अधिकांश को मुल्तान की जेल में भेज दिया गया।[37]

रोहतक व झज्जर भी भारत छोड़ों आंदोलन से अछूता नहीं रहा। मुम्बई अधिवेशन में रोहतक से चौ॰ रणवीर सिंह, पं॰ श्रीराम शर्मा, नेकीराम शर्मा आदि ने खुशी जताई व इसे 'अगस्त क्रांति' की संज्ञा दी। 14 अगस्त को प्रमुख नेता पं॰ नेकीराम शर्मा, श्रीराम के साथ अन्य 164 व्यक्तियों को भी गिरफ्तार किया गया।[38]

जिसमें कुछ नाम इस प्रकार हैं– चौ॰ रणवीर सिंह, बदलूराम सांघी, कामरेड रामशरण रोहतक, चौ॰ चंदगीराम दूरनखेड़ा, चौ॰ नान्हूराम जसराना, चौ॰ चन्द्रभान लुहारखेड़ी, पं॰ भगवानदास रेवाड़ी खेड़ा, चौ॰ बनवारी लाल विधवाल, प्रतिसिंह रमड़ा, मेहरसिंह दांगी मदीना मामचन्द्र जागसी, रामसिंह लडायन, लाला मुल्तान सिंह रोहतक, टेकराम, आनन्दस्वरूप वकील, लाला आशाराम, भक्त सुखदेव सिंह, लाला रामजी लाल रोहतक, चौधरी गरीबराम पुरखास, चौधरी जुगलाल कासनी, राव मंगलीराम खातीवास आदि।[39]

22 सितम्बर 1942 को रोहतक में जिला और देहली के कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं की मीटिंग श्री कृष्णा नैय्यर ने चौ॰ नेतराम गांव भापड़ौदा के घर बुलाई। इसमें चौ॰ बदलूराम सांघी, मास्टर

नान्हूराम जसराना आदि ने भी भाग लिया। इसमें असौदा हवाई अड्डे को उड़ाने का षडयन्त्र, अंडर ग्राउण्ड रहकर गांव–गांव घूमकर गुप्त रूप से आंदोलन का प्रचार करने तथा इटालियन युद्ध बंदियों को छुड़ाया जाने जैसे कार्यक्रम शामिल थे।

लेकिन शीघ्र ही सांपला की पुलिस ने मीटिंग के स्थान पर छापा मारा व 15–16 कांग्रेस वर्करों को गिरफ्तार करके बहादुरगढ़ के थाने में बंद कर दिया। 35 गिरफ्तारियों की खबर हरिजन सेवक व दि ट्रिब्यून 22 अगस्त के अखबारों में छपी। इतने बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियों की खबर सुनते ही रोहतक की जनता में सरकार के विरूद्ध आक्रोश पैदा हो गया। जनता ने जगह–जगह पर जुलूस निकाले, जनसभाएं आयोजित की व प्रदर्शन किए। कुछ युवा व्यक्तियों ने रेल की पटरियाँ उखाड़ी। गन्नौर व बहादुरगढ़ के पास टेलिफोन के तार काटे गए। रोहतक रेलवे स्टेशन पर एक ट्रेन में आगल लगा दी गई।[40] 31 अक्तूबर को रोहतक गवर्नमेंट कॉलेज की लाइब्रेरी को आग लगा दी, जिसमें बहुत से रिकार्ड जलकर राख हो गए।[41] रोहतक में भी सरकार विरोधी (राजद्रोहपूर्ण) साहित्य बांटा गया।[42] रोहतक के स्कूल व कॉलेजों के विद्यार्थियों ने इस आंदोलन में बढ़–चढ़कर भाग लिया। रोहतक व झज्जर बाजारों की दुकानें अगस्त 1942 तक बंद रही।[43]

झज्जर में श्रीराम शर्मा ने झज्जर बाजार चौपटा में जनसभा का आयोजन किया और व्याख्यान देकर स्वयं ही थाने की ओर चल दिए। उन्हें 22 सितम्बर को नजरबंद कर लिया गया और बाद में 26 जुलाई 1945 को स्यालकोट से रिहा किया गया। श्रीराम शर्मा तीन वर्ष तक क्रमशः रोहतक, मुल्तान, मियांवाली और स्यालकोट की जेलों में रहे।[44]

झज्जर से हाजी और मोहम्मद व दिवान सिंह झज्जर, चौ॰ हबीब उल्लाह खाँ तलाब, चौ॰ श्योचंद बाघपुर, चौ॰ अर्जुन सिह बेरी, चौ॰ लायकराम मारोत, स्वामी चन्द्रनाथ योगी, सोहनलाल, लाला चंदगीराम व देवेन्द्र सिंह छारा, चौ॰ कन्हैया लाला बुटाना, मांगेराम वत्स मांडोठी, लाला महावीर प्रसाद जैन आदि को गिरफ्तार किया गया।

करनाल जिले ने भी भारत छोड़ों आंदोलन में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। जैसे ही करनाल वासियों को आंदोलन का पता चला। सैकड़ों व्यक्ति सड़कों पर उतर आए व सरदार मानसिंह शाही व डॉ॰ कृष्णा (पानीपत) के नेतृत्व में एक सम्मेलन रखां वहाँ इन नेताओं ने ओजस्वी भाषण दिए। उन्होंने लोगों को प्रेरणा दी कि वे ब्रिटिश सरकार को अहिंसात्मक तरीके से भारत से बाहर निकाल फैंके। करनाल में बाजारों में प्रदर्शन चलते रहे तथा 12 अगस्त तक बाजारों को बंद रखा गया।[45]

करनाल में आंदोलन का ऐसा रूप देखकर सरकार को बहुत चिंता हुई व सरकार ने राही, कृष्णा व अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया व शांतिपूर्ण जुलूस पर लाठीचार्ज किया

गया, जिसमें बहुत से व्यक्ति जख्मी हो गए। बड़े पैमाने पर नेताओं को गिरफ्तार किया गया। जनता के मन से ब्रिटिश अत्याचार का भय निकल गया व जनता ने ब्रिटिश विरोधी रवैया अपनाया।[46]

करनाल के नेताओं ने सरकार को करारा जवाब देने के लिए एक संगठन बनाया। एक करनाल का युवा व्यक्ति नत्थीराम इस संगठन का नेता बना। रामप्रसाद, आत्मा राम, मुंशीराम ने संगठन की देखभाल की जिम्मेदारी ली। सरकारी दफ्तरों में आग लगाई, रेल की पटरियाँ उखाड़ी गई, विष्णुदत्त अंसारी व कुछ दूसरे युवा व्यक्तियों को पंजाब के गवर्नर को मारने का कार्य सौंपा गया। लेकिन इस कार्य में उसे सफलता नहीं मिली।[47]

16 अगस्त 1942 को पुलिस स्टेशन, डिप्टी कमिश्नर ऑफिस में आग लग गई, जिससे बहुत सारा रिकार्ड जलकर राख हो गया। आग को मुश्किल से काबू किया गया। कुछ समय बाद डाकखाने में भी आग लगा दी गई। डी॰सी॰ रिकार्डरूम के वर्नाकूलर रिकार्ड को जला दिया। एक सोमनाथ नामक देशद्रोही ने सारी सूचना सरकार को दे दी, जिसके कारण नाथूराम क्रांतिकारी पकड़ा गया।[48]

भारत छोड़ों आंदोलन के दौरान जिला करनाल से गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों में से प्रमुख लाला काकाराम, महाशय बनारसी दास कैथल, लाला भानुराम गुप्ता शाहबाद, डॉ॰ आर॰के॰ कृष्णा, ईश्वरचंद गुपता, मूलचंद जैन, डॉ॰ रामस्वरूप करनाल, डॉ॰ साधूराम पानीपत, पं॰ चन्द्रकीर्ति समालखा, चौ॰ हुक्मचंद गगसीना, चौ॰ दाताराम सीख, श्री कस्तूरीलाल पुण्डरी, कैप्टन मोहम्मद हुसैन जुण्डल, गुलाम मोहम्मद उरलाना आदि। 110 आदमियों को गिरफ्तार किया गया।[49]

दि ट्रिब्यून समाचार 20 अगस्त 1942 में अम्बाला की अवस्था का वर्णन किया है। अम्बाला में भी टेलिफोन के तार काटने व लैटर बॉक्स को जलाने के जुल्म में 15 व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया गया। 16 अगस्त 1942 को अम्बाला से लाला दुनीचंद (एम॰एल॰ए॰) को भी हिरासत में ले लिया। 20 अगस्त 1942 को जिला कांग्रेस कमेटी अम्बाला के दफ्तर को भी पुलिस ने कब्जे में ले लिया।[50] लाला मांगेराम जोकि प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य थे। लाला जोशीप्रसाद जिन्होंने अम्बाला कैंट में जनसभा को सम्बोधित किया था, को शीघ्र ही गिरफ्तार कर लिया गया। महर्षि मुंशीराम आर्य जोकि कांग्रेस कमेटी के सैक्रेटरी थे। लाला बशेश्वर नाथ ने 19 अगस्त 1942 को गिरफ्तार कर लिया गया जब वे शाहदपुर में नारायणगढ़ तहसील में जनसभा को सम्बोधित कर रहे थे।[51] इसके बाद एक दर्जन देशभक्तों को भी गिरफ्तार कर लिया जोकि तांगे में जा रहे थे और युद्ध विरोधी सलोगन गा रहे थे।

25 अगस्त 1942 को अम्बाला जिला फिर से सुर्खियों में आ गया। इस दिन खादी भंडार के मैनेजर लाला हरिचंद और लाला नाथलाल जोकि अखिल भारतीय स्पिनरज एसोसिएशन के इंस्पैक्टर थे, को भी गिरफ्तार कर लिया गया।[52] पंजाब पुलिस ने खादी भण्डार के दफ्तर व मैनेजर के निवास स्थान पर छापा मारा व वहाँ से राजद्रोह पूर्ण साहित्य प्राप्त किया।[53] राजद्रोहपूर्ण साहित्य हिसार, गुड़गांव, रोहतक में भी मिला। बालमुकुन्द गुप्त व कालीचरण दास जिसने अम्बाला के सैनिक छावनी के खादी भंडार की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली थी, ने भी इस साहित्यिक गतिविधियों में भाग लिया। अम्बाला की सैनिक छावनी में 'राजद्रोहपूर्ण साहित्य' लिखा गया व इसका वितरण अन्य सैनिक टुकड़ियों में किया गया। ऐसे सैनिकों को पुलिस ने हिरासत में ले लिया व उन्हें 10 साल की कठोर सजा दी गई। कुछ युवा व्यक्तियों ने जगाधरी के पास रेलवे स्टेशन को उखाड़ फेंका।[54] इसे हरिजन सेवक नामक समाचार–पत्र में विस्तार से बताया गया है।

सरकार की कठोर व अहिंसक नीति का विवरण हमें दि ट्रिब्यून (11 अगस्त 1942) में मिलता है।

अम्बाला के कुछ गांवों ने भी इस आंदोलन में भाग लिया। शाहपुर अम्बाला का एक छोटा सा गांव है, जिसके पांच व्यक्ति भारतीय डिफेंस रूल के अंतर्गत जेल गए। कुछ कांग्रेस कार्यकर्त्ता कुराली गांव में पकड़े गए जो सरकार विरोधी साहित्य को गांव में बांट रहे थे। खरड़ तहसील में दुकानों को बंद करके आंदोलनकारियों को सहयोग दिया गया। सरकार ने अहिंसात्मक तरीका अपनाकर आंदोलन को दबाना चाहा।[55]

गुड़गांव व रेवाड़ी में भी आंदोलन की समान गतिविधियों का अनुसरण किया गया। रेवाड़ी के हाई स्कूल के विद्यार्थियों ने आंदोलन में बढ़–चढ़कर भाग लिया। गुड़गांव में सरकार ने अविवेकपूर्ण तरीका अपनाया। यहाँ लोगों पर लाठीचार्ज किया गया। गुड़गांव के निर्माणाधीन हवाई अड्डे में बाधा डालने के कारण लेबर के नेता हरिहर लाल को गिरफ्तार कर लिया गया व निर्दयतापूर्ण पीटा गया।[56]

गुड़गांव से 'भारत छोड़ो आंदोलन' में गिरफ्तार किए कार्यकर्त्ताओं में– पतराम, चन्द्रभावन, नयन, गबदारी तेजा, छोटेलाल, पिताम्बर सिंह, सूरजसिंह, सैय्यद मुतालंबी, बाबूलाल, गिगयासी राम, बनारसी दास, राधेश्याम, पतराम, अब्दुलहई, महाशय भगवानदास, चद्रभान, खुशीराम, पारदयाल, भवानी सिंह भोला, जर्नादन, गोविन्दराम, दीपचंद, रामस्वरूप दीप, बुद्धिप्रकाश, रूपदयाल, प्रभुदयाल, शादीराम, गंगाप्रसाद, सतनारायण, शांतिस्वरूप, जगदीश, पुरुषोत्तम, बालाजी रूपलाल, गंगासहाय, रामचन्द्र, फतेहचंद, दयाल हाजीखाँ, मोहम्मद खाँ,

स्वामी शिवनाथ, मुहम्मद नरंजन सिंह, लालचंद, सेवादास, महेन्द्र, सोहन वैद्य, शम्भूनाथ, श्रीकृष्ण, गुरुबक्श, करतार सिंह, कृष्ण सिंह आदि के नाम प्रमुख है।[57]

हरियाणा में भारत छोड़ो आंदोलन के समय बड़े पैमाने पर देशभक्तों को गिरफ्तार किया गया। जिन्हें नीचे एक तालिका में दिखाया गया है।[58]

हरियाणा में जिलें वार गिरफ्तारियाँ (1942–1944) में

वर्ष	अम्बाला	करनाल	गुड़गांव	रोहतक	हिसार
1942	114	72	115	289	115
1943	124	377	535	402	333
1944	60	299	158	130	51

इन गिरफ्तारियों से तंग आकर ही जनसाधारण ने सरकार का विरोध किया व सड़कों पर उतर आये व प्रदर्शन किए। इन सभी प्रदर्शनों के प्रति सरकार ने कठोर व निर्दयतापूर्ण तरीका अपनाया। लाठीचार्ज किया, लात–घुंसों से पिटाईयाँ की गई, सभी प्रकार से लोगों को अपमानित किया गया। जिससे जनसमूह में बदले की भावना उमड़ने लगी। इस प्रकार जनता ने हिंसात्मक कार्य किए, तोड़–फोड़ का सहारा लिया।[59] हरियाणा में भारत छोड़ों आंदोलनों के समय जो कुल मिलाकर हिंसक घटनाएँ हुई उनका ब्यौरा निम्न है–

भारत छोड़ों आंदोलन के दौरान हरियाणा में तोड़–फोड़ की घटनाएँ

1. रेलवे स्टेशनों को पूर्ण तथा आंशिक क्षति = 4
2. डाकघरों पर आक्रमण = 11
3. तार काटने की वारदातें = 45
4. पुलिस स्टेशनों तथा सरकारी भवनों पर आक्रमण = 8
5. रेल की पटरी उखाड़ने की वारदातें = 8[60]

कुल घटनाएँ = 76

जनता ने जितने जोश से आंदोलन को चलाया। सरकार ने उतनी ही क्रूरता से आंदोलन का दमन किया। सरकार ने अपनी सारी शक्ति लगा दी। जिसका अनुमान इन आंकड़ों द्वारा लगाया जा सकता है जो फरवरी 1943 में भारत सरकार के युद्ध सदस्य सर रैजीनाल्ड मैक्सवेल ने केन्द्रीय विधान सभा में प्रस्तुत किए थे। इन आंकड़ों के अनुसार 1992 के आंदोलन में पुलिस और सेना द्वारा 538 बार गोलियाँ चलाई गई। जिनमें 950 व्यक्ति मारे गए और 1360 घायल हुए। 60229 व्यक्तियों को गिरफ्तार किया गया।[61] शांतिपूर्ण जुलूसों पर फायरिंग व लाठीचार्ज किए गए। पुरुष व स्त्रियों को बेरहमी से पीटा गया। अनेक स्थानों पर

गांवों के गांव जला दिए गए। लाखों रुपयों की सम्पत्ति नष्ट कर दी गई। स्कूलों व कॉलेजों के हजारों विद्यार्थियों पर तरह–तरह के दण्ड दिए गए। अनेक प्रदर्शनकारियों पर कड़े जुर्माने किए गए।[62]

हिंसात्मक गतिविधियों के लिए सरकार को दोषी ठहराया। गांधी जी की ईमानदारी, सत्य, अहिंसा की निष्ठा पर संदेह किया। इसलिए गांधीजी ने आत्मशुद्धि के लिए 21 दिन (10 फरवरी से 3 मार्च 1943 तक) का उपवास रखा। गांधीजी के उपवास सफल हुए। इसके साथ ही यह आंदोलन बिना किसी उपलब्धि को प्राप्त किए ही समाप्त हो गया।[63]

निष्कर्ष

भारत छोड़ों आंदोलन एक मात्र ऐसा आंदोलन था, जो अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँचा। इस आंदोलन की महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि नेताओं ने भूमिगत रूप से इसे लगातार 6 मई 1944 तक चलाते रहे, जब तक कि वह स्थगित न हो गया।[64] यह आंदोलन एक व्यापक जनआंदोलन था। इसमें लगभग सभी समुदायों के लोगों ने भाग लिया। समाज के निम्न वर्ग, मध्यम व उच्च वर्ग ने अपनी भागीदारी दी।[65] बच्चों, पुरुषों, महिलाओं, वृद्धों, विद्यार्थियों आदि ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। इसमें गांवों से लेकर छोटे–बड़े शहरों ने भाग लिया। अतः हम कह सकते हैं कि यह एक व्यापक जन–आंदोलन था।[66]

गांधी युग से पहले भारत का राष्ट्रीय आंदोलन केवल बड़े शहरों, सीमित क्षेत्र तथा उच्च वर्ग तक ही सीमित था। लेकिन गांधी जी ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को एक नया आयाम दिया। इसे व्यापक जन–आंदोलन बनाया, बड़े शहरों से निकल कर गांव तक तथा जन–जन तक पहुँचाया। उच्च वर्ग से मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग तक किसान व मजदूरों तक पहुँचाया।

आलोचकों का कहना है कि कांग्रेस एक अहिंसक संस्था थी तो भारत छोड़ो आंदोन में हिंसा क्यों हुई? इसका साधारण जवाब है कि यह आंदोलन काफी व्यापक था। इसमें शहरों व गांवों के प्रत्येक वर्ग ने भाग लिया। इस आंदोलन के प्रमुख नेताओं को पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया। इसलिए आंदोलन सही ढंग से नहीं चल पाया व इसमें किसान व मजदूर वर्ग ने पहले की अपेक्षा काफी बढ़–चढ़कर भाग लिया। अतः इस वर्ग ने सरकार की हिंसा का जवाब हिंसा से दिया जोकि आवश्यक भी था।[67]

अतः हम संक्षेप में कह सकते हैं कि 'भारत छोड़ों आंदोलन' कोई उपलब्धि प्राप्त किए बिना ही असफल हो गया। हरियाणा में इसका प्रभाव लोगों के राजनैतिक जीवन पर पड़ा। जैसे ही हरियाणा में युनियनिस्ट पार्टी मजबूत हो गई विद्यार्थियों के समुदाय कमजोर हो गए।

पाद टिप्पणी

1. विपिन चन्द्र व अन्य, *भारत का स्वतंत्रता संघर्ष,* पृ॰ 437
2. अरूणा चन्द्र बुआन, *दि क्विट इंडिया मूवमैंट : दि सैकेण्ड वर्ल्ड वार एंड इंडियन नेशनलिज्म,* दिल्ली, 1975, पृ॰ 3
3. सिंह प्रताप, आधुनिक भारत (1906—1950), नई दिल्ली, पृ॰ 74, पृ॰ 707—737 (विस्तार से) आर॰सी॰ मजूमदार, 'स्ट्रग्ल फॉर फ्रीडम, मुम्बई, 1969, वॉल्यूम—2, पृ॰ 707—737
4. स्टैफोर्ड क्रिप्स उस समय इंग्लैंड में कैबिनेट मंत्री थे। वह विपक्ष में लेबरपार्टी के नेता थे। वे 22 मार्च 1942 को भारत आए थे।
5. पामदत्त रजनी, *आज का भारत,* मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, दिल्ली—1977, पृ॰ 565—566
6. सैन, एस॰एन॰, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया, (1857—1957), दिल्ली—1997, पृ॰ 291
7. पूर्वोक्त, सिंह प्रताप, आधुनिक भारत, पृ॰ 75
8. शुक्ला, एस॰पी॰, *इंडियन फ्रीडम स्ट्रगल एंड द रोल ऑफ हरियाणा,* नई दिल्ली, 1985, पृ॰ 92 (91—127 पर विस्तार से देखे)
9. चन्द्र जगदीश, फ्रीडम स्ट्रगल इन हरियाणा, कुरुक्षेत्र, 1982, पृ॰ 109
10. जुनेजा, एम॰एम॰, *हरियाणा केसरी : पंडित नेकीराम शर्मा,* पृ॰ 48
11. पूर्वोक्त, चन्द्र जगदीश, पृ॰ 74, एस॰एल॰ मित्तल, हरियाणा : ए हिस्टोरिक्ल प्रोस्पैक्टिव, पृ॰ 138
12. पूर्वोक्त, मजूमदार, आ॰सी॰, भाग—3, पृ॰ 608
13. जाखड़, रामसिंह, हरियाणा के राजनैतिक इतिहास की झलक, रोहतक, 1996, पृ॰ 101
14. खण्डेलवाल, श्री कृष्णकुमार, *हरियाणा साइकोपीडिया,* पृ॰ 396
15. जाखड़, रामसिंह, स्वतंत्रता संग्राम में हरियाणा का योगदान, पृ॰ 89, देवीशंकर प्रभाकर, पृ॰ 260
16. हरियाणा तिलक, (अक्तूबर—दिसम्बर) 1940—1941, जगदीश चन्द्र, महात्मा गांधी व हरियाणा, नई दिल्ली, 1977
17. हरिजन, अहमदाबाद 19—24 अप्रैल 1942, पृ॰ 169
18. चन्द्र, जगदीश, *दि क्लैक्शन वर्क ऑफ महात्मा गांधी,* भाग—76, पृ॰ 392, ताराचंद, *भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास,* भाग—4, पृ॰ 439

19. पट्टाभि, सीतारमैय्या, *कांग्रेस का इतिहास,* भाग–2, पृ० 436
20. सिंह, प्रतापसिंह, *आधुनिक भारत,* पृ० 82
21. वही, चन्द्र विपिन, पृ० 441; डी०एन०पनग्राही, *क्विट इंडिया मूवमेंट एंड दी स्ट्रगल ऑफ फ्रीडम,* विकास पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1984, पृ० 70–71
22. चन्द्र, जगदीश, *दि क्लैक्शन वर्क ऑफ महात्मा गांधी,* वाल्यूम–76, पृ० 392; वही, डी०एन० पनग्राही, पृ० 70–71
23. तेंदुलकर, डी०जी०, पूर्व उद्धृत, खण्ड–6, 1962, संस्करण, पृ० 150–151, वही, दी क्लैक्शन वर्क ऑफ महात्मा गांधी, पृ० 393–396
24. होम डिपार्टमेंट पोलिटिक्ल, 18/8/1942, (आधे अगस्त), मल्होत्रा, एस०एल०, सविनय अवज्ञा से भारत छोड़ों आंदोलन तक, पृ० 145, चण्डीगढ़, 1979
25. ताराचंद, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, भाग–4, पृ० 439
26. पूर्वोक्त, विपिनचन्द्र व अन्य, पृ० 442
27. जाखड़, रामसिंह, स्वतंत्रता संग्राम में जिला रोहतक का योगदान, रोहतक, 1966, पृ० 205–206
28. वही, पृ० 207
29. वही, पृ० 208
30. यादव, के०सी०, *हरियाणा का इतिहास,* भाग–3, पृ० 190
31. शुक्ला, एस०पी०, *इंडियन फ्रीडम स्ट्रगल एंड दि रॉयल ऑफ हरियाणा,* नई दिल्ली, 1985, पृ० 141
32. वही, पृ० 140–141
33. जुनेजा, एम०एम०, *हरियाणा केसरी पंडित नेकीराम शर्मा,* पृ० 104–105
34. पतराम वर्मा, पत्रकार, *अमरगाथा कोश, स्वतंत्रता संग्राम में हिसार का योगदान,* हिसार, 1982, पृ० 29
35. मित्तल, एस०ई०, *ए हिस्टोरिक्ल प्रोस्पैक्टिव,* पृ० 129
36. वही, पतराम वर्मा, *अमरगाथा,* पृ० 29
37. यादव, बी०डी०, *फ्रीडम स्ट्रगल इन हरियाणा एंड दी रोल ऑफ चौधरी रणवीर सिंह,* पृ० 173
38. वही, जाखड़ रामसिंह, *स्वतंत्रता आंदोलन में हरियाणा का योगदान,* पृ० 91
39. हरिजन सेवक, 1 अगस्त 1993, पृ० 55–60 (विस्तार से के०सी० यादव की बुक हरियाणा रोल इन 1942 में है)
40. होम डिपार्टमेंट, फाईल नं० 18/11/1942 पंजाब
41. दि ट्रिब्यून, 22 अक्तूबर, 1942

42. वही, 14 अगस्त 1942
43. रल्हन, ओ॰पी॰, *हरियाणा शिरोमणि पं॰ नेकीराम शर्मा,* पृ॰ 248
44. पूर्वोक्त, जाखड़, रामसिंह, पृ॰ 108
45. यादव, के॰सी॰, मार्डर्न इण्डिया : हिस्ट्री एंड कल्चर, पृ॰ 196
46. यादव, के॰सी॰, हरियाणा रोल इन 1942 मूवमेंट, हरिजन सेवक, 1 अगस्त 1993, पृ॰ 55—60
47. पूर्वोक्त, के॰सी॰ यादव, पृ॰ 197
48. वही, पृ॰ 197
49. जाखड़, रामसिंह, *हरियाणा के राजनैतिक इतिहास की झलक,* पृ॰ 110
50. दि ट्रिब्यून, 20 अगस्त 1942
51. शुक्ला, एस॰पी॰, *इंडियन फ्रीडम स्ट्रगल एंड दि रोल ऑफ हरियाणा,* पृ॰ 142
52. दि ट्रिब्यून, 21 अगस्त 1942
53. वही, 27 अगस्त 1942
54. हरिजन सेवक, 18 अगस्त 1993, एस॰सी॰ मित्तल, पृ॰ 139
55. दि ट्रिब्यून, 11 अगस्त 1942, वही, यादव, बी॰डी॰, पृ॰ 178
56. जैदी, ए॰ मुईन, *दि वे आउट टू फ्रीडम : इन इन्क्वायरी इन टू द क्विट इंडिया मूवमेंट कन्डक्ट वाई पार्टीसिपेट,* ओरियन्टालिया, नई दिल्ली, 1973, पृ॰ 91
57. चन्द्र जगदीश, फ्रीडम स्ट्रगल इन हरियाणा, पृ॰ 164
58. वही, पृ॰ 111
59. ताराचन्द, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, वॉल्यूम 4, पृ॰ 439
60. जगदीश चन्द्र, पृ॰ 111
61. अम्बाप्रसाद, *दि इंडियन रिवोल्ट ऑफ 1942,* दिल्ली, 1958, पृ॰ 43
62. शर्मा, श्रीराम, *हरियाणा शिरोमणि पंडित नेकीराम शर्मा,* पृ॰ 246
63. वही, चन्द्रतारा, भाग—4, पृ॰ 456
64. सैन, एस॰एन॰, पृ॰ 302—303, यादव, बी॰डी॰, पृ॰ 194
65. पूर्वोक्त, अम्बाप्रसाद, पृ॰ 47
66. यादव, बी॰डी॰, पृ॰ 180
67. यादव, के॰सी॰, हरियाणा का इतिहास, भाग—3, पृ॰ 191

दूरस्त शिक्षा में तकनीकी का योगदान

डा0 (श्रीमती) अंजू लता
प्रवक्ता शिक्षाशास्त्र
राजकीय महिला महाविद्यालय, झाँसी (उ0प्र0)

भारत में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात बदली हुई सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों में शिक्षा की मांग तो बहुत तेज गति से बढ़ी परन्तु परम्परागत शिक्षा प्रणाली में तदनरूप पर्याप्त वृद्धि होने के कारण यह प्रणाली बढ़ती हुई शैक्षिक आवश्यकता तथा मॉग की पूर्ति करने में पूर्णरूप से असमर्थ सिद्ध हुई। प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में जनसाधारण की शैक्षिक मॉग की अवहेलना करना कदापि संभव नही था। परिणामतः शिक्षाविदों व शैक्षिक प्रशासनकर्त्ताओं ने परम्परागत शिक्षा के ऐसे विकल्प की खोज प्रारम्भ करने का प्रयास किया जो न केवल अल्प संसाधनों से चलाई जा सके वरन् एक साथ बहुत अधिक संख्या वाले शिक्षार्थियों को कम लागत में शिक्षा देने में समर्थ हो। इस विचार विमर्श के परिणाम स्वरूप पत्राचार शिक्षा नाम की शिक्षा प्रणाली अपनाया गया जो बाद में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के रूप में विख्यात हुई। दूरस्थ शिक्षा वस्तुतः सूचना एवं प्रौधोगिकी की आधारित शिक्षा है जो सूचना व संचार प्रौधोगिकी की आधुनिकतम प्रविधियों का प्रयोग करके जन शिक्षा के स्वप्न को साकार कर रही है। सूचना और संचार की नवीन व आधुनिक प्रविधियों ने इस चुनौती का समाधान करने के प्रयासों में महत्वपूर्ण सहायता की।

मुक्त शिक्षा प्रणाली प्रचार एवं प्रसार हेतु दूरस्थ शिक्षा परिषद के गठन की मंशा को 1992 में उस समय मूल रूप मिला जब इंदिरा गॉधी मुक्त विश्वविद्यालय के अन्तर्गत एक संवैधानिक निकाय के रूप में दूरस्थ परिषद का कार्य राष्ट्र में मुक्त विद्यालय एवं विश्वविद्यालय दूर शिक्षा संस्थाओं का एक ऐसा संजाल फैलाना है जो कार्यक्रमों, सुविधाओं में परस्पर समानता पर आधारित एवं समन्वयात्मक विकास पर आधारित है इस शिक्षा में यह परिषद सतत् प्रयत्नशील है। पाठ्यचर्या तथा स्थानीय भाषा में अनुदेशन विधियों में एकरूपता एवं छात्र मूल्यांकन में एकरूपता लाने हेतु दूरस्थ शिक्षा परिषद तल्लीन है जिससे देश के राज्यों में स्थित मुक्त विद्यालयों/विश्वविद्यालयों में एक रूपता का दर्शन हो। दूर शिक्षा परिषद शोध, कार्य को बढावा एवं राष्ट्र के विविध मुक्त विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों को विकासात्मक कार्यों में अनुदान देने का भी कार्य करेगा।

दूरस्थ शिक्षा आज शैक्षिक प्रणाली का एक अभिन्न अंग ही नही बल्कि एक स्वतन्त्र और महत्वपूर्ण अनुशासन है। यह एक मात्र ऐसी व्यवस्था है जो 21 वीं सदी की आवश्वकताओं को पूर्ण कर सकती है। कुछ वर्षों पहले तक दूरस्थ शिक्षा, औपचारिक शिक्षा की सहवर्ती या पूरक

व्यवस्था मानी जाती थी, लेकिन 21 वीं सदी के पदार्पण के साथ ही दूरस्थ शिक्षा अपने अभिनव स्वरूप के साथ उभरी है, इसका अस्तित्व अब स्वतन्त्र हो गया है। दूरस्थ शिक्षा अपनी अन्तर्निहित गुणवत्ता के कारण तथा पारस्परिक शिक्षा से भिन्न होने के कारण बर्तमान परिदृश्य में अधिक उपयोगी और कारगर सिद्ध हो रही है। पिछले पॉच दशकों में दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व तथा सर्वतोन्मुखी विकास हुआ है।

दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था भारतीय समाज के लिए एक सुअवसर है। यह शिक्षा औपचारिक अनौपचारिक तथा औपचारिकेत्तर के शिक्षा लक्षणों का सम्मिलित रूप है। दूरस्थ शिक्षा के विकास के साथ–साथ दूरस्थ शिक्षा के अर्थ में भी परिवर्तन होता रहा, जैसे कि प्रारम्भ में सन् 1850 से 1870 तक पत्राचार शिक्षा थी। सन् 1970 से 1990 तक मुक्त शिक्षा कहा जाने लगा। सन् 1990 के पश्चात यह कम्प्यूटर पर आधारित शिक्षा या वरचुअल शिक्षा कहलाने लगी है। वर्तमान समय में यह इण्टरनेट शिक्षा, बेब की सहायता से शिक्षा या ऑनलाइन एजूकेशन का रूप लेती जा रही है।

दूरस्थ शिक्षा का प्रमुख आधार 'संचार माध्यम' है। आधुनिक समय में दूरस्थ शिक्षा 'बहु संचार' माध्यमों पर आधारित हो रही है। यह शिक्षा व्यवस्था, मुद्रित माध्यमों संचार माध्यमों रेडियो, टी0वी0, ऑडियो तथा बहुसंचार माध्यमों का संयुक्त प्रयोग कर अधिगमकर्ता को मानसिक रूप से जोड़कर शिक्षण अधिग सुचारू रूप से चलाने की व्यवस्था है, यह व्यवस्था विद्यार्थी को कठोर औपचारिक नियमों और समय सीमा में नही बांधती है। यह समूह अधिगम के स्थान पर व्यक्तिगत अधिगम पर अधिक बल देती है। इस शिक्षा व्यवस्था में शिक्षण माध्यमों या हार्डवेयर का इतना महत्व नही है जितना कि प्रयुकत होने वाली शिक्षण सामग्री या साफटवेयर की गुणवत्ता उनका स्पष्ट और ग्राहय प्रस्तुतीकरण तथा विषयवस्तु की उपयोगिता आदि है।

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में अमुद्रित माध्यम वे इलेक्ट्रानिक साधन है जो शिक्षण अधिगम की प्रभावशीलता में वृद्धि करते है। मुक्त अधिगम प्रणाली में निम्नलिखित अमुद्रित माध्यमों प्रयुकत किए जाते है–

1. श्रव्य साधन – रेडियो, टेपरिकॉर्डर, टेलीफोन
2. दृश्य साधन– चाट, नक्शा, मॉडल, स्लाइड, फिल्म, स्ट्रिप प्रोजेक्टर, ओवर हेतु प्रोजेक्टर, एपीडायस्कोप
3. दृश्य–श्रव्य साधन – टेलीविजन कम्प्यूटर, विडियो टैक्स्ट, विडियोडिस्क, टेलीकान्फ्रेन्सिग इण्टरनेट आदि।

दूरस्थ शिक्षा के श्रव्य दृश्य साधनों में कम्प्यूटर सर्वाधिक विख्यात एवं सरल तकनीकी माना जाता है इसकी ग्राहयता के कारण ही वर्तमान युग को 'कम्प्यूटर युग' कहा जाता है। ''कम्प्यूटर वह स्वचालित इलेक्ट्रोनिक मशीन है, जो सूचनाओं को ग्रहण करता है, उनका

संचयन करता है, उनको संसाधित करता है तथा परिणाम देता है और स्नेह पुनः प्राप्त भी कर सकता है।''

कम्प्यूटर की सहायता से अनुदेशन Computer Assisted Instruction CAI में कम्प्यूटर से जुड़ी विभिन्न तकनीकी दूरस्थ शिक्षा हेतु अत्यन्त उपयोगी है जैसे इटरनेट के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व के कम्प्यूटर का विशाल समूह आपस में इस प्रकार से एक दूसरे से जुडे Linked रहते है जिससे कि उपयोग कर्ता तथा कम्प्यूटर स्वयं आपस में सूचनाओं का आदान–प्रदान कर सकते है।

इण्टरनेट से जुड़े कम्प्यूटर होस्ट भी कहलाते हैं प्रोटोकाल्स एक प्रकार का कोड है जिसका प्रयोग इंटरनेट के लिए डेटा सूचनाओं के आदान–प्रदान के लिए होता है। वर्तमान में हाइपर टैक्स्ट ट्रांसपोर्ट प्रोटोकाल्स (HTTPs) का प्रचलन अधिक है जिसके द्वारा दूरस्थ शिक्षा में इण्टरनेट सूचना का आदान प्रदान संभव है। इसके अतिरिक्त GOPHER,MOSAIC, TELNEL तथा FTP का प्रयोग भी होता है।

डोमेन नेम सिस्टम (MONAIN NAME SYSTEM) इन्टरनेट से जुड़े प्रत्येक को एक पता आबन्टित है यह अंको का शब्दों में कम्प्यूटर को एक पता आबन्टित है यह अंको या शब्दों में कम्प्यूटर का एक परिचय होता है। यह पता आवन्टन प्रणाली ही डोमेन नेम सिस्टम कहलाता है।

वर्ल्ड वाइड वेब (WWW) दूरस्थ शिक्षा में वेब एक मील का पत्थर है जिसका उद्देश्य इण्टरनेट पर स्वतन्त्र पूर्वक सूचनाओं को उपलब्ध कराना है। यह एक प्रकार का हाइपर मीडिया इनफार्मेशन सिस्टम है जिसमें कम्प्यूटर के स्कीन पेज पर प्रतीकात्मक इमेज (VIRTUAL IMAGE) को सामग्री (TEXT) ग्राफिक्स Graphis, श्रव्य AUDIO तथा दृश्य Video के साथ संयुक्त रूप से प्रस्तुत करता है।

इन्टरनेट, ब्राउसर (Internet Browser) वेब तक पहुचने के लिए एक सॉफअवेयर या तकनीकी का प्रयोग होता है जिसे इण्टरनेट ब्राउसर कहते है। यह तकनीकी दूनिया की किसी भी सूचना को ढूॅढ सकता है और उपयोग कर्ता को उपलब्ध करा सकती है।

यूनीवर्सल रिसोर्स लोकेटर (URL) के माध्यम से उपयोगकर्ता अपनी विषय सामग्री को इंटरनेट पर ढूंढ सकता है, क्योकि यह उस वेबसाइट का पूरा पता और सन्दर्भ होता है। यह दूरस्थ शिक्षा हेतु वरदान है।

वर्तमान में दूरस्थ शिक्षा में कम्प्यूटर द्वारा प्रबन्धित संचार तकनीकी का प्रयोग हो रहा है जिससे कि आज दूरस्थ शिक्षा समय और स्थान पर निर्भर नही। सी.एम.सी. के द्वारा दूरस्थ्य शिक्षा हेतु विद्यार्थी और शिक्षक के बीच तीव्र गति से सम्प्रेषण संभव है। सूचना व तकनीकी

आई.सी.टी. ने भी दूरस्थ्य शिक्षा में अधिगम प्रक्रिया की सहायता के लिए असमयकालीन अतक्रियात्मक विधियों के प्रयोग के लिए उत्प्रेरित किया है जैसे अपनी बुद्धि से निजी बुद्धि से निजी शिक्षण करना Intelligent tutoring, इण्टरनेट के माध्यम से पाठ्यवस्तुओं को आपस में तथा विभिन्न लोकेशन्स पर विद्यार्थियों को आपस में तथा शिक्षण के साथ अनुक्रिया करना।

इसी क्रम में वर्तमान में दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में आई.सी.टी. के अत्यन्त नवीन साधनों के प्रयोग का प्रचलन अत्यन्त तीव्रगति से नई पीढी मे चल रहा है। यह तकनीकी बहुत ही उन्नत है जैसे कि विडियो डेस्कऑप तथा वरचुअल कक्षाएं आदि। अत्यधिक लचीली अधिगम विधियों का प्रयोग जैसे ही अतंक्रियात्मक बहु–संचार माध्यम(Interactive multi Media), इण्टरनेट द्वारा शिक्षण सामाग्री की प्राप्ति तथा कम्प्यूटर के माध्यम से सम्प्रेषण (Computer Mediated Communication) आदि। इसके अतिरिक्त दूरस्थ शिक्षा ई–लार्निग (E-Learning) और आन लाईन लर्निग में हो रही है जिससे अन्तर्गत सी.एम.सी., ई–मेल, फाइल ट्रान्सफर File Transfer आदि का प्रयोग हो रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्ध – डॉ0 राजीव मालवीय
2. भारतीय आधुनिक शिक्षा– एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, अक्टूबर, 2005
3. भारतीय शिक्षा में उदीयमान प्रवृत्तिया – डॉ0 प्रतिभा उपाध्याय
4. योजना, सूचना प्रौधोगिकी तथा विकास– फरवरी –1999
5. शिक्षक अभिव्यक्ति– शिक्षा संकाय, इंडिया पी.जी. कालेज इलाहाबाद अंक–7, 2008

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

हिन्दी तथा छत्तीसगढ़ी में हास्य–व्यंग्य (विमर्श)

डॉ. सत्येन्द्र कुमार कश्यप
सहायक प्राध्यापक हिन्दी
शासकीय लक्ष्मणेश्वर महाविद्यालय, खरौद
जिला–जांजगीर चाम्पा (छ.ग.)

अंग्रेजी में बहुत प्रचलित एक शब्द हैं 'सैटायर' हिन्दी के व्यंग्य शब्द से यही अर्थ ध्वनित होता है जो 'सैटायर' से इसका विकास लैटिन भाषा के 'सैतूरा' शब्द से हुआ है। पुराने जमाने में 'सैतूरा' शब्द का आशय 'पर निंदा' से लिया जाता था। आज 'सैटायर' शब्द का प्रयोग 'व्यंग्य' शब्द से ध्वनित होता है। राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक विभिन्न प्रकार की विसंगतियों पर कुठाराघात करते हुए उन्हें सामाज से दूर करनें का प्रयास करना, सामाज में फैले हुए असंतुलन को हटाकर सुधारने की कोशिश ही व्यंग्य हैं। भारतीय मनीषियों में विकृति एवं अनौचित्य को हास्य का हेतु माना है। व्यंग्य हास्य का प्रभेद है। हास्य व्यंग्य में एक मौलिक अंतर भी है, व्यंग्य में सुधार की सम्भावना रहती है। हास्य शुद्ध मनोरंजक होता है।

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में कबीर ने वैयक्तिक, सामाजिक तथा धार्मिक असंगति पर तीव्र प्रहार किया है। कबीर ने तत्कालीन जाति–पंति, हिन्दू मुस्लिम भेद, मूर्ति पूजा रूढ़िगत रीति रिवाज आदि सामाजिक बुराइयों पर तीव्र व्यंग्य किया है। उन्होने एक ओर हिनदुओं की धर्मान्धता पर व्यंग्य किया।

"मूड़ मुड़ाए हरि मिले तो सब कोई लेए मुड़ाए।
बर–बार के मूड़ते भेड़ न बैकुण्ठ जाए।"

तो दूसरी ओर मुसलमानों पर व्यंग्य करते हुए कहा है–

"दिन भर रोजा रखत है,राति हनत है गाय।
यह तो खून वह बंदगी, कैसे खुशी खुदाय।" (1)

व्यंग्य वक्रोक्तियों की असंख्य उक्तियों से भक्ति कालीन साहित्य भरा पड़ा हैं। सूरदास के भ्रमरगीत में मार्मिक व्यंग्य दृष्टिगत होते है।

"आए जोग सिखावन पाड़े।
परमारथी पुराननि लादे, ज्यौं बनजारे हॉड़े।
सूरदास तीनों नही उपजत, धनिया, धान, कुम्हाड़े।" (2)

आधुनिक युग में व्यंग्य विधा का सूत्रपात भारतेंदु हरिश चंद्र से होता है। 1881 में लिखित 'अन्धेर नगरी' बिहार प्रांत के किसी जमींदार पर लक्षित एक प्रचलित

लोकोक्ति “अन्धेर नगरी चौपट्ट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा।” ‘अंधेर नगरी‘ नाटक में उस अतीत कालीन अंग्रेजी सत्ता पर व्यंग्य है जो प्रजा का अनादर और तिरस्कार करती है। ‘अंधेर नगरी‘ का द्वितीय दृश्य के सभी पात्र व्यंग्य के माध्यम से विभिन्न सरकारी मिशनरी के प्रतीक बन जाते है। कुजड़िन सब्जी बेचते-बेचते अंत में जब यह कह देती है। जैसे ‘काजी वैसे पाजी‘ ले हिन्दुस्तान का मेवा फूट और बैर।‘ तो सारा सब्जी बाजार व्यंग्यात्मक अर्थ की व्यापकता में बदल जाता है।

सरकारी अफसरों की रिश्वत खोरी और अंग्रेज शासकों पर व्यंग्य करते हुए चूरन वाला कहता है।-

चूरन अमले सब जो खावै। दूनी रिश्वत तुरंत पचावै।।
चूरन साहेब लोग जो खाता। सारा हिन्द हजम कर जाता।।

धर्म और जाति पर व्यंग्य के साथ ही देश की यथार्थ स्थिति पर भी करारा व्यंग्य ”अंधेर नगरी“ में किया गया है-

सेत-सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास।
ऐसे देश कुदेश में, कबहु न कीजे बास।। (3)

छत्तीसगढ़ी कविताओं में हास्य व्यंग्य के प्रादुर्भाव का श्रेय कुँज विहारी चौबे तथा पं. द्वारिका प्रसाद तिवारी विप्र को जाता है। ‘विप्र‘ जी ने ‘ नवा बहुरिया‘ और लेड़गा लइका हास्य व्यंग्य प्रधान रचना है। विप्र ने विभिन्न चरित्रों को लेकर हास्य कविताओं का सृजन किया है। नयी बहु का वर्णन करते हुए विप्र ने लिखा है-

‘घर कुरिया एक करिन
खाईन-पिईन मेहराइन ओं
बघनिन बन के घर पहुंचिन
अउ भीतर ले गुर्राइन ओ।“ (4)

उपर्युक्त कविता में संस्कारी बाह्मण परिवार में नई बहू का आगमन जब पारिवारिक मान्यताओं को नष्ट कर देता है तब कवि ‘विप्र‘ जी को बहू ‘बघिन‘ जैसा प्रतीत होता है।

<u>शोषण विमर्शः</u>

हास्य व्यंग्य के कवि के रूप में स्व. कोदूराम दलित के नाम को भुलाया नहीं जा सकता कोदूराम दलित जी ने ‘छत्तीसगढ़ियों के शोषण की अभिव्यक्ति हेंतु भी व्यंग्य को अस्त्र बनाया है। अमीर एवं गरीब के जिन्दगी की विसंगतियों की तुलना उनके ही शब्दों में -

भूखन मरथी हमन, ओ माल मलीहा खाथे।

मरकी अउ कुरेड़ा सही उनकर पेट बड़े हो जाथे।।

<u>चाय विमर्शः</u>

पं. श्यामलाल चतुर्वेदी के काव्य में हास्य व्यंग्य का पुट मिलता है। अंग्रेज चले गए लेकिन उनके अवगुणों को हम भुला नही सके और छत्तीसगढ़ में भी चाय संस्कृति पनपती चली गई। समकालीन चाय संस्कृति एवं दुष्परिणामों का सचित्र वर्णन-

”जब ले चाय के चलिस चलागन, लइकन होगे पोल्हवा।
ऊपर दिखते चिक्कन चांदन फेर भीतर ले सोल्हवा

पं. द्वारिका प्रसाद तिवारी ‘विप्र‘ ने ‘लेड़गा लइका‘ कविता में गाँव का साधरण बच्चा भी कैसी पैनी निगाह रख कर छींटे कसता है-

लेढ़वा लइका कहै ददा सो सहर के मनखे कतका इतराथै गा।
बासी मुँह मा बिसकुट खाथै, खटिया मा चहा मगाथै गा।।

छत्तीसगढ़ी लिखित साहित्य के अतरिक्त छत्तीगढ़ी के मौखिक साहित्य में भी चाय संस्कृति पर हास्य व्यंग्य दिखाई देता है-

”कृष्ण राज मा दूध दही अऊ रामराज मा घी।
कल जुग मा ‘चाहा‘ मिलत हे फूँक-फूँक के पी।।“

छत्तीसगढ़ी कविता में हास्य व्यंग्य की धारा और भी पल्लवित हो उठी प्यारे लाल देश मुख की कविताओं में आम आदमी की नियति भ्रष्टाचार, राजनैतिक व्यवस्था के प्रति आक्रोश तथा पंचायती राज व्यवस्था के प्रति आक्रोश और व्यंग्य का कितना सशक्त प्रयोग हुआ है-

<u>शोषण विमर्शः</u>

”गदहा हा घोड़ा के घुड़सार मा बधावत हे।
पंचायती राज मा गंज मजा आवत हे।
भोकवा के मुड़ी मा पागा बंधावत हे।
एमें अऊ बियें वाले पतरी ला उठावत हे।“ (5)

<u>गली-गलौज विमर्शः</u>

भारतीय संस्कार परम्परा में विवाह गीतों के माध्यम से मनोरंजन प्रधान ‘गाली‘ गायी जाती है। छत्तीसगढ़ी में भी ‘गारी‘ का व्यंग्य हास्य विनोद पूर्ण ही रहता है। बडा शोर था कि कमल फूल जैसें सुन्दर सलोने बराती आ रहे है किन्तु यहां तो नगाडे के समान थाती, सूप जैसे कान तथा घोड़े जैसे मुँह, ऊँट जैसे मुँह वाले बराती आ रहे हैं।

घराती और बराती दोनों एक दूसरे पर किचड़ उछाल कर खूब मजा लेते है।

"राती-राती आए बरतिया दिखै कँवल के फूल हो।
डफडा बरोबर छतिया दिखत हे, घोडा बरन तोर मुँहहो।
सूप बरन तोर कान दिखत हे, ऊँट बरन तोर मुड़ हो।।" (6)

छत्तीसगढ़ में प्रचलित राउत दोहों में जहाँ शौर्य का भाव है। वही हास्य व्यंग्य भी परिलक्षित होता है। अपने अस्तित्व का भाव प्रत्येक मनुष्य, जाति, समाज और देश को गौरवान्वित कर देता है। सुन्दर देह वाली नायिका का सौन्दर्य वर्णन प्रायः सभी को भाया है किन्तु अपूर्ण अंगो वाली नायिका का सौन्दर्य वर्णन प्रायः कम देखने को मिलता है-

<u>विकलांग विमर्शः</u>

कानी आँखी म काजर आजे, बूची कान म ढार हो।
खोरी गोड़ म चूरा पहिर के, ठूमकत चलय बजार हो।।

मनवीय जीवन में व्याप्त लोभ, लिप्सा एवं उसके परिणामों पर एक हास्य व्यंग्य दोहा दृष्टव्य है-

<u>लोभ विमर्शः</u>

"टेंगना के सुसकी सुखोवय, कोकड़ा बिन-बिन खाये रे।
टोटा म गड़गे फास, करेर-करेर नरियाय रे।" (7)

लोक गीतों में हास्य और व्यंग्य की जुगल बंदी है। वस्तुतः लोक गीतों का उदेश्य शिक्षा और मनोरंजन के साथ एक मानव के परिष्कार की गाथा है। लोक गीतों में व्यंग्य सहज रूप में प्राप्य है।

संदर्भः-

(१) कबीर ग्रंथावली पृ.-75
(२) सूर सागर पृ.-188
(३) अंधेर नगरी चौपट राजा-गिरीश रस्तोगी पृ.-10
(४) विप्र अभिनंदन ग्रंथ पृ.-15, 16
(५) छत्तीसगढ़ी साहित्य अऊ साहित्यकार पृ.-120, 80, 40
(६) हिन्दी लोक साहित्य में हास्य व्यंग्य पृ.-125
(७) मड़ई अंक-1987, पृ.-88,89,90

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

अध्यापक शिक्षाः मूल्य शिक्षा हेतु पाठ्य सहगामी कियायें

डा0 (श्रीमती) अंजु लता
असिस्टेण्ट प्रोफेसर– शिक्षाशास्त्र
राजकीय महिला महाविद्यालय, झाँसी (उ0प्र0)

शिक्षा में जब हम मानवी मूल्यों की बात करते है तो ऐसा लगता है कि 'शिक्षा' और 'मूल्य' दो अलग–लगता है जिन्हें हम जोड़ने का प्रयास कर रहे है परन्तु यदि गहराई से देखा जाए तो मानवीय मूल्यों का उचित विकास करना ही वास्तविक शिक्षा है। मूल्य शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कहा गया है कि ''हमारे बहुवर्गीय समाज में शिक्षा को सर्वव्यापी एवं शाश्वत' मूल्यों को प्रात्साहित करना चाहिये ताकि भारतीय जनता में राष्ट्रीय एकता बढ़े और संकीर्ण सम्प्रदायवाद, जातिवाद, धार्मिक कट्टरता, हिंसा अधं विश्वास एवं भाषावाद को समाप्त किया जा सके।''

राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा के अनुसार उपरोक्त सर्वव्यापी मूल्य हमारे संविधान में भी निहित है। ये मूल्य हैं– बंधुत्व, समानता, स्वतन्त्रता, समाजवाद, जनतन्त्र एवं धर्म निरपेक्षता। इन मूल्यों को सिखाने के लिए शिक्षा के 'भावात्मक पक्ष' पर बल देने की बात कही गयी है। वास्तव में मूल्यों की उचित शिक्षा द्वारा ही हम संविधान में निहित, राष्ट्रीय एकता, अखण्डता तथा विश्व बन्धुत्व की कल्पना को साकार कर सकते है।

अब प्रश्न यह उठता है। कि इन मूल्यों की शिक्षा किस प्रकार दी जाए? और उसे कौन प्रदान करें? चूँकि सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया में अध्यापक का स्थान सर्वोपरि है अतः यह महान उत्तरदायित्व अब हमारे वर्तमान और भावी शिक्षकों के कंधों पर है। शिक्षक किसी भी समाज का निर्माता और पथप्रदर्शन होता है। अतः शिक्षकों को प्रत्येक स्तर पर मूल्य परक शिक्षा प्रदान करने का महत्वपूर्ण धर्म निभाना होगा।

परन्तु इस महत्वपूर्ण कार्य को करने वाले शिक्षकों में स्वयं मानवीय मूल्यों और गुणों का होना आवश्यक है क्योंकि शिक्षक जब मूल्यों, आदर्शों, नैतिकता की बात करता है तो सर्व प्रथम उसे स्वयं को एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करना होता है।

इस सदंर्भ में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को मूल्योन्मुख बनाना मूल्य परक शिक्षा प्रदान करने हेतु एक सार्थक कदम होगा। अतः प्रत्येक अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों का यह महान उत्तरदायित्व है कि वे ऐसे शिक्षकों का निर्माण करें जो भावी समाज और राष्ट्र का आर्दश बन सके।

कहा जाता है कि '' Value can be Caught, not to be tought” अर्थात् मूल्य ग्रहण किये जा सकते है पढ़ाए नहीं जा सकते। इस दृष्टिकोण से अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में आयोजित

होने वाली पाठ्य सामग्री क्रियाओं द्वारा छात्राध्यापाकों में वांछित सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सौन्दर्य मूल्यों का उचित विकास किया जा सकता है जिसका उपके जीवन पर स्थायी प्रभाव पड़ेगा तथा वे राष्ट्र के सुदृढ़ भविष्य का निर्माण करने में सफल होगें।

मूल्य अभिमुख अध्यापक शिक्षा में पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अन्तर्गत निम्नलिखित क्रियाएं कराई जा सकती है।

1. प्रशिक्षण संस्थानों में प्रातः कालीन ईश्वर वन्दना अथवा प्रार्थना के उपरोक्त विभिन्न धर्मों के सार अथवा उपदेश को उनके समक्ष प्रस्तुत किए जा सकती है। प्रत्येक दिन अलग–अलग धर्मों की प्रार्थना करायी जाए और उनमें निहित धार्मिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को उनके सामने उदाहरणों की सहायता से व्याख्यायित की जाए।
2. प्रातः कालीन सभ के दौरान महान पुरूषों और संतो गौतम बुद्ध, विवेकानन्द, टैगोर दयानंन्द सरस्वती, राम कृष्ण, कबीर, नानक आदि के जीवन के प्रेरक प्रसंगों, संस्मरणों एवं चरित्रिक गुणों और इनके त्यागमय गौरव गाथाओं पर चर्चा करके, उनमें नैतिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है।
3. प्रशिक्षण संस्थानों में विभिन्न राष्ट्रीय उत्सवों जैसे 15 अगस्त, 26 जनवरी और 2 अक्टूबर का आयोजन करते समय। इन उत्सवों से जुड़े घटनाक्रमों और स्वतन्त्रता संग्राम की घटना पर चर्चा करके अथवा रंगमंच पर नाटक आयोजित किये जा सकते है तथा देश प्रेम की भावना को विकसित करने का प्रयास किया जा सकता है। भारतीय शहीदों के बलिदान की जानकारी देकर छात्राध्यापकों को त्याग और कर्तव्य की भावना का विकास किया जा सकता है।
4. महापुरूषों की जयन्तियों जैसे गॉधी जयन्ती, गुरूनानक जयन्ती, महावीर जयन्ती के आयोजन के समय इनके जीवन से जुडी महत्वपूर्ण घटनाओं और कार्यो पर प्रकाश डालते हुये इनके सद्गुणों जैसे गॉधी जी का सत्य, प्रेम, अहिंसा का संदेश, गुरूनानक की सहिष्णुता और महावीर की जितेन्द्रियता पर व्याख्यान और उदाहरण देकर छात्राध्यापकों में उपरोक्त मानवीय मूल्यों का विकास किया जा सकता है।
5. समय–समय पर प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सांस्कृतिक एवं साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जा सकता है जैसे वाद–विवाद प्रतियोगिता, शिल्प प्रतियोगिता, निबंध लेखन, काव्य सम्मेलन, गायन–वादन लोक नृत्य, लोकगीत नाटक आदि। इन सभी कार्यक्रमों की विषम सामग्री आदर्शोन्मुख बनाकर उनमें सहिष्णुता, भाईचारा, एकता, सहयोग श्रम और सौन्दर्य मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

6. प्रशिक्षण संस्थानों में जिला स्तर एवं राज्य स्तर पर प्रतियोगिता का आयोजन किया जा सकता है। इन प्रतियोगिताओं का आयोजन निष्पक्ष भाव से होना चाहिये। खेलकूद के आयोजन द्वारा छात्रध्यापकों में स्वास्थ्य मूल्य, प्रजातांत्रिक मूल्य अनुशासन, सहयोग, नेतृत्व, हार जीत के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण जाग्रत किए जा सकते है।
7. विभिन्न प्रकार के सामुदायिक एवं समाज सेवा के कार्यक्रमों जैसे स्काउटिंग, एन0सी0सी0, एन0एस0एस0, रोवर रेंजर, रेडक्रास प्रशिक्षण कार्यक्रम एवं साक्षरता अभियान, समाज सेवा अभियान, सफाई अभियान का आयोजन करके छात्राध्यापकों में समीपता, भाईचारा, सहकारिता, सह अस्तित्व, स्वच्छता, सेवा भाव और एकता की भावना को प्रोत्साहित किया जा सकता है। एन0सी0सी0 और एन0एस0एस0 प्रशिक्षण द्वारा उनमें समय से कार्य करने और कार्य व्यवस्था तथा नेतृत्व करने के गुणों का विकास किया जा सकता है।
8. समय–समय पर वृक्षारोपण वन महोत्सव पौधों और पुष्पों की प्रर्दशनियों का आयोजन द्वारा उनमें पर्यावरण संरक्षण व सौन्दर्य मूल्यों का विकास किया जा सकता है।
9. छात्राध्यापकों को शैक्षिक भ्रमण हेतु ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक स्थलों पर ले जाया जा सकता है। और उन स्थलों के ऐतिहासिक महत्व और उनसे जुड़े विभिन्न तथ्यों की जानकारी दी जा सकती हैइसके अतिरिक्त भूकम्प पीड़ित क्षेत्रों बाढ़ पीड़ित क्षेत्रों, विकलां केन्द्रों, कृष्ठ आश्रमों, मलिन बस्तियों में उन्हें ले जाकर स्वयं उनके दुःख दर्द का अनुभव कराया जाय और राहत कार्यों में उनमें संवेदनशीलता दया, उदारता, सेवा आदि मानवीय मूल्यों का विकास किया जा सकता है।
10. पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अंतर्गत प्रशिक्षण केन्द्रों में शिक्षाप्रद फिल्में दिखाई जा सकती है जो प्रेम सामाजिक समस्या, पर्यावरण, वैज्ञानिक आभिष्कार, हिन्दु मुस्लिम एकता, धार्मिक साम्प्रदायिक सौहार्द पर आधारित हो। इससे भावी शिक्षकों में राष्ट्रप्रेम, साहस, सहिष्णुता, त्याग, पर्यावरण प्रेम आदि मूल्यों का विकास होगा।
11. समय–समय पर विभिन्न क्षेत्रों के विद्वानों को व्याख्यान हेतु बुलाया जा सकता है और मूल्य परक गोष्ठियों का आयोजन किया जा सकता है। विभिन्न मूल्यों और आदर्शों के विकास हेतु चर्चाएं परिचर्चाएं आयोजित करके उनके निष्कर्षों को व्यवहार में लाया जा सकता है।

12. 'मानव चेतना दिवस' का आयोजन करके शैक्षिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय समस्याओं पर चिंतन, और सामूहिक वार्तालाप किया जा सकता है और समस्या के समाधान का प्रयास किया जा सकता है। छात्राध्यापकों को मानवाधिकार की जानकारी दी जाए तथा मानवाधिकार के दुष्परिणामों का विश्लेषण करके उसका समाधान निकाला जा सकता है। इससे उनमें सामाजिक, सांस्कृतिक, प्रजातांत्रिक मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

इस प्रकार पाठ्य सहभागी क्रियाओं का आयोजन करते समय केवल उसके व्यावहारिक प्रयास पर ही ध्यान न देकर उनमें निहित मूल्यों और आदर्शों के पक्ष पर ध्यान देना आचश्यक है इसके अतिरिक्त अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षण दाताओं को अपने आदर्श व्यवहार और आचरण द्वारा समय की पाबंदी, अनुशासन, स्नेह वात्सल्य, समभाव प्रतिबद्धता, निष्पक्षता, समानता, सर्वधर्म समभाव की भावना और प्रशिक्षण संस्थानों के प्रजातात्रिंक वातावरण द्वारा भावी शिक्षकों में मानवीय मूल्यों का आरोपण सहजता से किया जा सकता है।

संदर्भ सूची

1. मूल्य शिक्षा के परिप्रक्ष्य– प्रो0 राम शकल पाण्डेय
2. भारतीय शिक्षा में उदीनमान प्रवृत्तियां – डॉ0 प्रतिभा उपाध्याय
3. शिक्षा सिद्धान्त– रमन बिहारी लाल
4. शिक्षा कल आज और कल– डॉ0 नरेश कुमार
5. भारतीय शिक्षा की नई दिशा– के0के0 वशिष्ट
6. शिक्षा समीक्षा– प्रो0 राम शकल पाण्डेय

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

लिंग असमानता–एक अध्ययन

इन्दुलता सिंह
शोधार्थी, समाजशास्त्र

भारतीय समाज में लिंग असमानता आदिकालीन विशेषता है। हमारे समाज में स्त्री को माँ देवी, शाक्ति सरस्वती का रूप देकर उसे समाज में उच्च स्थान दिया गया है। तो वही उसें डायन, सती, विधवा, बाल–विवाह द्रहेज कन्या–भ्रूण हत्या आदि का दंश भी सहना पड़ता है। हमारे समाज में अनेक महात्माओं ने जन्म लिया और स्त्री की दशा को सुधारने के लिए अनेकों यत्न किये किन्तु हमारी वैचारिक स्थिति में स्त्रियों के प्रति परिवर्तन न के बराबर ही हुआ हैं आज भी हमारे समाज में स्त्री जन्म अभिशाप बना हुआ है। और कन्या भ्रूण हत्या आम हैं आखिर यह कौन से कारण है जो हमारे समाज में स्त्री भेदभाव को मान्यता प्रदान करते है। आज भी हमारी मानसिकता में स्त्रियों के प्रति ज्यादा बदलाव नही आ पा रहे है। कभी–कभी ऐसा लगता है कि हम स्त्री के अधिकारों और समानता के प्रति केवल दिखावा करते है। स्त्री को अधिकारों रखकर ही पुरूष समान अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहता है।

स्त्री पुरूष में अंतर है इससे इनकार नहीं किया जा सकता। लेकिन एक श्रेष्ठ और दूसरा हीन है, यह मानना गैरबराबरी का सूचक हैं शारीरिक अंतर होना प्राकृतिक है जबकि सामाजिक और संस्कृतिक अंतर मनुष्य द्वारा निर्मित है।

इसी पृष्ठभूमि में हाल में घटी कुछ घटनाएँ ध्यान खींचती है। एक, महाराष्ट्र के शानि शिंगणापुर में एक महिला चार सौ साल पुरानी पंरपरा को तोड़ते हुए 28 नवंबर को रात मंदिर में प्रवेश कर गई और उसने शनि महाराज को तेल चढ़ाया। उसके इस कृत्य पर बवाल मच गया और भूमि को अपवित्र मानते हुए मंदिर प्रशासन ने शुद्धीकरण के तहत शनि प्रतिमा का दूध से अभिषेक किया और पूरे मंदिर को धोया। दो, उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर के एक गांव में एक महिला को भैंस चोरी के आरोप में पाँच जूते मारे गए और साठ हजार रुपये जुर्माना लगाया गया। तीन, केरल मे एक सुन्नी शिक्षाविद् ने कहा कि लैगिंक समानता ऐसी चीज है जो कभी वास्तविकता में तब्दील होने वाली नहीं है, यह इस्लामी तालीम के खिलाफ है और बौद्धिक रूप से गलत है। महिलाएँ कभी पुरूषों के बराबर नहीं हो सकती, वे केवल बच्चे पैदा करने के लिए होती हैं, महिलाएँ संकट की स्थितियों का सामना नहीं कर सकती। नौकरी में पचास प्रतिशत आरक्षण इनके लिए बहुत ज्यादा है। इन प्रघटनाओं की विवेचना जरूरी है। धार्मिक शिक्षक आज भी अपनी बेतुकी बातें उड़ेली जा रहे हैं और कोई उन्हें रोकने वाला नहीं है।

'द ग्लोबल स्लेवरी इंडेक्स 2014' की रिपोर्ट के अनुसार नाबलिग लड़कियों की तस्करी में हमारे देश में लगभग 65 फीसदी इजाफा हुआ है जो शर्मनाक है। ऊपर की घटनाएँ भले ही

अलग दिखती हों, लेकिन इनमें कुछ समानताएँ नजर आती है। ये प्रघटनाएँ **गांधीजी** के इस कथन पर प्रश्न चिन्ह लगाती नजर आती हैं जिसमें उन्होंने कहा था कि ''महिला पुरूष की वह सहचर है, जिसके पास समान बौद्धिक क्षमता है। अगर सशक्त होने का अभिप्राय नैतिक सत्य से है तब निर्विवाद रूप से महिला पुरूष से श्रेष्ठ है।''

इन सभी घटनाओं में पुरूषों की केद्रीय भूमिका है। धार्मिक विश्वास पितृसत्तात्मक विचारधारा के रूप में महिलाओं के पुजारी बनने, मासिक धर्म और प्रसव काल के दौरान पवित्र स्थलों पर उसके प्रवेश करने को वर्जित माना गया है। देखा जाए तो उक्त तीनों घटनाएँ धर्म के आधार पर पारस्परिक रूप से संबद्ध हो जाती हैं, और हर स्थिति में धर्म से जुड़े विभिन्न पक्षों की पुरूष के द्वारा व्याख्या और विवेचना उसे सामाजिक क्षेत्र में कमोबेश पराभौतिकीय शक्ति बना देती है। पुरूष हर देवी–देवता की अराधना कर सकता है लेकिन महिला ऐसा नहीं कर सकती। श्मशान स्थल पर महिलाओं का प्रवेश निशिद्ध है। (कुछ उपवादों को छोड़कर)। विवाह के उपरान्त महिला को सामान्य तौर अपना उपनाम परिवर्तित करना पड़ता है। यज्ञ इत्यादि कृत्यों में पति की उसके साथ उपस्थिति अनिवार्य है। अविवाहिता, विधवा और विवाहिता के संदर्भ में व्यवहार प्रतिमान धर्म के संदर्भ में विशिष्ट है, जो कहीं न कहीं पवित्रता–अपवित्रता के सिद्धांत से जुड़ जाते हैं।

धर्म, जाति और पारिवारिक दायित्वों को केन्द्र में रखकर महिलाओं के उत्पीड़न और उन्हें आगे बढ़ने के अवसर न देने के लिर्णय को पुरूष सत्ता वैधता प्रदान करती है। इन पक्षों को समाजशास्त्रीय विमर्श के केन्द्र में लाए जाने की आवश्यकता है। नारीवादी कमला भसीन का मानना है कि ''अगर औरत खाना पका सकती है तो पुरूष भी पका सकता है, क्योंकि खाना पकाने के लिए बच्चेदानी की जरूरत नहीं होती।'' एक और विचारक मेरी कूलस्टोनकॉफ्ट कहती हैं कि अगर स्त्री को समान शिक्षा दी जाए तो समाज में भी वे समान अवसर प्राप्त कर लेंगी। मौजूदा समय में हमारे देश में महिला साक्षरता की दर 65.46 प्रतिशत है जो कि स्वाधीनता के प्रारम्भिक यानी 1951 मे 8.86 प्रतिशत थी, यानी शिक्षा की दर में वृद्धि हुई लेकिन स्त्री–पुरूष समानता आज भी एक भ्रम हैं आज भी भारतीय नागरिक इस मानसिकता से स्वंतत्र नहीं हो सकें हैं कि अच्छे कर्मों से पुत्र और बुरे कर्मो से पुत्री जन्म का जुड़ाव है। भारतीय समाज में पुत्र जन्म की अकांक्षा की बालिका भ्रूण हत्या की वजह बन जाती हैं।

पुरूष ने हमेशा से ही महिलाओं को अपने अधीन रखना चाहा है उसको एक संपत्ति मानकर उसका स्वामी बनना चाहा है। स्त्री को नियंत्रित कर उस पर स्वामित्व स्थापित करने का दृष्टिकोण ही प्रभुत्वमूलक दृष्टिकोण कहलाता है। जब तक यह दृष्टिकोण बना रहेगा तक तक समाज में स्त्रियों से भेदभाव जारी रहगा। वैश्विक चुनौतियों के इस युग में महिलाओं का पेशेवर होना, आर्थिक प्रतिस्पर्धा में बराबरी का अवसर दिया जाना यह समय की मांग हैं परन्तु

पितृसत्तात्मक समाज का प्रभुत्वमूलक दृष्टिकोण स्त्री को यह स्वतंत्रता देने के लिए तैयार नहीं है।

स्त्री के ऊपर अनेक प्रकार की नैतिक बंधनों की बेड़ियाँ डाल दी जाती हैं। जबकि पुरूष–स्त्री के अपेक्षा ज्यादा स्वंतत्र होते हैं। उदाहरण के लिए मुस्लिम समाजों में बहु विवाह और तिहरा तलाक की प्रथा ही लें। स्त्री के लिए पर्दा प्रथा अनिवार्य है। स्त्री को पूरा शरीर ढ़ककर रखना होगा चाहे गर्मी कितनी भी क्यों न हो। ऐसे बहुत सारे उदाहरण है जिसके द्वारा दृष्टिगोचर होता है कि स्त्री के ऊपर अत्यधिक नैतिक बाध्यताएँ आरोपित हैं। जबकि पुरूष को अत्याधिक स्वतंत्रता प्राप्त है।

आज विश्व में नारीवाद और उसके संरक्षण के आंदोलन के प्रभाव क्षेत्र में तीव्र प्रसार हो रहा है, बावजूद इसके स्त्रियों के भाग्य का निर्णय अभी भी उसके पति और परिवार के हाथों में है। वे अपने व्यवहार, विवाह, परिवार, यौन सम्बन्ध तथा अन्य बातों के सम्बन्ध में स्वतंत्र नहीं है। स्त्री अपने कार्य को कितनी भी दक्षता से क्यों न करे, पुरूष उसे नीचा दिखाने का कोई अवसर अपने हाथ से चूकता नहीं है। इन भेदभाव और शोषणवादी मानसिकता के कारण महिलाओं को क्रूरता, हिंसा, यौन, अत्याचार, शारीरिक और मानसिक शोषण, स्वास्थ्य जनित समस्याएँ, आर्थिक विपन्नता, आत्मसम्मान को ठेस आदि परेशानियों का सामना करना पड़ता है। दुनिया के हर कोने में स़्त्री के प्रति हिंसा की जा रही है, चाहे वह विकासशील देश हों या विकसित, या फिर तथाकथित सभ्य और सम्पन्न राष्ट्र हों। स्त्री के प्रति अत्याचार और भेदभाव में सब भागीदार हैं। स्त्री को शिक्षा का समान अवसर न दिए जाने के पीछे समाज का षड़यंत्र है कि उन्हें अशिक्षित रखो तभी वह गुलाम रहेगी।

हमारा विश्व ज्यों–त्यों आगे की तरफ बढ़ रहा है वह अपने प्राचीन रिवाजों से उबरता जा रहा है। रफ्तार भले ही काम हो परंतु सुधारवादी प्रयास जारी हैं। इसी कारण से जब 1945 में संयुक्त राष्ट्र के जन्म के बाद मानवाधिकारों की उद्घोषणा 1948 में आया, तब से लेकर अब तक UN लगातार मानवाधिकारों को सुनिश्चित करने के प्रयास में प्रगति कर रहा है। इसी प्रयास के अंतर्गत स्त्री के समस्याओं पर हमारे विश्व की स्थापित सरकारों ने गंभीरता दिखाई तथा स्त्री के मानवाधिकार को सुनिश्चित करने के लिए कदम भी उठाए गए। 25 नवम्बर को ‘‘महिलाओं के खिलाफ हिंसा मिटाओं, का अंतर्राष्ट्रीय दिवस मनाया जाता है, इस तारीख को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1999 में मान्यता दी ताकि लोगों में स्त्री अधिकारों को लेकर जागरूकता पैदा किया जा सके। इसी प्रकार संयुक्त राष्ट्र द्वारा CEDAW पारित किया गया ताकि स्त्री के प्रति सभी तरह के भेद–भाव का उन्मूलन किया जा सके।

शोध अध्ययन से ज्ञात होता है कि हमारे समाज में लिंग असमानता व्याप्त है। यह देश के प्रत्येक हिस्से में देखने को मिलती है, इसका प्रमुख कारण यहाँ साक्षरता की कमी है। स्त्री

प्रताड़ना के मामले में यह मध्यप्रदेश राज्य भी अछूता नहीं है। हमारे देश में स्त्री प्रताड़ना तो प्राचीन समय से व्याप्त है किन्तु आधुनिक युग में भी स्त्री–प्रताड़ना में कोई कमी नहीं आई है। केवल प्रताड़ना का स्वरूप ही बदला है।

संदर्भ–

- अल्तेकर –''दि पोजीसन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, हिन्दू विश्वविद्यालय, कल्चर प्रकाशन बनारस 1938
- आपटे, यू.एम.–''सोशल एण्ड रिलीजन लाइफ इन द गृह सूत्र बाम्बे 1954
- आनंद मुल्कराज (राम मोहन राय)–''सती'' आर.वी.पब्लिशिंग कारपोरेशन दिल्ली 1980
- अंसारी एम.ए.–''नारी चेतना और अपराध, पंचशील प्रकाशन जयपुर 1990
- अम्बेडकर भीम राव–''दी राइज एण्ड फॉल ऑफ हिन्दू वोमेन भीम पत्रिका पब्लिकेशन पंजाब, 1970
- भास्कर कुमार–''भूमण्डलीयकरण और स्त्री'' संजय प्रकाशन दिल्ली 2008
- महिमा सुदर्शन–''नारी कर्तव्य एवं अधिकार वैटम धुमा पंचकुली दिल्ली 2007
- भारद्वाज निधि ''महिला सशक्तिकरण प्रकाशक, सागर पब्लिशर्स 2012
- वेदांलकर हरिदत्त–'हिन्दू परिवार का संक्षिप्त इतिहास, लखनऊ 1970
- डॉ. गर्ग बीना–''भारतीय महिलाएँ एक विश्लेषण ''आर्या पब्लिकेशन दिल्ली 2011
- जोशी ब्रम्हदत्त–''सती प्रथा का यथार्थ पंचशील प्रकाशन जयपुर 2000
- कमल एम.पी.–''स्त्री अस्मिता और अस्तित्व मित्तल बुक एजेन्सी दिल्ली 2007
- केडिया प्रो. कुसुमलता एवं मिश्र प्रो. रामेश्वर प्रसाद ''स्त्रीत्व धारणाएँ एवं यथार्थ विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 2009

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

ग्रामीण महिलाओं के धार्मिक क्रियाकलापों में परिवर्तन–एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (शहडोल जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अमृता सिंह चौहान
अतिथि व्याख्याता, समाजशास्त्र
शासकीय महाविद्यालय केसवाही, जिला–शहडोल

प्रस्तावना–

हमारे देश में व्यक्ति जीवन पर्यन्त सुबह से लेकर रात तक धार्मिकता से जुड़ा रहता है। ग्रामीण पर्यावरण में जीवन की सभी क्रियाओं में धर्म का सहारा लिया ही जाता है। वे क्रियाएँ फसल काटने या बोने से संबंधित हों या शादी, विवाह, उत्सव अथवा कहीं आने–जाने के लिए अनुमति लेने से जुड़ी हों। धर्म समाज की अर्थव्यवस्था पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता रहा। आर्थिक–नीति शास्त्र के निर्माण में धर्म एक प्रभावशाली कारक होता है। धर्म–विशेष में मनुष्य द्वारा आजीविका कमाने से लेकर अन्य कार्यों–उपभोग, उत्पादन, वितरण, विनिमय एवं उधार लेने व लौटाने आदि संबंद्ध विभिन्न निर्देश दिये होते हैं। धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति उनसे अनुशासित होते हैं। उस समाज की आर्थिक प्रगति इन्हीं कारकों पर निर्भर करती हैं।

धर्म ने भौतिक प्रगति को जीवन का मूल लक्ष्य नहीं माना था। सभी प्रकार के धार्मिक मूल्य व्यक्ति के आर्थिक जीवन को प्रभावित करते रहे हैं। यही कारण है कि किसी भी समाज की आर्थिक उन्नति एवं राजनैतिक गतिविधियाँ धर्म से प्रभावित रहती हैं। राजनीति और धर्म समाज की दो महत्वपूर्ण संस्थाएं हैं। दोनों ही प्राचीनकाल से मानव पर शासन करती आ रही हैं। कभी राज्य धर्म के अधीन रहा तो कभी धर्म राज्य के अधीन हो गया। दोनों समानतः क्रियाशील रहे। वस्तुतः न तो राजनीति से अलग हो सकता है। वर्तमान प्रजातांत्रिक राष्ट्रों में आज धर्म का उपयोग राजनीति के साथ खुलकर किया जाता है। मानव संस्कृति के विभिन्न अंगों में धर्म का स्थान अप्रतिम और अपरिहार्य रहा है। वह प्रचीन काल से मानवीय व्यवहारों का साथी रहा है। धर्म ने संस्कृति के निर्धारण और निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। धर्म के उत्थान के साथ संस्कृति का भी उत्थान हुआ और विभिन्न संस्कृतियों का पतन भी धर्म के साथ ही हो गया। धर्म और व्यक्ति सदा परस्पर अनुस्यूत रहे। धर्म ने मानव के समाजीकरण रूप और व्यक्तित्व के विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। जन्म से लेकर मृत्यु तक मानव विभिन्न संस्कारों गुजरकर यह ज्ञान पा लेता है कि समाज में उसकी क्या स्थिति और कर्तव्य है। धर्म हमें धर्म–संहिता और आचार–संहिता भी प्रदान करता है। धर्म द्वारा अलौकिक संसार में विश्वास

की धारणा के कारण मानव निराशाओं में भी आशाओं का दामन नहीं छोड़ता। उसे आशा रहती है कि इस संसार में न सही–दूसरे संसार में सफलता अवश्य प्राप्त होगी। यही विश्वास उसे जीवन के प्रति आशावान बनाये रखता है।

धर्म ने हमेशा यह बतलाने का प्रयत्न किया है कि कौन सा कार्य करना चाहिए और कौन सा नहीं। साथ ही धर्म, सामाजिक–आदर्शों और प्रथाओं को स्वीकृत देकर उन्हें संरक्षण प्रदान करता है। वास्तव में देखा जाये तो समाज के प्रत्येक क्षेत्र–आर्थिक, राजनैतिक और व्यक्ति के व्यक्तित्व से संबंधित, सभी धर्मों से प्रभावित होते हैं। **डॉ. राधकृष्णन** ने लिखा है कि धर्मों ने हमें यह महसूस कराया है कि जीवन में भूख, काम और नींद की तात्कालिक आवश्यकताओं के अलावा और भी बहुत कुछ है। वे हमारे जीवन–मूल्यों के आधार बने हैं जो उन्होंने हमारे स्वप्नों और हमारी आकांक्षाओं के सुमेल में सहायता की है।

अध्ययन का अवधारणात्मक विश्लेषण–

भारतीय नारी के जीवन में धर्म सदैव महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। हिन्दू धर्म ने नारी को धर्मपत्नी, सहधर्मिणी और अर्द्धागिनी आदि नामों से सम्बोधित किया है। धर्म का पालन मात्र नारी को साथ लेकर ही किया जा सकता है। कोई भी धार्मिक–क्रिया पत्नी के सहयोग के बिना पूर्ण नहीं समझी जाती है। भागवान श्रीराम तक को अपनी पत्नी सीता की अनुपस्थिति में उसकी स्वर्णमूर्ति बनवाकर यज्ञ पूर्ण करना पड़ा था। वैदिक काल में नारी स्वतंत्रतापूर्वक धार्मिक क्रियाओं में भाग लेती थी। **डॉ. राधाकृष्णन** ने लिखा है कि–''भारतीय संस्कृति नारी के लिए आध्यात्मिक विकास या बौद्धिक उत्कर्ष का निषेध नहीं करती।'' नारी ने वैवाहिक और मातृत्व–दायित्व को अपने प्रमुख कर्तव्य के रूप में स्वीकार किया एवं परिवार के उत्तरदायित्वों का समाज की परम्पराओं और प्रथाओं के अनुसार निर्वाह किया। इस कार्य को सफलतापूर्वक सम्पन्न कराने में धर्म ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत में विवाह के उच्च आदर्शों एवं भारतीय संयुक्त परिवार को लम्बे समय तक सफलतापूर्वक संचालित करने का श्रेय धर्म को ही है। नारी जीवन में इन्हीं दोनों का अत्यधिक महत्व रहा है। अतः स्वाभाविक रूप से वह धर्म के प्रति अधिक झुकाव रखती रही है।

प्राचीन काल में कन्या–जन्म को शुभ माना जाता था। कन्यादान पुण्य प्राप्ति का एक अमोघ शस्त्र था। लड़की को धर्म–परायण बनने के उद्देश्य से ही उसे शिक्षित बनाया जाता था। कहने का तात्पर्य यह है कि भारतीय नारी के जीवन में जन्म से लेकर मृत्यु तक धर्म अपरिहार्य रूप से विद्यमान रहा है और नारी धर्मानुशासन से बराबर बंधी रही है। धर्म द्वारा बताये गये आदर्शों एवं निषेधों का वह पालन करती रही है। परिवर्तन की गति के साथ–साथ

नारी और धर्म के संबंधों में भी परिवर्तन आये हैं किन्तु इन परिवर्तनों के आने पर भी भारतीय नारी ने धर्म का अवलम्बन कभी नहीं छोड़ा।

विदेशी आक्रमणों एवं विभिन्न धर्मों को मानने वाले लोगों द्वारा शासन–व्यवस्था चलाये जाने के कारण, हिन्दू धर्म जन–सामान्य के लिए दुरूह एवं जटिल बनता गया। नाना प्रकार के प्रतिबंधों और निषेधों की लौह–प्राचीर के अन्दर हिन्दू–धर्म को बन्दी बनाने का प्रयत्न किया गया। वर्ण व्यवस्था, विवाह के नियमों, खान–पान संबंधी विचारों और धार्मिक–क्रियाकलापों को जटिल और कठोर बना दिया गया। दहेज–प्रथा, बाल–विवाह, विधवा विवाह का निषेध एवं सती–प्रथा आदि विभिन्न परम्पराओं का विकृत रूप धर्म के नाम पर तोड़–मरोड़कर पेश किया गया। इन सभी का फल नारी को ही सर्वाधिक भोगना पड़ा। परिणामतः वह स्वाधीन–जीवन व्यतीत करने के प्रति उदासीन होती गई। इस प्रकार उसे धर्म–भीरू प्राणी बना दिया गया।

शिक्षा का प्रभाव भारतीय नारी–जीवन पर पड़ा, वहीं दूसरी ओर धर्म और धार्मिक गतिविधियों पर भी पड़ा। कालान्तर में हिन्दू धर्म में कतिपय कर्मकाण्डों और विभिन्न–निषेधों का बोलबाला हो गया था। धर्म के नाम पर विभिन्न विकृत एवं समाज के लिए हानिकारक रीतियाँ चल पड़ी थीं। नारी उनका अन्धानुकरण करने को विवश बना दी गई थी। अब उनमें ह्रास आया। अब शिक्षा प्राप्त करने के कारण नारी इन सभी क्रियाओं एवं विभिन्न निषेधों को तर्क आधार पर देखने लगी है। उसके मन में इनकी उपयोगिता, अनुपयोगिता आदि बातें उठने लगी हैं। वास्तविक रूप में हिन्दू धर्म से इनके संबंधों को लेकर भी विचार उठने लगे हैं यह सत्य है कि वैज्ञानिक शिक्षा मनुष्य को ज्ञान–पिपासु बनाती है और अर्जित ज्ञान व्यक्ति में तर्क उत्पन्न करता है। शिक्षा से प्राप्त इसी तर्क के आधार पर नारी, जीवन के अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ धर्म के पालन में भी विभिन्न एवं तर्कपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने लगी। आज की शिक्षित नारी आवश्यक एवं जीवनोपयोगी धार्मिक नियमों, आदेशों एवं क्रियाओं का ही पालन करती है। वे नियम ही उसके लिए महत्वपूर्ण है जिनसे व्यवहारिक जीवन जीने में मदद मिलती है। धर्म के नाम पर अब परम्परागत एवं प्राचीन रूढ़िवादी एवं अमानवीय प्रतिबंधों को मानने के लिए वह तैयार नहीं है।

नारी स्वभावतः और जन्मजात संस्कारवश वैराग्य, वैज्ञानिक या विद्यामय जीवन की अपेक्षा वैवाहिक और मातृत्व जीवन के प्रति अधिक आकर्षित रहती है। भारत जैसे धर्म–निरपेक्ष देश में विवाह के बाद भी पत्नी और माँ के रूप में पारिवारिक जीवन जीने पर धर्म, नारी के जीवन में आवश्यक तत्व के रूप में विद्यमान रहता है। अतः स्वाभविक रूप से नारी और धर्म परस्पर जुड़े रहते हैं। वर्तमान में परिवर्तित परिस्थितियाँ आज भारतीय नारी और धर्म को क्या स्वरूप प्रदान कर रही है, जैसे प्रश्न विचारणीय है। क्या धर्म उनके पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन को प्राचीन काल के समान ही प्रभावित कर रहा है? क्या आज बढ़ती हुई शिक्षा के

कारण नारी धर्म के महत्व को नकार रही है? प्राचीन धार्मिक–रूढ़ियों एवं रीति–रिवाजों को आज की ग्रामीण महिलाएँ किस सीमा तक स्वीकार रही हैं? इन सभी प्रश्नों को फिर से सोचने की आवश्यकता है। वस्तुतः ऐसे अनेकों प्रश्नों का उत्तर ढूँढ़ना वर्तमान अध्ययन के लिए आवश्यक है।

अध्ययन पद्धति–

किसी भी शोध कार्य के लिये सर्वप्रथम आवश्यकता सूचना के स्त्रोत का निर्धारण करना है। प्राक्कलपना वह अवस्था या सिद्धांत है जिसे बौद्धिक मान्यताओं के आधार पर स्वीकार किया जाता है। इसका कार्य विशिष्ट तथ्यों के संदर्भ में शोधकर्ता का मार्ग निर्धारण करना होता है। इससे अनुसंधान को एक निश्चित दिशा मिलती है। इसके निर्माण के फलस्वरूप दिशाहीन अन्वेशषण नियंत्रित होता है तथा ऐसे तथ्यों के संकलन को रोकता है, जो अध्ययन हेतु समस्या के अनुरूप नहीं है। यह किसी भी शोध कार्य की सफलता की प्राथमिक आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध विषय की प्रथम समस्या विषय–वस्तु की अध्ययन–सामाग्री के चयन के संदर्भ में उपस्थित हुई। इस संदर्भ में इस बात का निर्णय लिया जाना था कि अध्ययन हेतु किन–किन बिन्दुओं का निर्धारण किया जाय। इसके पूर्व विषय के शोध के निमित्त आवश्यक उपकल्पना तैयार करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। प्राक्कल्पना हेतु कई बिन्दु निर्धारित किये गये यथा–उपकल्पना निर्माण के प्रथम सोपान में अन्वेषण विधि एवं उसकी सीमाओं का निर्धारण किया गया। ग्रामीण महिलाओं के संबंध में अध्ययन के लिए उनके प्रतिनिधियों हेतु सबसे पहले प्रश्नावली तैयार की जाकर प्रतिनिधियों के पास उनके उत्तर हेतु भेजी गयी, किन्तु उनकी ओर से उत्तर भेजने के प्रति शिथिलता प्रदर्शित करने को कारण साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से उनसे जानकारी एकत्र करने का निर्णय लिया गया।

शोधार्थी द्वारा शहडोल जिले के प्रत्येक तहसील से दो–दो ग्रामों का चयन किया गया था, प्रत्येक ग्राम से 30 महिलाओं का चयन सविचार निदर्शन पद्धति से किया गया अर्थात् कुल महिलाओं को वर्तमान अध्ययन हेतु चुना गया।

शोध हेतु शहडोल जिले की जैतपुर तहसील से भटिया एवं खामीडोल गाँवों का चयन किया गया था जिसकी जनसंख्या क्रमशः 2300 एवं 2000 है, ब्योहारी तहसील से ग्राम सूखा एवं निपनिया का चयन किया गया जिसकी जनसंख्या क्रमशः 1500 एवं 4800 पाई गई है। जयसिंहनगर तहसील से टिहकी एवं बिजुहा गाँवों का चयन किया गया था जिसकी जनसंख्या क्रमशः 2100 एवं 1800 है। सोहागपुर तहसील से देवदहा एवं गोहपारू गाँवों का चयन किया गया था। जिसकी जनसंख्या क्रमशः 3500 एवं 6000 है इसी प्रकार बुढ़ार तहसील से ग्राम बकहो एवं बिछिया का चयन किया गया जिसकी जनसंख्या क्रमशः 14000 एवं 3000 है।

सर्वेक्षण हेतु शोधार्थी को चुने गये ग्रामों में अधिक समय व्यतीत करना पड़ा है तथा सर्वेक्षण द्वारा संकलित आँकड़ों की पुष्टि की गई है। सर्वेक्षण कार्य सम्पन्न करने हेतु विषय, क्षेत्र तथा धार्मिक पक्ष का निश्चय पूर्व में ही कर लिया गया था। सर्वेक्षण कार्य पूर्ण करने के लिये साक्षात्कार एवं अवलोकन पद्धतियों को अपनाया गया है। शोधार्थी द्वारा स्वयं अध्ययन क्षेत्र में उपस्थित रहकर साक्षात्कार एवं अवलोकन कर महत्वपूर्ण धार्मिक एवं सामाजिक तथा सामायिक जाकारी एकत्र की गई है। अतः प्रस्तुत अध्ययन में क्षेत्रीय अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

◆ निष्कर्ष एवं सुझाव–

हमारे देश में लम्बी अवधि तक अनेक सामाजिक बन्धनों एवं धार्मिक मान्यताओं ने व्यक्ति को विशेषतया नारी को जकड़े रखा था। नारी ने उसे धर्म की आज्ञा मानकर ही स्वीकार किया था। धर्म ने जीवन–यापन की एक पद्धति के रूप में हर तरह की परिस्थिति में भिन्न–भिन्न ढंग से व्यक्ति को कार्य करने को कहा परन्तु आज स्थिति बदली है। अतः उन सामाजिक मानयताओं के प्रति नारी अब क्या सोचती है? आज भी क्या वे उचित मानती हैं। वर्तमान अध्ययन में इन सभी प्रश्नों के उत्तर प्रापत किये जाने का प्रयास किया गया है ताकि धर्म की ठोस वास्तविकता को जाना जा हसके एवं भारत में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने में उनसे कदाचित सहायता मिल सके।

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष–

वर्तमान अध्ययन किए गए ग्रामीण परिवारों में 63.00 प्रतिशत संयुक्त परिवार हैं एवं 37. 00 प्रतिशत एकाकी परिवार हैं। अध्ययन किए गए ग्रामीण परिवारों में दो पीढ़ी वाले परिवारों का प्रतिशत 37.00 पाया गया, तीन पीढ़ी वाले परिवारों का प्रतिशत 43.00 एवं चार पीढ़ी वाले परिवारों का प्रतिशत 20.00 पाया गया है। अध्ययनरत ग्रामीण परिवारों में पाँच या कम सदस्य वाले परिवार का प्रतिशत 21.66 पाया गया है, 6–10 सदस्य संख्या वाले परिवार 43.33 पाया गया है, 11–15 सदस्य संख्या वाले परिवारों का प्रतिशत 18.33 पाया गया तथा 16–20 सदस्य वाले परिवारों का प्रतिशत 16.66 पाया गया है। यह तथ्य इस बात की ओर संकेत करता है कि संयुक्त कहे जाने वाले परिवारों में भी सदस्यों की संख्या अपेक्षाकृत सीमित होती जा रही है। ग्रामीण परिवारों में अभी भी संयुक्त संपत्ति पाई जाती है जिसका प्रतिशत 63.00 पाया गया है, अर्थात यदि पुत्र अपने माता–पिता से अलग भी हो रहा है तो भी सम्पत्ति का बंटवारा नहीं हुआ है, वहीं ग्रामीण परिवार में एक सदस्य 15.00 प्रतिशत, दो सदस्य 31.66 प्रतिशत, तीन सदस्य 30.00 प्रतिशत तथा चार सदस्य 23.33 प्रतिशत कमाने वाले पाये गए हैं। ग्रामीण महिलाओं से पूछा गया कि वे अपने निकट रक्त सम्बन्धियों विशेषकर परिवार के सदस्यों के मध्य किस

प्रकार का सम्बन्ध रखते हैं उनका कहना था कि निकट रक्त सम्बन्धियों के साथ अत्याधिक घनिष्ठ 13.33 प्रतिशत, घनिष्ठ 50.00 प्रतिशत, औपचारिक 25.00 प्रतिशत एवं कटुतापूर्ण सम्ब्नध्झ 11.66 प्रतिशत परिवारों में पाया गया है। तथ्यों से स्पष्ट होता है कि यद्यपि ग्रामीण परिवार के सम्बन्धियों के पारस्परिक सम्बन्ध में औपचारिकता और कटुता का प्रवेश हो रहा है तथापि अभी भी अधिकांश परिवारों में घनिष्ठ (50.00 प्रतिशत) और औपचारिक सम्बन्ध (11.66 प्रतिशत) सम्बन्ध बने हुए हैं। अध्ययनरत ग्रामीण परिवार के 37.00 प्रतिशत परिवारों में पूर्ण सहयोग की भावना पाई जाती है, 47.00 प्रतिशत परिवारों में सामान्य सहयोग की स्थिति है तथा 17.00 प्रतिशत परिवारों में उदासीनता की भावना पाई जाती है।

परम्परागत संस्कारों का परिवारिक जीवन की संयुक्तता और सम्बन्धों की पारस्परिक बनाए रखने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इन संस्कारों ने न केवल विशिष्ट अवसरों पर परिवार और निकट सम्बन्धियों को एक स्थान पर उपस्थित किया है बल्कि परिवार की एकात्मकता और सम्बन्धों की निकटता को एक विशिष्ट धार्मिक और सामाजिक आधार भी प्रदान किया है। ग्रामीण परिवारों में यदि कोई संस्कार सम्पन्न होता है तो 37.00 प्रतिशत परिवारों में सदैव मिल–जुलकर संस्कारों का निष्पादन किया जाता है इसी प्रकार 57.00 प्रतिशत परिवारों में कभी–कभी सहभागिता निभाई जाती है एवं 17.00 प्रतिशत परिवारों में सहभागिता कभी नहीं निभाई जाती है।

अध्ययन क्षेत्र के 30 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों में पति–पत्नी सम्बन्ध घनिष्ठ, 36.66 प्रतिशत तनावपूर्ण एवं 33.33 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों में सामान्य सम्बन्ध पाया गया है। पति–पत्नी में तनाव का प्रमुख कारण पति के द्वारा शराब या नशों का सेवन करना पाया गया है। 70 प्रतिशत महिलाओं में माना है कि वे अपने परिवार में स्वतंत्र हैं, उन्हें किसी भी कार्य के लिए अपने परिवार के पुरुष सदस्यों से इजाजत लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। 16.66 प्रतिशत उत्तरदाता महिलाओं ने स्वीकार किया कि वे स्वतंत्र नहीं है तथा कोई भी कार्य बिना पुरुष की अनुमति से नहीं करती हैं। 13.33 प्रतिशत महिला उत्तरदाता कह नहीं सकते की स्थिति में पाई गई हैं अर्थात् उन्हें दोनो ही स्थितियों का सामना करना पड़ता है।

धार्मिक स्थिति–

अध्ययनरत अधिकांश परिवारों में कमरे की धातु की किसी आलमारी आदि में भगवान की स्थापना की जाती है, जिसका प्रतिशत 48.00 पाया गया है। सम्भवतः इसका कारण पूजा के लिए अलग कमरे की व्यवस्था करना सामान्यतः सम्भव नहीं है। साथ ही धार्मिक क्रियाकलापों के साथ पवित्रता की भावना भी जुड़ी रहती हैं। उसी के कारण आलमारी में ईश्वर की स्थापना करने वाले परिवारों का प्रतिशत सर्वाधिक हैं धार्मिक वृक्ष पीपल, केला आदि

लगाकर पूजा–पाठ करने वाली महिलाओं का प्रतिशत मात्र 08.00 पाया गया है। घर की आवश्यकतानुसार व्यवस्था करके पूजा करने वाली महिलाओं का प्रतिशत 27.0 पाया गया है तथा जिन घरों में पूजा–पाठ नहीं होता है उनका प्रतिशत 07.00 है।

अध्ययन शहडोल जिले की ग्रामीण महिलाओं द्वारा धार्मिक महिलाओं द्वारा धार्मिक क्रियाकलाप हेतु विभिन्न विधियाँ अपनायी जाती हैं, 25.00 प्रतिशत महिलाएँ जैसा समय मिलता है वैसी पूजा–पाठ करती हैं, 08.00 प्रतिशत महिलाएँ अपने इष्टदेव को वस्त्रादि अर्पण करके पूजा सम्पन्न करती हैं, 13.00 प्रतिशत महिलाएँ ईश्वर का स्मरण करने के लिए 108 दानों वाली तुलसी अथवा रुद्रक्ष की माला का प्रयोग करती है। वे ईश्वर का स्मरण करती है। इस स्मरण के पीछे एकाग्र–चित्त होने की भावना भी रहती है। भारत में प्रत्येक देवता से सम्बन्धित साहित्य मिलता है। उसमें उसी देवता की स्तुति की जाती है। व्यक्ति अपने इष्ट देवता का स्मरण करने के लिए उन ग्रन्धों को पढ़ता है। अध्ययन के दौरान महिलाओं द्वारा इस पद्धति का भी प्रचलन का देखा गया। ऐसी महिलाओं का प्रतिशत 13.00 पाया गया है। 30.00 प्रतिशत महिलाएँ प्रतिदिन नियमित रूप से मन्दिर जाने की जानकारी दी है। सम्भवतः वे ऐसा किसी विशेष अनुष्ठान एवं नियम के अन्तर्गत ही करती हों। कुछ ग्रामीण महिलाओं ने विशेष त्यौहारों पर ही मन्दिर जाने की जानकारी दी है। विभिन्न देवी–देवताओं की मूर्तियाँ मन्दिरों में प्रतिष्ठित होती हैं। विशेष दिन एवं त्यौहार पर उस दिन विशेष देवता के मन्दिर यथा–शिवरात्रि पर शिव–मन्दिर में पूजा के लिए जाया जाता है। फलस्वरूप उस दिन के माहात्म्य में से कुछ पुण्य अर्जित किया जा सके, ऐसी महिलाओं को प्रतिशत 46.00 पाया गया है। 17.00 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएँ किसी त्यौहार या उत्सव पर ही मन्दिर दर्शन करने को जाती हैं तथा 07.00 प्रतिशत महिलाएँ कभी मन्दिर नही जाती हैं।

अध्ययन क्षेत्र की महिलाएँ तरह–तरह के व्रत रखती हैं। कुछ महिलाओं ने व्रत आदि रखने में विश्वास प्रकट नहीं किया है। इन महिलाओं का प्रतिशत अपेक्षाकृत बहुत ही कम है। साथ ही अधिकांश महिलाओं द्वारा व्रत रखने से सम्बद्ध जानकारी भी प्राप्त हुई है। अधिकांश महिलाओं ने अपने–अपने ढंग से रखने वाले व्रतों के नाम की जानकारी दी यथा–शिवरात्रि, नवदुर्गा, हरतालिका, रामनवमी, जन्माष्टमी आदि व्रतों के प्रति अपना अधिक विश्वास प्रकट किया। अतः यह सहज स्वाभाविक ही है कि वे अपने–अपने इष्ट देवता के नियत दिनों पर ही व्रत आदि रखें। व्यक्ति का जो इष्ट देव होता है उसी देव से सम्बन्धित दिनों को वह अत्यन्त निष्ठापूर्वक नियमतः पूजा–अर्चना करने एवं व्रतादि रखने में व्यतीत करता है। प्रायः सभी प्रकार की महिलाएँ आज भी इन व्रतों के प्रति आस्था रखती हैं।

सुझाव–

भारत एक परम्परागत समाज है। भारत में प्राचीन समय से कई रीति–रिवाज प्रचलित है। अनेक प्रकार के अन्धविश्वासों से भारतीय जनता ग्रसित रहती है। प्राचीन काल में जो मान्यताएँ बनीं, व्यक्ति उन्हीं के पालन को अपना धर्म समझता रहा। समाज की उसम समय ही यह विशेषता मानी जा सकती हरै कि उसने प्रत्येक नियम एवं बन्धनों को धर्म का सहारा लेकर प्रस्तुत किया ताकि व्यक्ति इसे नकार ही न सके। आज वे सभी रीति–रिवाज, मान्यताएँ वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों से मेल नहीं खाती हैं। ये सब कुरीतियों के रूप में देखी जाने लगी हैं। वस्तुतः इन्हें दूर करने के लिए एवं सम्यक् परिचालन के लिए उपयोगी एवं सार्थक रीतियों को वैज्ञानिक संरक्षण प्रदान करने के लिए अनेक सामाजिक कानूनों का निर्माण किया गया। परन्तु सिर्फ कानूनों का निर्माण कर देना ही पर्याप्त नहीं है। इसके साथ–साथ आवश्यक यह भी है कि समाज के सदस्यों के विचारों में परिवर्तन भी लाया जाये। इन सभी धार्मिक कुरीतियों को धर्म का प्रश्रय एवं संरक्षण प्राप्त था, भले ही हमारे धर्मशास्त्रों ने हमारे विशाल हिन्दू धर्म ने इनको उचित नहीं भी बताया हो, हमारे पुरूष–प्रधान समाज में धार्मिक मानयताओं के नाम पर नारी को सदा विभिन्न धार्मिक बन्धनों में जकड़कर रखा गया। आज भी भारतीय समाज इन मान्यताओं को पूर्णतः नकार नहीं सका है। आज यह जानना भी आवश्यक है, अनिवार्य भी है कि स्वयं नारी, जिसे मान्यताओं के फल ही सबसे अधिक भोगने पड़े थे और उसे ही इन सामाजिक विधानों ने सर्वाधिक सुरक्षा एवं अधिकार देने की बात कही थी, इन सभी मान्यताओं के प्रति क्या दृष्टिकोण रखती है? प्रायः यह देखने में आया है कि आज भी स्वयं महिलाएँ प्राचीन सामाजिक मान्यताओं और विश्वासों में अभी भी जकड़ी हुई हैं। न जाने क्यों संस्कारवश या अन्य किन्हीं कारणों से वे परिवर्तन को स्वीकार नहीं कर पाती।

संदर्भ–

- अल्तेकर –''दि पोजीसन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, हिन्दू विश्वविद्यालय, कल्चर प्रकाशन बनारस 1938
- अल्तेकर–''एजुकेशन इन एशिएन्ट इण्डिया बनारस 1934
- भास्कर कुमार–''भूमण्डलीयकरण और स्त्री'' संजय प्रकाशन दिल्ली 2008
- व्होरा आशारानी–''भारतीय नारी दशा दिशा नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली 1983
- व्होरा आशारानी–''भारतीय नारी अस्मिता एवं अधिकार–नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली 1986
- बेग तारा अली–वोमेन इन एशिएन इंडिया दी पब्लिकेशन डिवीजन दिल्ली 1958
- डॉ. गुप्ता सुभाषचंद्र–''कार्यशील महिला एवं भारतीय समाज'' अर्जुन पब्लिशिंग हाउस दिल्ली– 2009

- डॉ0 गर्ग बीना–''भारतीय महिलाएँ एक विश्लेषण ''आर्या पब्लिकेशन दिल्ली 2011
- कमल एम0पी0–''स्त्री अस्मिता और अस्तित्व मित्तल बुक एजेन्सी दिल्ली 2007
- डॉ. कपूर प्रमिला–''भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएँ राजकमल प्रकाशन दिल्ली पटना 1976
- काणे पी.वी.–''धर्मशास्त्र का इतिहास'' अनुवाद अर्जुन चौबे काश्यप हिन्दी समिति उत्तरप्रदेश शासन, लखनऊ 1973

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

पत्नी के रूप में नारी के सन्दर्भ एवं महत्ता

देवव्रत यादव
शोधार्थी, प्राचीन इतिहास विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा

प्राचीन भारत के नारी वर्ग की प्रतीक सीता के चरित्र का चित्रण रामायण की नायिका के रूप में अत्यन्त करूणामय है। पत्नी के रूप में सीता का पूरा जीवन पढ़ने से पाठक का ह्रदय करूणा से ओत–प्रोत हो जाता है।

नारी शिक्षा

रामायण के प्रमुख स्त्री पात्रों की समीक्षा से यह स्पष्ट है कि विवाह के पूर्व उन्हें अपने घरों में समुचित शिक्षा दे दी जाती थी। क्यों कि उन्हें सभी धार्मिक कृत्यों में अकेले अथवा पति के साथ पूर्ण सहयोग देना अनिवार्य था। कन्याओं को व्यवाहरिक और भौतिक शिक्षा भी दी जाती थी। राजा कुशनाभ अपनी पुत्रियों को क्षमा का आदर्श उपदेश हेते हैं। वे कहते थे कि स्त्री के क्षमा ही उसका आभूषण है। सीता को क्षत्रिय धर्म का पूरा ज्ञान था इसीलिए वे कहती हे कि मेरे मन में अपने प्रति जो स्नेह और विशेष आदर है उसके कारण मैं आपको उस प्राचीन घटना का स्मरण कराती हूँ तथा यह शिक्षा भी देती हूँ कि आपको धनुष लेकर इसी तरह बिना बैर के ही दण्डकारण्य वासी राक्षसों का वध नहीं करना चाहिए।

विवाह

विवाह के लिए उत्तरा फाल्गुली नक्षत्र के लिए आदर्श समय था। शास्त्रोक्त विधि से सम्पन्न विवाह अविच्छेद्य था। इस लोक की पत्नी ही दूसरे लोक में मिलती है समाज में इस प्रकार का विश्वास प्रचलित था। विवाह के परिणतिए पत्नीत्व की सफलता प्रणय पर्व सन्तान प्राप्ति में ही निहित है।

परदा प्रथा

परदा प्रथा का वास्तविक उद्देश्य प्राकृत मनुष्यों को दूषित दृष्टि से संभ्रान्त महिलाओं की रक्षा करना अयोध्या के नागरिक अपनी पत्नियों के बार में आश्वस्त थे। इसलिए वे अपनी पत्नियों की ओर से सर्वथा निश्चित होकर राम के साथ वन जाने को तैयार हो गये थे।

पतिव्रत धर्म

सत्पथ ब्राह्मण का तात्पर्य है कि पिता एक बार जिस व्यक्ति को सौंप दे आजीवन उसी के साथ रहे अर्थात सती को एक पति के साथ आमरणान्त, अव्याभिचारी धम्र से रहना चाहिए। स्त्री के लिए पति ही गति है और पति ही धर्म है, पति ही देवता और पति ही प्रभु है। पति ही गुरू और पति ही सर्वस्व है।

गृहस्वामिनी

विवाह के पश्चात विवाहिता को गृहस्वामिनी का पद तो प्राप्त हो जाता था परन्तु पति–पत्नी के बीच समानता का भाव नहीं प्रदर्शित नही होता। उनकी रक्षा, उनके भरण–पोषण का भार तो पति स्वीकार कर लेता था परन्तु अपनी जमीन जायदद की तरह व स्त्रियों को भी अपनी सम्पतित्त मानता था। जब मन चाहा उपयोग करने में वह स्वतंत्र था।

नारी का सम्मान

शास्त्रोक्त यज्ञ–यज्ञादि कर्मों में पति और पत्नी का सम्मिलित अधिकर होता था। पत्नी को साथ लिये बिना पुरुष यज्ञ कर्म का अनुष्ठान नहीं कर सता था। यही कारण है कि सीता के अभाव में राम को अपने अश्वमेघ यज्ञ में सीता की स्वर्ण प्रतिमा रखनी पड़ी थी।

जिस प्रकार सीता के हृदय मन्दिर में सदैव राम विराजमान रहते थे उसी प्रकार राम के हृदय में सीता का निवास था। राम ने सीता के साथ अनेक ऋतुओं तक विहार किया। सीता राम को अत्यन्त प्रिय थी। रावण ने भी सीता से कहा यद्यपि मै तुम पर अत्यन्त आसक्त हूँ तो भी तुम्हारी इच्छा के विपरीत मैं तुम्हारा स्पर्श नहीं करूंगा। रामायण में स्वदारनिरत पर जो दिया गया है। मारीच ने रावण को अपनी ही पत्नियों से प्रणय करने की सलाह दी थी, क्योंकि अजितेन्द्रिय व्यक्ति का नाश निश्चित है।

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

माता के रूप में नारी के सन्दर्भ एवं महत्ता

देवव्रत यादव
शोधार्थी, प्राचीन इतिहास विभाग
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा

विवाह और परिवार द्वारा मानवीय जीवन की धारा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए माता और पिता दोनो का सहयोग आवश्यक है और दोनो की सहभागिता के अभाव में यह कार्य असंभव है। माता शिशु को अच्छे बुरे का ज्ञान कराती है। वह बच्चे की पहली गुरू है। ऋगुवैदिक युग में अनेक स्थलों पर माता का वर्णन है। इससे सर्वाधिक, घनिष्ठ और प्रिय सम्बन्धी माना गया है। विशिष्ठ धर्मसूत्र में कहा गया है कि आचार्य का गौरव दस उपाध्यायों से अधिक है। पिता सौ आचार्यों से अधिक महत्व वाला है और माता का गौरव एक हजार पिताओं से भी अधिक है।

माता सन्तान को जन्म देने के कारण जननी, उसके अंगो को पुष्ट करने से अम्बा, वीर सन्तानों को जन्म देने से वीरसू कहलाती है। माता ही समस्त पीड़ितों का सुख हैं माता का स्थान इतना गौरव पूर्ण होने से उनकी आज्ञा पालन हिन्दू परिवार में पुत्र का परम धर्म कहा गया हैं परन्तु पुत्र के धर्म की टेक और उसकी शोक रहित सुख–दुःख, शून्य आनन्दमयी अंजुल मूर्ति की ओर देख–देखकर स्वयं को गौरवान्वित समझती है। यही सच्ची पुत्रवत्सला है। यहां मोह को किंचित भी स्थान नहीं है। चौदह साल की अवधि अत्यन्त कष्टपूर्वक राम के ध्रुव सत्य बचनों की आशा पर व्यतीत होते है। लंका विजय के बाद राम अयोध्या लौटते है। जब यह समाचार कौशिल्या को प्राप्त होता है तब वे उसी प्रकार दौड़ती है जैसे गाय बछड़े के लिए दौड़ती है। कौशिल्या के विपरीत कैकेयी का आचरण है एक और कौशिल्या राम को वन जाने की अनुमति प्रदान कर देती है। वहीं दूसरी ओर कैकयी पुत्र मोह में अपने पुत्र को किसी भी कीमत पर राजा बनाने को अद्यत है। इस प्रकार सौतेले पुत्र के प्रति कैकेयी का यह व्यवहार कदापि उचित नहीं का जा सकता। किन्तु यह उसके अपने पुत्र भरत के प्रति उत्कृष्ट स्नेह को प्रदर्शित करता है। सुमंत के समझाने और फटकारने पर कैकेयी टस से मस नहीं होती है और पुत्र मोह में अन्धी बनी रहती है। पुत्र माता के उपदेशों द्वारा किस प्रकार सद्गुण प्राप्त करता है और माता अपने पुत्र के सद्गुणों की महिमा से किस प्रकार यश को प्राप्त करती है। इन दोनो तथ्यों का सुत्रिता और लक्ष्मण अच्छा उदाहरण है।

वनगमन की अवस्था में स्वयं कैकेयी धीरज धारण कर अपने दुःख को विस्मृत कर अपने उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य का निर्वाह करती हुए महाराजा दशरथ से जो कुछ कहती है तुलसीदास ने उसका वर्णन इस प्रकार किया है—

नाथ समुझि मन करिअ विचारू, राम नियोग पयोधि अपारू।

करनधार तुम्ह अवध जहाजूए चढ़ेऊ सकल प्रिय पथिक समाजू।।

धीरज धरिअ त पाइअ पारूए नाहि त बूड़िहि सबु परिवारू।

जों जिय धरिअ विनय पिय मोरी, राम लखन सिय मिलहिं बहोरी।।

महाभारत (12.108) में माता पिता तथा गुरू की सेवा परम धर्म माना गया है। माता की सेवा करने वाले पुत्रों में धर्म व्याध, श्रवण कुमार, श्रीराम और भीष्म का स्थान बहुत ऊँचा है। रामायण में अपने अंधे माता—पिता की सेवा करने वाले एक सूद्र पुत्र का उल्लेख है परवर्ती साहित्य में यक श्रवण कुमार के नाम से विख्यात हुआ। अपने माता—पिता को कांवर में बैठाकर उसने उन्हें समस्त तीर्थों की यात्रा करायी थी।

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति भावी शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन

डॉ0 सुषमा अग्रवाल (प्रवक्ता)

एवं

नीलम यादव एम0एड0(छात्रा)

शिक्षा संस्थान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ0प्र0)

प्रस्तुत शोध प्रपत्र में सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया गया है। सांख्यिकीय परिणामों के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि सरकारी एवं निजी दोनों समूहों में छात्राध्यापकों की अभिवृत्ति में अन्तर पाया गया है। जहाँ सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के सकारात्मक पक्षों से अधिक सहमत है वहीं दूसरी ओर निजी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों पक्षों को अधिक स्वीकार करते है।

प्रस्तावना

आज प्रत्येक देश और मानव को अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने और विकास पथ का आलम्बन करने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि प्राचीन भारतीय आदर्श वसुधैव कुटुम्बकम् को अंगीकार करते हुए शिक्षा व्यापार, वाणिज्य, स्वास्थ्य, वैज्ञानिक गतिविधियों के साथ–साथ शान्ति की स्थापना हेतु सभी देश और व्यक्ति एक मण्डल, एक केन्द्र की स्थापना करके परस्पर आदान–प्रदान, आयात–निर्यात को मूर्त रूप दें और लाभान्वित हों। ऐसे ही उद्देश्यों को ध्यान में रखकर विकसित देशों द्वारा उदारीकरण, निजीकरण, बाजारीकरण की अवधारणाओं को जन्म दिया गया। गैट (GATT) का उदय हुआ। गैट अर्थात् प्रशुल्क एवं व्यापार पर सामान्य समझौता (General Agreement on Tarriffs and Trade) वास्तव में यह विश्व के विभिन्न देशों के मध्य एक बहुपक्षीय संधि है जिसके आधार पर सदस्य देशों द्वारा विभिन्न व्यापारिक समस्याओं और अवरोधों का निराकरण तथा अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में प्रतिबन्धों को कम करने का प्रयास किया जाता है। वस्तुतः यह एक बहुराष्ट्रीय मंच है जहाँ अनुबन्ध करने वाले विभिन्न देश व्यापारिक समस्याओं पर बातचीत करने उनका हल प्राप्त करने तथा अपने व्यापार में वृद्धि करने की सम्भावनाओं पर वार्ता करने के लिए समय–समय पर एकत्रित होते है।

1991 में भारत ने भी उदारीकरण की नीति को स्वीकार किया तथा 1994 में गैट का सदस्य बना, जिसके परिणामस्वरूप बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा प्रत्येक देश में स्वास्थ्य, रक्षा, दूरसंचार, वित्त, व्यापार के साथ–साथ शिक्षा में विश्व व्यापार के अवसरों का लाभ उठाने की

प्रक्रिया चालू की गयी। अतएव कहा जा सकता है कि भारत में 1991 में ही वैश्वीकरण की नीतियाँ लागू हुई।

शिक्षा के क्षेत्र में वैश्वीकरण इस मान्यता पर आधारित है कि निजीकरण से युक्त प्रबन्ध तन्त्र द्वारा संचालित विद्यालय, विश्वविद्यालय का जाल सम्पूर्ण देश में विविध देशों द्वारा फैलाया जाए, गुणवत्ता युक्त सुविधाएं तथा ज्ञान–विज्ञान की जानकारी विद्यार्थियों को दी जाएं और उसके बदले में लाभांश कमाया जाए। भारत में उदारीकरण की प्रक्रिया 1991 में लागू होने के बाद वैश्वीकरण की प्रक्रिया में अत्यधिक तीव्रता आयी है। अब अमेरिका, फ्रांस, जापान, चीन द्वारा स्थापित धनाढ़य वर्गों द्वारा संचालित बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ एवं निगमें भारत में व्यापार, वाणिज्य, दूरसंचार, सूचना प्रौद्योगिकी की सुविधाओं का जाल फैलाते जा रहे है। विविध देशों द्वारा भारत सहित अनेक देशों में विद्यालय एवं विश्वविद्यालय खोलने की योजना चल रही है। सूचना प्रौद्योगिकी से सम्पूर्ण विश्व सिकुड़ता जा रहा है। घर बैठे किसी भी सूचना को प्राप्त करना और पहुँचाना अत्यन्त सरल हो गया है। वैश्वीकरण के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर खुले बाजार में व्यापार–वाणिज्य के साथ–साथ शिक्षा भी बिकने की तैयारी कर रही है। चिकित्सा, अभियांत्रिकी, कानून शिक्षण संस्थान आदि क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ विविध देशों में अपना संजाल बिछा रही है। तरह–तरह के विज्ञापन द्वारा बाजार में विद्यार्थियों को अपनी ओर आकर्षित कर रही हैं।

वैश्वीकरण का अर्थ

वैश्वीकरण इक्कीसवीं सदी में उदित नवीन विचारधारा है। इस विचार धारा का उदय विकसित देशों द्वारा अर्थव्यवस्था को सबल बनाने के उद्देश्य से किया गया। स्वास्थ्य, रक्षा, दूरसंचार, व्यापार, वाणिज्य के साथ–साथ शिक्षा को भी वैश्विक स्तर पर प्रसारित और प्रचारित करके लाभ कमायें और अद्यतन जानकारियों को प्रदान कर सभी राष्ट्रों को लाभान्वित करके वांछित लाभांश की प्रगति करना वैश्वीकरण की मुख्य वस्तु है। **चैम्बर शब्दकोष में वर्णित है कि ''वैश्वीकरण से आशय वैश्विक अर्थात् विश्वव्यापी बना देना या सम्पूर्ण विश्व अथवा सभी को प्रभावित करना है।''**

उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण का अर्थ

1990 के बाद दुनिया में वैश्वीकरण की हवा चली जिसको एल0पी0जी0 (लीबरेलाइजेशन, प्राइवेटाईजेशन, ग्लोब्लाईजेशन) भी कहा गया जिसका शिक्षा पर भी प्रभाव हुआ। सरकारें उच्च शिक्षा में अपना हाथ खींचने लगी। शुरू में व्यावसायिक महाविद्यालय सरकार के द्वारा खुलना बंद हो गया जिसके परिणामस्वरूप स्ववित्तपोषित शैक्षिक संस्थान खुलने लगे। जिससे देश में एक ओर उच्च शिक्षा को बढ़ावा मिला वहीं दूसरी ओर इसके नकारात्मक प्रभाव भी देखे गये। उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण से शिक्षा के क्षेत्र में ज्ञान–विज्ञान व

तकनीकी का विकास हुआ है, रोजगार के विकल्प बढ़े है, भारतीय शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार आया है, मानव संसाधन का सदुपयोग हो रहा है, व्यावसायिक शिक्षा में वृद्धि हो रही है, छात्रों के लिए दूरस्थ शिक्षा के रास्ते खुले है। वहीं दूसरी ओर शिक्षा बहुत महंगी हो रही है, शिक्षा का निजीकरण व बाजारीकरण बढ़ रहा है, भारतीय प्रतिभा विदेशों की ओर पलायन कर रही है, उच्च शिक्षा उच्च वर्ग के लोगों तक सीमित हो गई है, शिक्षित बेरोजगारों की संख्या बढ़ रही है, तथा उच्च शिक्षा में स्तरीकरण बढ़ रहा है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रभाव है। तथा इस शोध प्रपत्र में इन्हीं सकारात्मक व नकारात्मक पक्षों के प्रति भावी अध्यापकों की अभिवृत्ति को जानने का प्रयास किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय में अध्ययनरत् छात्राध्यापक– छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. निजी बी0एड0 महाविद्यालय में अध्ययनरत् छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
3. सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
5. सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

परिकल्पना

1. सरकारी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
2. निजी बी0एड0 महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
3. सरकारी एवं निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।
4. सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

5. सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रतिदर्श का चयन

अध्ययन हेतु झाँसी जनपद के दो बी0एड0 महाविद्यालयों को लिया गया है, जिसमें एक सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय बुन्देलखण्ड महाविद्यालय तथा दूसरा निजी बी0एड0 महाविद्यालय बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय लिया गया है। जिसके अन्तर्गत 100 छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकाओं को चयनित किया गया है। जिसमें 50 छात्राध्यापक एवं 50 छात्राध्यापिकाएँ सम्मिलित है। जिसमें सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय के 25 छात्राध्यापक एवं 25 छात्राध्यापिकाएँ तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालय के 25 छात्राध्यापक एवं 25 छात्राध्यापिकाएँ है। इसे अधोलिखित सारणी में दर्शाया गया है।

	निजी बी0एड0 महाविद्यालय	**सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय**	**योग**
छात्राध्यापक	25	25	**50**
छात्राध्यापिकाएँ	25	25	**50**
कुल योग	**50**	**50**	**100**

शोध विधि – सर्वेक्षण विधि।

उपकरण

प्रस्तुत शोध में आंकड़े एकत्रित करने के लिए स्वनिर्मित अभिवृत्ति मापनी का प्रयोग किया गया है।

सारणी–1

सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्राध्यापक– छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का स्तर

प्रतिदर्श	**संख्या**	**मध्यमान**	**मानक विचलन**	**मध्यमानों का अन्तर**	**मानक त्रुटि**	**परिगणित क्रान्तिक अनुपात**	**सार्थकता दोनों स्तर पर**
सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक	25	93.3	9.086	9.6	2.72	3.52	0.05 पर 2.01
सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय की	25	83.7	9.765				0.01 पर 2.68

छात्राध्यापिकायें							

अर्थापन– सारणी 4.1 से ज्ञात होता है कि टी–परीक्षण अथवा क्रान्तिक अनुपात का परिगणित मान 3.52 सारणीमान टी 0.05 = 2.01 तथा 0.01 = 2.68 से अधिक है। अतः शून्य परिकल्पना अस्वीकृत होती है अर्थात् सरकारी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर है।

सारणी–2

निजी बी0एड0 महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का स्तर

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमानों का अन्तर	मानक त्रुटि	परिगणित क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता दोनों स्तर पर
निजी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक	25	89.3	8.541	2.8	2.16	1.29	0.05 पर 2.01
निजी बी0एड0 महाविद्यालय की छात्राध्यापिकायें	25	86.5	6.324				0.01 पर 2.68

अर्थापन– सारणी 4.2 से ज्ञात होता है कि टी–परीक्षण का परिगणित मान 1.29 सारणीमान टी 0.05 = 2.01 तथा 0.01 = 2.68 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है अर्थात् निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी–3

सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का स्तर

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमानों का अन्तर	मानक त्रुटि	परिगणित क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता दोनों स्तर पर
सरकारी बी0एड0	50	88.5	10.198	0.6	1.61	0.37	0.05 पर

महाविद्यालय के छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकायें							1.98
निजी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक–छात्राध्यापिकायें	50	87.9	5.141				0.01 पर 2.63

अर्थापन– सारणी 4.3 से ज्ञात होता है कि टी–परीक्षण अथवा क्रान्तिक अनुपात का परिगणित मान 0.37 सारणीमान टी 0.05 = 1.98 तथा 0.01 = 2.63 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है अर्थात् सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापक एवं छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी–4

सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का स्तर

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमानों का अन्तर	मानक त्रुटि	परिगणित क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता दोनों स्तर पर
सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक	25	93.3	9.086	4	2.54	1.57	0.05 पर 2.01
निजी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक	25	89.3	8.541				0.01 पर 2.68

अर्थापन– सारणी 4.4 से ज्ञात होता है कि टी–परीक्षण अथवा क्रान्तिक अनुपात का परिगणित मान 1.57 सारणीमान टी 0.05 = 2.01 तथा 0.01 = 2.68 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है अर्थात् सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है।

सारणी–5

सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का स्तर

प्रतिदर्श	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमानों का अन्तर	मानक त्रुटि	परिगणित क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता दोनों स्तर पर
सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापिकायें	25	83.7	9.765	2.8	2.37	1.18	0.05 पर 2.01
निजी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापिकायें	25	86.5	6.324				0.01 पर 2.68

अर्थापन– सारणी 4.5 से ज्ञात होता है कि टी–परीक्षण अथवा क्रान्तिक अनुपात का परिगणित मान 1.18 सारणीमान टी 0.05 = 2.01 तथा 0.01 = 2.68 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना स्वीकृत होती है अर्थात् सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों में अध्ययनरत् छात्राध्यापिकाओं की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अन्तर नहीं है।

निष्कर्ष– अध्ययन का मुख्य उद्देश्य सरकारी तथा निजी बी0एड0 महाविद्यालयों के छात्राध्यापकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना था। निष्कर्षो से यह ज्ञात होता है कि सरकारी बी0एड0 महाविद्यालय के छात्राध्यापक उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के सकारात्मक पक्षों से अधिक सहमत है जबकि निजी बी0एड0 महाविद्यालयों के छात्राध्यापक उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों पक्षों को स्वीकार करते है। यदि सरकारी व निजी दोनों ही महाविद्यालयों का सामूहिक रूप से निष्कर्ष निकाला जाए तो अधिकांश छात्राध्यापक उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के सकारात्मक व नकारात्मक दोनों पक्षों को स्वीकार करते है। उनका मानना है कि उच्च शिक्षा का वैश्वीकरण किया जाए किन्तु कुछ सरकारी प्रतिबन्धों के साथ जिससे कि उच्च वर्ग/धनिक/पूंजीपति छात्रों, अभिभावकों व देश का शोषण न कर सकें। व उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण को सही रूप में स्वीकार कर सकें।

शैक्षिक निहितार्थ

वर्तमान समय में उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के नाम पर विदेशी कम्पनियाँ भारत में आकर शिक्षा के क्षेत्र में निवेश कर लाभ कमा रही है। तथा पूंजीपति व विदेशी मिलकर अपने हित साधने में लगे हैं तथा शिक्षा का व्यवसायीकरण कर रहे है। उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण से शिक्षा का निजीकरण बढ़ रहा है, जिससे उच्च शिक्षा अत्यन्त मंहगी होती जा रही है, जिसका

लाभ केवल धनिक वर्ग ही उठा पा रहे हैं तथा उच्च गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पर निर्धन छात्रों की पहुँच नहीं हो पा रही है। दूसरी ओर इन शिक्षा संस्थाओं से केवल डिग्री धारक छात्र निकल रहे है, जिनमें कोई योग्यता नहीं है जिससे देश में शिक्षित बेरोजगारी बढ़ रही है। उच्च शिक्षा संस्थाओं का वर्तमान स्वरूप अत्यन्त दोषपूर्ण है। उपर्युक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थिनी द्वारा प्रस्तुत शोध अध्ययन के निम्नलिखित शैक्षिक निहितार्थ अनुभूत किये गये है–

1. भावी शिक्षकों की उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति अभिवृत्ति अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतः समयानुसार उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण की प्रणाली में सुधार लाकर शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन लाया जा सकता है।
2. भावी शिक्षकों के लिए शिक्षा के वैश्वीकरण का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है, जिससे वह छात्रों को इसके सकारात्मक व नकारात्मक प्रभावों से अवगत करा सकें।
3. उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के उचित क्रियान्वयन द्वारा निजी उच्च शैक्षिक संस्थाओं में मनमानी फीस वसूली को रोका जा सकता है।
4. निजी उच्च शैक्षिक संस्थाओं में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध कराने के प्रयास किये जा सकते है।
5. उच्च शिक्षा के विकास में सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका को बढ़ावा दिया जा सकता है।
6. सरकार को विदेशी विश्वविद्यालयों को भारत में निवेश करने की आज्ञा देनी चाहिए पर कुछ कठोर अधिनियम के अन्तर्गत।
7. उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण की प्रणाली में सुधार कर उच्च शिक्षा के व्यवसायीकरण पर रोक लगायी जा सकती है।
8. शैक्षिक समानता लाने के लिए तथा सभी को शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने के लिये उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण की प्रणाली में सुधार आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

पुस्तकें

1. गुप्ता, एस0पी0 (2015), 'अनुसंधान संदर्शिका' परिवर्धित परिमार्जित नवीन संस्करण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन।
2. गुप्ता, एस0पी0 (2014), 'उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान' प्रथम संस्करण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन।
3. गुप्ता, एस0पी0 (2015), 'आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन' नवीन संस्करण, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन।
4. कौल, लोकेश (2011), 'मैथडोलॉजी ऑफ एजूकेशन' रिसर्च, नई दिल्ली, विकास पब्लिकेशन्स हाउस।

5. लाल, रमन बिहारी (2013–14), 'शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त' अठारहवां संस्करण, मेरठ, रस्तोगी पब्लिकेशन्स।
6. सारस्वत, मालती (2014), 'शिक्षा मनोविज्ञान की रूपरेखा' लखनऊ, इलाहाबाद, आलोक प्रकाशन।
7. शर्मा, आर0ए0 (2016), 'शिक्षा अनुसंधान के मूल तत्व एवं शोध प्रक्रिया' मेरठ, आर0 लाल बुक डिपो।
8. सिंह, अरूण कुमार (2014), 'मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ' ग्यारहवां संशोधित संस्करण, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।
9. सिंह, अरूण कुमार (2015), 'शिक्षा मनोविज्ञान' नवीनतम संस्करण, नई दिल्ली, भारती भवन।

जर्नल्स

1. Amandeep, Karamveer Kaur Brar (2016), 'Impact of Liberalization and Globlization on higher education' International Journal of Emerging Research in Management and Technology, Volumn-5, Issue-1, ISSN: 2278-9359.
2. Mishra, Vikrant (2013), 'Globlization and Indian Higher Education' Journal of Education and Instructional Studies In the world, Volumn-3, Issue-1, Article : 02, ISSN : 2146-7463.
3. Naik, Pramod Kumar, Lec (2015), 'Globlization and its impact on higher education in India' International Journal of Humanities and Management sceences, Volumn-3, Issue-6, ISSN : 2320-4044 (Online)
4. Wireman, Alexander W. Astiz, M. Femanda, Baker, David P., Globlization and Comparative Education Research : Misconceptions and Applications of NEO-Institutional Theory, Journal of Supernational Policies of Education, No. 1, PP. 31-52.

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

व्यक्तित्व विकास में संस्कृत साहित्य की भूमिका

डॉ. राजू प्रसाद अहरवाल
सहायक प्राध्यापक (संस्कृत)
शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र)
E-mail : rpahirwal 93@gmail.com

पूर्वे (नवे) वयसि यः शान्तः स शान्तः इति मे मति।
धातुषु क्षीयमाणेषु शमः कस्य न जायते।।[1] पंचतन्त्र (मित्रभेद) 176

मनुष्य का आचार–विचार, रहन–सहन, बोलचाल, पहनावा, समाज का प्रबंधन, उठना–बैठना, चलना–फिरना, दैनिक दिनचर्या, स्वयं एवं समाज के प्रति कर्तव्य, ईर्ष्या–द्वेष, उपकार,–अपकार, पारिवारिक दायित्वों का निर्वहन, सामाजिक क्रियाकलाप आदि सभी तत्व मिलकर व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं।

व्यक्तित्व निर्माण में अहं भूमिका मनुष्य की स्वयं की होती है, क्योंकि 'व्यक्ति' शब्द का वास्तिवक अर्थ उसका रूप या प्रकृति (स्वभाव) होता है। व्यक्ति स्वयं के अच्छे या बुरे कार्यों से अपने व्यक्तित्व का निर्माण स्वयं करता है। मानव जिस प्रकार के पर्यावरण में रहता है, उस पर्यावरण को अपने आचार–विचारों में ढाल लेता है, लेकिन विपरीत परिस्थितियों में भी मानव को अपने आचार, व्यवहार, बोल–चाल, रहन–सहन, भाव आदि के द्वारा किसी भी पशु–पक्षी से लेकर मानव तक किसी के साथ प्रतिकूल व्यवहार नहीं करना चाहिए। क्योंकि हम जैसी दूसरों से अपने प्रति व्यवहार की आशा करते हैं, वैसा ही हमें दूसरों के साथ व्यवहार करना चाहिए।

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

1. **व्यक्तित्व का अर्थ –** "प्रत्येक मनुष्य का अपना–अपना व्यक्तित्व है वही मनुष्य की पहचान है। लाखों, करोड़ों मनुष्यों की भीड़ में भी वह अपने निराले व्यक्तित्व के कारण पहचान लिया जायेगा। यही उसकी विशेषता हैं यही उसका व्यक्तित्व है।"

"व्यक्तित्व एक स्थिर अवस्था न होकर एक गत्यात्मक समष्टि है, जिस पर परिवेश का प्रभाव पड़ता है और इसी कारण से उसमें बदलाव आ सकता है। व्यक्ति के आचार–विचार, व्यवहार, क्रियाएं और गतिविधियों में व्यक्ति का व्यक्तित्व झलकता है।"

"व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। जन्म से मृत्युपर्यन्त वह समाज में रहता है। परिवार के लोगों से लेकर समाज के लोगों तक का व्यक्ति के व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है।"

जनसाधारण में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के बाहय रूप से लिया जाता है परंतु मनोविज्ञान मत व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के रूप–गुणों की समष्टि से है अर्थात् व्यक्ति के बाहय आवरण के गुण और आन्तरिक तत्व दोनों को माना जाता है।

2. परिभाषाएं–

वारेन तथा कारमाइकल(1930) के अनुसार–"व्यक्ति के विकास की किसी अवस्था पर उसके सम्पूर्ण संगठन को व्यक्तित्व कहते हैं।"

जे.टी. मेकर्डी के अनुसार–"व्यक्तित्व रूचियों का वह समाकलन है जो जीवन के व्यवहार में एक विशेष प्रकार की प्रवृत्ति उत्पन्न करता है।"

आलपोर्ट(1939) के अनुसार–"व्यक्तित्व व्यक्ति की उन मनोशारीरिक पद्धतियों का वह आन्तरिक गत्यात्मक संगठन है जो कि पर्यावरण में उसके अनन्य समायोजनों को निर्धारित करता है।"

कैम्फ(1919) के अनुसार–"व्यक्तित्व उन प्राभ्यास संस्थाओं का या उन अभ्यास के रूपों का समन्वय है जो वातावरण में व्यक्ति के विशेष सन्तुलन को प्रस्तुत करता है।"

मार्टन प्रिंस के अनुसार–"व्यक्तित्व व्यक्ति की समस्त जैविक, जन्मजात, विन्यास, उद्वेग, रूझान, क्षुधाएं, मूलप्रवृत्तियां तथा अर्जित विन्यासों एवं प्रवृत्तियों का समूह है।

3. व्यक्तित्व का विकास कैसे हो ?

इस प्रश्न के उत्तर में प्रश्न उठता है कि– व्यक्तित्व क्या है ? आचार–विचार, रहन–सहन, खान–पान, आहार–विहार, उचित–अनुचित, तर्कशक्ति, सद्व्यवहार, सदाचार, स्वाभिमान, समय का पाबंद, सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्व आदि का समुचित ज्ञान होना, इन सभी तत्वों का समन्वित रूप व्यक्तित्व कहलाता है।

इस प्रश्न का उत्तर हमारे संस्कृत साहित्य में भरा पड़ा है। वेद, उपनिषद्, पुराण, नीतिशास्त्र, धर्मशास्त्र, रामायण, महाभारत, चाणक्यनीति, गीता, बौद्धदर्शन, पंचतन्त्र, हितोपदेश आदि ग्रन्थों में व्यक्तित्व विकास के सभी सिद्धांत एवं लक्षण वर्णित किये गये हैं। इस सभी ग्रन्थों में नायक–नायिकाओं के उदात्त गुणों की व्याख्या की गई है। उन महापुरूषों से प्रेरणा लेकर हम अपने जीवन को सुन्दर व सुखमय बना सकते हैं तथा समाज को एक नई दिशा प्रदान कर सकते हैं।

साहित्य के माध्यम से ही हमें मानवीय उदात्त गुण, भावनायें, विचार, शिक्षा, जीवन शैली, विषम परिस्थितियों में रहकर भी उच्चादर्श स्थापित करना, दीन–दुःखियों की सहायता करना, समाज कल्याण की भावना, सभी को समदृष्टि से देखना, सभी के हित की चाह हमें राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, महात्मा गांधी, अम्बेडकर, विवेकानंद, टैगोर, दयानंद, सरस्वती, सम्राट अशोक जैसे महानायकों के (चरित्र) व्यक्तित्व में स्पष्ट झलकती है। अतएव हम इन महानायकों के उदात्त गुणों का अध्ययन कर अपने व्यक्तित्व का निर्माण कर सकते हैं।

साहित्य की एक मात्र ऐसा साधन है जिसके माध्यम से हम अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकते हैं। सहितम् हितम् साहित्यम्। साहित्य ही समाज का दर्पण है।

मैंने संस्कृत साहित्य में वर्णित मानवीय उदात्त गुणों को संजोने की कोशिश की है यदि इन उदात्त गुणों से व्यक्तित्व विकास में कोई सफलता मिलती है तो यह मेरा प्रयास सार्थक होगा।

4. संस्कृत साहित्य में वर्णित व्यक्तित्व विकास के तत्व–

(i) मन– कहा गया है कि स्वस्थ्य मन में ही स्वस्थ मास्तिष्क होता है। बुन्देलखण्ड में मन के विषय में एक कहावत है कि–

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।
मन ही कराबे चाकरी, मन ही मंगाबे भीख।।

इसलिए मन व्यक्तित्व विकास में सर्वश्रेष्ठ तत्व है। व्यक्ति जैसा मन में सोचता है, वैसा करता है और वैसा ही बन जाता है। गौतम बुद्ध ने धम्मपद में मन के महत्व को निर्देशित करते हुए कहा है कि– मन सभी सिद्धियों का हेतु है, स्वस्थ मन से किये गये कार्य का फल ही सुखदायक होता है।

मनो पुव्वंगमा धम्मा मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पसन्नेन भासति वा करोति वा।।[2] (धम्मपद 1.2)

यजुर्वेद में मन को कल्याणकारी (शुभ संकल्प वाला) बतलाया गया है, मन में सदैव उच्च और अच्छे विचार उत्पन्न होना चाहिए, सकारात्मक सोच जागृत करना चाहिए। नकारात्मक भाव या विचार मन में नहीं आना चाहिए। मन ज्योति के समान प्रकाशमान होना चाहिए।

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरगमं जोतिषां ज्योतिरेकंतन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।[3] (यजुर्वेद 34.1)

(ii) वाणी– व्यक्तित्व विकास में वाणी का स्थान सर्वोपरि है क्योंकि व्यक्ति की पहचान उसकी वाणी से होती है और वाणी ही व्यक्तित्व विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

प्रिय वाक्य प्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः।
तस्मातदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता।।

व्यक्ति को सदैव सत्य और प्रिय बोलना चाहिए। सत्य–प्रिय भाषण करने वाला व्यक्ति ही संसार में शीर्ष शिखर पर पहुँचता है। और सभी का प्रिय भी बनता है। सनातन धर्म यही है कि व्यक्ति को सदैव प्रिय सत्य बोलना चाहिए।

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात, न ब्रूयात सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयाद, एष धर्मः सनातनः।।[4] मनुस्मृति 4.138

मनुष्य को एक मात्र वाणी ही अलंकृत करती है, क्योंकि सुख–सुविधाओं के जितने भी भौतिक साधन हैं वह तो एक न एक दिन नष्ट होने वाले हैं लेकिन वाणी रूपी आभूषण कभी नष्ट नहीं होता है। वाणी सदैव ही आभूषण की तरह अलंकृत करती रहती है।

केयूरा न विभूषयन्ति पुरूषं हारा न चन्द्रोज्जवलाः,
न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालड्.कृता मूर्धजाः।
वाण्येका समलइरोति पुरूषं या संस्कृता धार्यते,
क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्।।[5](दूर्वा,10कक्षा सुभाषितानि पृ–15)

(iii) कर्म (परिश्रम)– परिश्रम ही सफलता की कुंजी है।

करहि जो कर्म पाइ फल सोई। करम हीन नर पावत नाहीं।

यह संसार कर्म प्रधान है। जो सकारात्मक सोच के साथ मन लगाकर कार्य करता है। वही अभीष्ट फल प्राप्त करता है। अतएव उत्तम कर्म की भी व्यक्तित्व विकास में महत्ता है स्वकर्तव्य पालन मनुष्य का परम कर्तव्य है। कर्तव्य पालन से ही जीवन में सफलता और समस्त सिद्धियां प्राप्त होती हैं। अतः व्यक्ति को चाहिए कि साहित्य में वर्णित महापुरूषों के उदात्त कार्यों का अनुकरण कर अपने कर्तव्य का पालन करें। अपने–अपने कर्तव्यों में प्रीतिपूर्वक लगा हुआ मनुष्य सम्यक् सिद्धि प्राप्त करता है।

यथा– स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।।[6] गीता 18.45

सत्कार्य ही मानव का जीवन है। यथा–

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।।[7] (यजु. 40.2)

उद्यम करने से ही व्यक्ति अपनी महत्वकांक्षायें, उन्नति एवं विकास करता है केवल मनोरथ से नहीं। यथा–

उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखेमृगाः।।[8] (पंचतन्त्र 2/141)

उद्यमी व्यक्ति की सभी सहायता करते हैं, उद्यमी को सभी जगह उचित मार्गदर्शन प्राप्त होता है और वह आत्मबल, दृढ़निश्चिय और विश्वास के साथ उच्च कार्य करता है तो उसकी देवता भी सहायता करते हैं। यथा–

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः।
षडेते यत्र वर्तन्ते यत्र सहाय्यकृद् विभुः।।

लगन और ईमानदारी के साथ उत्साह पूर्वक कार्य करना चाहिए। यदि यत्न के बाद भी फल प्राप्ति न हो तो इसमें कार्य करने वाले का कोई दोष नहीं। यथा–

यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः।।[9] (हितोः 1.31), पंचतंत्र 1.217

अतएव स्पष्ट है कि मनुष्य को मनसा, वाचा, कर्मणा, सकारात्मक सोच के साथ उत्साहपूर्वक मन लगाकर कार्य करना चाहिए, ये सभी गुण मिलकर व्यक्ति के उत्कृष्ट व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं।

(iv) आचार (शील)– शीलं परं भूषणम्। सदाचारी, सच्चारित्रवान् व्यक्ति सम्पूर्ण लोक को जीत सकता है, इसमें कोई संशय नहीं है। क्योंकि शील और सदाचारी व्यक्ति उन्नति–विपत्ति, लाभ–हानि सब स्थितियों में अपने विवेक से कार्य करता है और सदैव सम दृष्टि से सबको देखता है। किसी के प्रति न दुराग्रह रखता है और न किसी के प्रति सहानुभूति। ऐसा व्यक्ति तो केवल सभी के साथ समान व्यवहार करता है इसी कारण संसार में पूजा जाता है एवं अपने स्वयं के लिए जो व्यवहार प्रतिकूल हो वैसा व्यवहार दूसरों से नहीं करता है। गौतम बुद्ध ने शुद्ध और पवित्र आचरण के लिये पंचशील का उपदेश दिया जिनका पालन कर व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का निर्माण कर सकता है।

पंचशील–
1. प्राणीहिंसा न करना
2. चोरी न करना
3. व्यभिचार न करना
4. झूठ न बोलना
5. नशीली वस्तुओं का सेवन न करना।

जीवन में शील ही सद्गुणों का साधन है सभी गुणों का आधार शील अर्थात् आचरण है।

शीलेन हि त्रयो लोकाः शक्या जेतुं न संशयः।
नहि किळिचदसाध्यं वै लोके शीलवतां भवेत्।।[10] सं.नि.श.पृ.199 (महाभारत)

वेदों और स्मृतियों में बतलाया गया आचार (आचरण करने योग्य कर्म विधान) ही परम धर्म है।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च।
तस्मादस्मिन्सदायुक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः।।[11] (मनु स्मृति 1.109)

इस प्रकार मनु ने आचार को सर्वोपरि प्रधानता दी है। अतः सबसे महत्वपूर्ण बात उच्च स्तर का आचरण है। जो उच्च आचरण का पालन नहीं करता उसे ब्राह्मण होने और वेदपाठ करने पर भी उसका फल नहीं मिलता।"[12] (मनुस्मृति 1.110) अतएव स्पष्ट है पवित्र आचरण और शीलवान व्यक्ति का व्यक्तित्व ही श्रेष्ठ होता है। आचरणहीन का नहीं।

(v) अनुशासन– मनुष्य के व्यक्तित्व विकास में अनुशासन का विशेष महत्व है। अनुशासन में रहने वाला व्यक्ति, परिवार, समाज, एवं देश के प्रति संवेदनशील होता है। अनुशासन का पालन करने वाले व्यक्ति अनुशासन में न रहें तो वह पुशवत् होता है। अनुशासन ही जीवन का आधार है।

व्यक्ति को अनुशासन का भाव प्रकृति से सीखना चाहिए, जिस प्रकार प्रकृति में समय से फूल और फल लगते हैं, समय से पतझड़ एवं पत्ते आते हैं उसी प्रकार व्यक्ति को समयानुसार प्रत्येक कार्य करना चाहिए यही अनुशासन है। यथा–

प्रथमे नार्जिता विद्या द्वितीये नार्जितं धनम्।
तृतीये नार्जितं पुण्यं चतुर्थे किं करिष्यति।।

(vi) धैर्य– सुख–दुःख से परिपूर्ण जीवन में धैर्य की महती आवश्यकता है। धीर पुरूष संसार को जीत लेता है। यथा–

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः,
प्रारभ्य विघ्नविहिता विरमन्ति मध्याः।।
विघ्नैः सहस्त्रगुणितैरपि हन्यमानाः,
प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजन्ति।।[13] (पंचतंत्र 3/254)

धैर्य धारण करने से कार्य सम्पन्न होते हैं जल्दबाजी में नहीं। यथा–

कारज धीरे होत है काहे होत अधीर।
समय पाय तरूवर फले केतक सीचों नीर।।

धीर पुरूष सम्पत्ति और विपत्ति में एक समान रहते हैं वे कभी भी विचलित नहीं होते हैं। यथा–

संपतौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता।
उदये सविता रक्तो रक्ताश्चास्तमये तथा।।[14] (पंचतंत्र 2.7)

धीर पुरूष ही विजय प्राप्त करते हुए पृथ्वी के सुख को भोगता है। धैर्य महापुरूषों का लक्षण है।

(vii) विद्या– व्यक्ति को विद्यावान होना चाहिए विद्यावान ही अपने उत्कृष्ट वयक्तित्व का निर्माण कर सकता है। विद्या के बिना नहीं, क्योंकि विद्धानों की सर्वत्र पूजा होती है। ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं और विद्या से रहित मनुष्य पशुवत् होता है। विद्या मनुष्य में छिपा गुप्त धन है, अन्य धन तो नष्ट हो जाते हैं लेकिन विद्यारूपी धन कभी नष्ट नहीं होता अतः विद्यारूपी धन सभी प्रकार के धनों में श्रेष्ठ है। यथा–

न चोरहार्यं न च राजहार्यं न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि।
व्यये कृते वर्धत एवं नित्यं विद्याधनं सर्वधनप्रधानम्।।[15](सुभा पृ.30/सं.नि.श.पृ.–302)

विद्यावान व्यक्ति ही पूजा जाता है विद्या से विहीन नहीं। यथा–

विद्या राजसु पूज्यते नहि धनं, विद्या विहीनः पुशः।।[16] (भर्तृ. नीतिशतक 20)

श्रेष्ठ एवं सकारात्मक विद्या माता के समान रक्षक, पिता के समान हितकर, लक्ष्मी को उत्पन्न करने वाली एवं चारों दिशाओं में कीर्ति एवं यश फैलाने बाली कल्पलता के समान होती है। यथा–

किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या।।[17] (भोज प्रबंध–5)

शुद्ध एवं पवित्र बुद्धि ही संस्कारों को पवित्र बनाती है, उचित–अनुचित का बोध कराती है।

यथा– श्रियः प्रसूते विपदो रूणाद्धि यशांसि दुग्धे मलिनं प्रमार्ष्टि।

संस्कारशौचेन परं पुनीते, शुद्धा हि बुद्धिः किल कामधेनुः।।[18](विद्धशाल भंजिका1.8)

नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते।[19] (गीता 4.38)

विद्या परं दैवतम्। व्यक्तित्व विकास में विद्या की सर्वश्रेष्ठ एवं सार्वभौम स्थिति है।

(viii) परोपकार– दूसरों का उपकार करना ही परोपकार है। व्यक्ति को मन, वाणी और कर्म से परार्थ करना चाहिए। परोपकार की सीख व्यक्ति को वृक्ष, नदियाँ, गायों और वायु तथा वर्षा से लेना चाहिए। परोपकार में कभी भी अपना स्वार्थ न देखें यदि अपना हित देखा तो वह परोपकार नहीं है। यथा–

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः, परोपकाराय वहिन्त नद्यः।

परोपकाराय दुहन्ति गावः, परोपकारार्थमिदं शरीरम्।।

परोपकार करते समय यह विचार नहीं करना चाहिए कि इसमें हमारा हित है कि नहीं। यदि स्व और पर का भाव रहा तो वह परोपकार नहीं कहा जा सकता। स्व और पर के भाव को त्यागकर विश्वबंधुत्व और विश्वकल्याण की भावना रखने वाले व्यक्ति को परोपकारी कहा जाता है। यथा–

अयं निजः परोवेत्ति गणना लघुचेतसाम्।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।[20] (हितो. 1.69, पंचतंत्र 5/38)

(ix) सत्सबति– सत्सबति से ही मनुष्य के अन्दर अच्छे एवं बुरे गुण आते हैं अच्छी संगति से अच्छे गुण एवं बुरी संगति से बुरे गुण। बुन्देलखण्ड में सत्संगति के संबंध में एक कहावत है कि–

संगति से गुन ऊपजें, संगति से गुन जाए।

लोहो लागो नांव में, पानी में उतराय।।

सज्जनों की संगति से दुष्ट से दुष्ट लोग भी धर्मात्मा और सत्यकर्मनिष्ठ बन जाते हैं जैसे तथागत गौतम बुद्ध के संसर्ग में आने पर अंगुलीमाल डाकू भी धर्मात्मा एवं सत्यकर्म निष्ठ श्रमण वन गया था। सत्संगति से निम्न गुण वाला व्यक्ति भी उच्च स्थान को प्राप्त कर लेता है। यथा–

महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः।

पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम्।।[21] (पंचतंत्र 3.59)

सत्संगति से व्यक्ति के व्यक्तित्व में निखार आता है बुरेगुण दूर हो जाते हैं सद्गुणों से युक्त होकर अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। यथा–

जाड्यं धियो हरति सिळचति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपा करोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्सबति कथय किं न करोति पुंसाम्।।[22] (नीतिशतक 23)

(x) **गुण**–संसार की सभी वस्तुओं में श्रेष्ठ है गुण। संसार में गुणी व्यक्ति ही पूजा जाता है। यथा– तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते।[23] (रघुवंशम् 11.1)

गुणवान ही पूज्य होता है आयु और लिब से नहीं। यथा–

गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिबं न च वयः।[24] (उत्तररामचरितम् 4.11)

व्यक्ति को अपने अंदर अच्छे गुणों को विकसित करना चाहिए तभी यश और कीर्ति फैलती है तथा उत्तम व्यक्तित्व वाला कहलाता है।

5. **सुझाव**–संसार में जितने भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति हुए हैं वे सभी धन, बल, एवं परिवारिक स्थितियों से नहीं वल्कि स्वयं की मेहनत, लगन एवं स्वयं में छिपे गुणों की क्षमता का उपयोग कर आगे बढ़े और प्रमुख लोगों (प्रेरणा स्रोत) में गिने जाने लगे। संसार में जितने भी महापुरूष हुए वे सभी अपने स्वयं की बुद्धि, विवेक, तर्क, ज्ञान–विज्ञान, आचार, शील और योग्यता के बलबूते पर ही शिखर पर पहुँचे हैं। व्यक्तित्व विकास हेतु व्यक्ति को अपने ऊपर विश्वास रखना चाहिए। जीवन में हमेशा लक्ष्य जरूर रखें। अच्छी सफलता से जुड़ी प्रेरक और प्रेरणादायक कहानियाँ एवं सफल लोगों की जीवनियाँ पढ़े। जीवन में सफलता के लिए दृढ़ इच्छा शक्ति का होना जरूरी है। अपने अन्दर सकारात्मक सोच जागृत करें। एक अच्छे श्रोता बनें। विनम्र बनें, भले ही आप प्रतिभाशाली हो, बहुत बड़े व्यक्ति हों परंतु अगर आपके व्यवहार में विनम्रता नहीं तो आपका व्यक्तित्व कभी अच्छा नहीं हो सकता। मुश्किल परिस्थितियों में भी शान्ति से काम लें। अच्छी आदतों को विकसित करें। दूसरों का आदर कीजिए बदले में आपको भी आदर जरूर मिलेगा। बिना योजना बनाये कोई भी कार्य मत कीजिए। अपनी सोच हमेशा सकारात्मक रखिए। अपनी कल्पना शक्ति को अधिक से अधिक मजबूत बनायें। सफलता के रास्ते में पड़नेवाली परेशानियों को एक चुनौती के रूप में लें। ईर्ष्या, राग, द्वेष, काम, क्रोध, मद मात्सर्य जैसे दुर्गुणों से दूर रहें। संस्कारवान बनें क्योंकि संस्कारी व्यक्ति प्रतिष्ठा और उच्च पद प्राप्त करके भी अपने पद का अभिमान नहीं करता, वह सदैव दूसरों को भी शिखर पर पहुँचानें की कोशिश करता है। किसी के प्रति प्रतिकूल व्यवहार नहीं करता।

उत्तम व्यक्तित्व बाला व्यक्ति सदैव सत्यपथ पर चलकर दूसरों को भी सत्यपथ पर चलने की सीख देता है।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. मनुस्मृति– सुरेन्द्रनाथ सक्सेना, अनुप्रकाशन जयपुर–2009

2. संस्कृत निबंधशतकम् कपिलदेव द्विवेदी– वि.वि. प्रकाशन वाराणसी–2005

3. श्रीमद्भगवद् गीता– स्वामी रामसुख दास गीता प्रेस गोरखपुर सं.–2068

4. पंचतन्त्रम् –क्षेमराज – श्री कृष्णदास श्रेष्ठिना– स्टीमप्रेस मुम्बई सं.–1980

5. दूर्वा– संस्कृत कक्षा 10वीं मध्यप्रदेश राज्य शिक्षा केन्द्र भोपाल–2008

6. धम्मपद– कन्छेदी लाल गुप्त चौखम्बा विद्या भवन वाराणसी–2005

7. रघुवंशम्–कालिदास–पं. लक्ष्मी प्रपन्नाचार्य–कृष्णदास अकादमी वाराणसी–2002

8. उत्तररामचरितम्–भवभूति–डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी– कृष्णदास अकादमी वाराणसी–2000

9. विद्धशाभळिजका–राजशेखर प्रणीत–श्री बाबूलाल शुक्ल शास्त्री– चौखम्बा पब्लिशर्स –2001

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

बघेली कहानी : वस्तुविन्यास और जीवन दर्शन

डॉ. राधवेन्द्र तिवारी*

कमलेश तिवारी**

* सहायक प्राध्यापक हिन्दी श्रीयुत कॉलेज गंगेव जिला रीवा (म.प्र.)
** शोध छात्र हिन्दी शिक्षण विभाग अ.प्र.सिंह वि.वि.रीवा (म.प्र.)

बघेली कहानी का प्रारम्भिक स्वरूप लोक जीवन में कही–सुनी जाने वाली किस्साओं में मिलता है। दिन भर के उलझनों से मुक्त होकर चौपालों बैठकों में अपने अनुभवों और अनुभूतियों को सुनते–सुनते वक्ता और श्रोता अपना मानसिक मनोरंजन किस्सा कहानियों के माध्यम से करते थे। जिनके कथानक सूत्रबद्ध होकर आश्चर्य, रोमांच, भावनुभूति, अनुभूति, अनुभव और आगे बढ़कर के एक उद्देश्य की पूर्ति करते थे।

बघेलखण्ड में समान्यतया प्रेरणास्पद अर्थ गंभीर वाले कथानक ही किस्सा कहानियों के आधार बनते थे। इन किस्साओं में लोक जीवन के दुखः–सुख, व्यक्ति के दुख, दैन्य, परिवार, समाज की परम्पराओं संस्कृतियों और कुछ नया करने वालों के ऊपर समाज और शासकों की ज्यादती, नव चेतना सम्पन्न लोगों की हठधर्मिता आदि का सुन्दर संयोजन कथा साहित्य के माध्यम से होता था। देर रात्रि तक चलने वाली चौपालों में धार्मिक आख्यानों के कहने–सुनने की परंपरा भी रही है।

बघेलखण्ड के ज्यादातर कथा सूत्र–रामायण, महाभारत, जातक कथाओं और उससे इतर इन्द्रजालिक, सम्मोहन, घटना चक्रों पर केन्द्रित परियों, राजा–रानी, राजकुमार–राजकुमारी आदि कथानकों के केन्द्र में होते थे। सहज बोल–चाल की भाषा में कही–सुनी जाने वाली इन कथाओं में समय के साथ कुछ नयापन लाने के लिए नवीन घटनाचक्रों के माध्यम से कथानकों के अवतरण की परम्परा भी धीरे–धीरे विकसित हुई। इन कथानकों में चरितनायक और घटनाचक्र आम जीवन से होने के कारण ऐसे कथाचक्र धीरे–धीरे लोकप्रिय होते गये जिससे पारंपरिक कथानकों से हटकर एक नये भाव क्षेत्र में बघेली किस्सा–कहानियों ने प्रवेश किया।

बघेली कहानियों के अस्तित्व में आने की यही पृष्ठभूमि है। किस्सा–कहानी कहने–सुनने का यह दौर अनाम कथाकारों को ही समर्पित रहा जो महज अपना लोकधर्म समझकर इस तरह की कथाओं की सृष्टि करते थे। इन कहानियों से लोगों को शिक्षा भी मिलती थी, आत्मबोध होता था साथ ही जीवन के विभिन्न झंझावातों और उलझनों से मन में आती विरक्तियों से छुटकारे का मार्ग भी प्रशस्त होता था। कोई सार्थक मंच न होने के कारण इस तरह के किस्सा कहानी काल के धुंध में धुंधले होते हुए अपनी पहचान खोते गये और उनकी जगह नई चिंतन

दृष्टि अपने नये कलेवर में प्रभावी होती गयी और उनमें जनपदीय संस्कृति का रंग और गहरा होता गया। जनपदीय कथा साहित्य के संदर्भ में अपनी राय देते हुए डॉ. अभयराज त्रिपाठी कहते है–

जनपदीय साहित्य के अन्तर्गत स्थानीय रंग अपना विशेष महत्व रखता है। कतिपय आलोचक तो स्थानीय रंग को ही जनपदीयता का आधार मानते है। स्थानीय रंग के बिना किसी भी जनपद का पूरा चित्र नहीं उकेरा जा सकता। अर्थात् इस तरह जनपदीयता का प्रथम तत्व स्थानीय रंग ही है। स्थानीय रंग के अन्तर्गत पारस्परिकता, भावना, कुमंत्रणा, कुण्ठा, उच्च वर्गीय वर्चस्व, नारी चित्रण तथा राजनैतिक प्रभाव आदि अवयवों को सम्मिलित होते है।[i] बघेली के जनपदीय कथा साहित्य में भी यह विशिष्टता विद्यमान है।

ग्रामीण अंचलो में बसे लोगो के बीच पारस्पारिक व्यवहार एक दूसरे पर दया, उपकार, करूणा आदि का होना प्राचीन परम्परा है। इसी के साथ ही अशिक्षा, जड़ता, राजनैतिक दांव–पेच, ईर्ष्या –द्वेष आदि विकारों के कारण उनमें विखराव तथा विशेष प्रतिशोध की भावनायें भी पायी जाती हैं। निहित स्वार्थो एवं ईर्ष्या–द्वेष की वजह से कुमंत्रणा का भाव लोगों में जागृत होता है। गांवों में बसे लोगों के बीच सामन्तशाही प्रभाव, जातिवाद, ऊॅच–नीच, अमीर–गरीब के बीच परस्पर शोषण प्रतिशोध के साथ ही बेरोजगारी एवं गरीबी जनमानस में घुटन और कुंण्ठा को जन्म देती हैं। देखा जाता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में नारियों के प्रति पुरूष वर्ग की जो निरीह भावना रही है उसके कारण नारियों में हीन भावना, दैन्य, करूण दशा, सन्तति समस्याएँ यौंन विसंगतियॉ भी पनपती है। जिसके कारण उनका स्वाभाविक जीवन वाधित होता है।

बघेली भाषा अवधी की अनुसागिंक भाषा है जो समय सापेक्ष विकसित हो कर भाषा के रुप में स्परुप ग्रहण कर रही है। डॉ. ग्रियर्सन ने बधेली को अवधी का निकटतम रुप मानते हुए लिखा है– 'वास्तव में बधेली और अवधी में इतना कम अन्तर है कि यदि बधेली एक अलग बोली के रुप में जनता में प्रचलित न होती, तो मैं उसे अवधी का रूप में मानता।'[ii] एक दूसरे स्थान पर उन्होंने लिखा है कि 'अवधी' का दूसरा रूप बधेली है।'[iii]

भाषाविद उदयनारायण तिवारी के अनुसार – "बधेली वस्तुत बघेलखण्ड की बोली है। इसका नामकरण बघेली राजपूतों के नाम पर हुआ है, जिसकी इधर प्रधानता है। इसका एक नाम रिमहाई भी है क्योंकि रीवा बघेलखण्ड का मूख्य स्थान है। बघेली छोटा नागपुर के चन्दमकार तथा रीवा के दक्षिण मण्डला जिले में बोली जाती है। यह मिर्जापुर तथा जबलपुर के कुछ भागों में बोली जाती है। इसी प्रकार फतेहपुर, बॉदा तथा हमीरपुर भी उसी के अन्तर्गत हैं, किन्तु इधर की बधेली में पड़ोस की बोलियों का सम्मिश्रण हो जाता है।"[iv]

बघेली रचनाकारों के कहानी साहित्य का स्वरूप शास्त्रीय कहानियों से भिन्न है फिर भी कथ्य, शिल्पगत विशिष्टता के चलते पाठको पर अपना प्रभाव डालती हैं। व्यक्ति समाज में

पैदा होता है, पलता है और समाज में ही अपना सर्वागींण विकास करता है। यदि समाज में रह कर लोगों में एक दूसरे के प्रति परस्पर सहयोग की भावना नहीं होगी तो न व्यक्ति की उन्नति हो सकती है और न समाज की। इन पारस्परिक सम्बन्धों का चित्रण बघेलखण्ड के कहानीकारों की कहानियों में मिलता है। राम नरेश सिंह के 'छिमा' कहानी में 'बंगा' और गांव का सरहंग गुण्डा एवं निष्ठुर व्यक्ति है, जिसने ठाकुर दादा का बगीचा काट डाला और उनके खलिहान में आग लगाकर उन्हें कंगाल बना दिया, इसके बावजूद भी जब बंगा का इकलौता पुत्र बीमारी के कारण मृत्यु सैया पर पड़ा है तब ठाकुर दादा अपने घर से अदरक और तुलसी का पत्ता ले जाकर बंगा के बीमार पुत्र चैतुआ को अपनी गोद में लेकर दवा पिलाते है तथा जब तक चैतुआ अच्छा नहीं हो जाता तब तक वहां बैठे रहते हैं। इससे 'बंगा' का कठोर दिल भी पिघल गया, वह अपने पूर्व कृत्यों पर अपराध बोध से दब गया।

इसी तरह साम्प्रदायिकता की आग में जलता हुआ निहाल रहमत की बीबी को मारने के लिए ढूँढ़ता रहता है और रहमत की बीबी उसकी मां पार्वती के पास उसी घर में अपने बच्चे को लेकर छुप जाती इस पर निहाल अक्रोशित होता है "मां यह रहमतबा की औलाद है जिसने तीन हिन्दुओं को कतल कर दिया। हमें इससे बदला लेना है तथा इसके बच्चे को मारकर अपना प्रतिशोध पूरा करना है।" पार्वती मां कहती है– "निहाल मैं मां हूँ मां की कोई जाति नहीं होती वह केवल मां होती है ....इतना कह कर उसने गर्दन झुका दी और बोली ले बेटा चला कुल्हाड़ी आज पार्वती मर जाएगी परन्तु मां जिन्दा रहेगी।"[v]

भागवत प्रसाद शर्मा की तिमुहानी कहानी में ने पारस्परिक सम्बन्धों का यथार्थ पूर्ण चित्रण किया है। तिमुहानी गांव के तिवारी एवं दुबे की पुश्तैनी दुश्मनी उस समय रिस्तों में बदल गई जब गंगोली दुबे अपनी इकलौती पुत्री के दहेज में डेढ़ लाख रूपया देने में असमर्थ हो गये, तथा सारे गांव में उनके बड़प्पन की पोल खुलने लगी, एवं प्रतिष्ठा को आघात पहुँचने लगा उस समय 'छब्बू' तिवारी अपने लड़के की बारात सजाकर दुबे के घर में पहुँचे और बिना दहेज के शादी करने को तैयार हो गए तथा दुबे महाराज की मर्यादा बचा ली। द्वार में बारात ले जाकर 'छब्बू तिवारी' ने दुबे को सीने से लगा लिया और बोले–

भीख मांगै हम आएन है औ गवाही मां सगला गांव लै आएन है आज से दुबे और तिवारी टोला नहीं सिर्फ तिमुहानी गांव रहै चाही। आजु अपना के बिटिया के शादी होय बाली रही न। अपनाके बिटिया हमारिउ बिटिया आय अउ अपना के मर्यादा हमारिउ मर्यादा आय।

बघेली के कहानीकारों में जहां एक ओर पारस्परिक सद्भाव दया एवं सहयोग के चित्र खींचा है, वहीं दूसरी ओर विशेष प्रतिशोध, ईर्ष्या द्वेष आदि संकीर्णताओं का यथार्थ चित्रण भी इनकी कहानियों में मिलता है। सैफू की कहानी–'चुरियन केर कोर' बाबूलाल दाहिया की 'ढील मूठ डेगरू चलै' तथा भागवत प्रसाद शर्मा की 'टूका कउरा' कहानियों में देखने को मिलता है।

दाहिया के ढील मूढ डेगरू चलै के अन्तर्गत डेगरू हरवाह को पण्डित ददोली की महराजिन द्वारा तीज त्योहार में भी एक कुरई गेहूँ नहीं मिलता, ऊपर से उसे सूद्र एवं निम्न जाति होने का अपमान सहना पड़ा, तब डेगरू ने खेत में हल ले जाने से इंकार करता हुआ कहता है– 'ई ता आही हरपति देउता, सूद्र कांध न जांय, की लइ जइहै भूमिपति या ओढ़के रहि जांय।[vi]

बघेली रचनाकारों ने ग्रामीण अंचलों में व्याप्त कुमंत्रणाओं के कारण उत्पन्न विविध समस्याओं को भी स्थानीय रंग के अन्तर्गत चित्रित किया है। बघेलखण्ड के जन–जीवन में अनेक प्रकार के कलह एवं अर्न्तद्वन्द प्राप्त है। कहीं भूमि के कारण कलह उत्पन्न हो रहा है, कहीं जातिगत विवाद पैदा हो रहे हैं, कहीं पारिवारिक अर्न्तद्वन्द पाया जाता है तो कहीं खान–पानगत वैमनस्य देखने को मिलता है। ये सब बातें ग्रामीण समाज में यथार्थ सत्य के रूप में विद्यमान है। हिस्साबांट कहानी में सैफू ने इस तथ्य को दर्शाया है कि –परम्परागत रूप में चले आ रहे संयुक्त परिवार का विघटन कुछ चन्द स्वार्थी एवं खोटे लोगों की कुमंत्रणा के कारण ही होता है। जिसमें ससुराल भी एक एजेंसी के रूप में काम करती है। गोरखना के तीनों भाईयों के बीच बंटवारा के कारण उसके छोटे भाई एवं बहू को ससुराल एवं इष्ट मित्रों से मिलने वाली कुमंत्रणा ही है। इसी तरह 'बोतल के चुरकुन' कहानी में मां बाप का दुलारा बेटा 'लेदहा' को चोर, जुआड़ी और शराबी बनाने का श्रेय उसके मित्रों की कुमंत्रणा है।

'को न कुसंगत पाइ नसाई' में बाबूलाल दाहिया द्वारा चित्रित किया गया है कि जगदीश को जुआंडी, चोर के साथ–साथ उसके हरी–भरी गृहस्थी को उजाड़ने के पीछे उनके ससुराल वालों का श्रेय है। जब ससुराल में जगदीश के साले जुऑ खेलने के लिए उसे प्रोत्साहित करते है**–**'उइ कहिन के बहनोई तुम दांत निपोरत हय। का आव कउना जास्ती राज होइ गय है, बइठा बरिख रोज के तेउहार आय, मनई बाजी दुइ बाजी खेलि के हाथ जगाय लेय। सोउब परब त फेर रोजय है।[vii] इसकी परिणति यह होती है कि जगदीश पक्का जुंआरी बन जाता है तथा जुंऍ में अपना सर्वस्व खो देता है।

भागवत प्रसाद शर्मा की 'टूका कउरा' कहानी अयोध्या का कलेक्टर पुत्र रामसुफल के अर्न्तजातीय विवाह कर लेने के कारण पहले तो उसे उसके पिता के यहां लोग पानी तक न पीने की मंत्रणा करते है पुनश्च वही लोग–विशाले, रामाधीन, दुलारे आदि के लड़कों को जब वह अपने दफतर में नौकरी देना शुरू कर देता है तो सभी उसकी खुसामद करने लगते हैं और सत्यनारायण ब्रत पूजा के दिन उसके औरत का परोसा कढ़ी, भात खाते है**–**

'अजोध्या केर दुआर दुपहर होत–होत मनइन से खचाखच भरिगा, मेहेरिया अउर पतोह दउड़ि–दउड़ि सब के खातिर दारी करत देखानी। चारिउ कइती हंसी–ठट्टा केर बड़ेबर उठत सुनान, पांति बैठि गय सब भीतर से पतोह सामान निकारि–रिकारि देति जाय अब बहिरे से अजोध्या अउर रामसुफल परूसय लागे फेर सीताराम केर हुकांर उठी .... अइसेन समय मां

भला कुकुरवौ काहे पाछे रहै उनहूँ के कुकुराहट लककोर लाग, गांव आज एकउट मा रहा दुबारा न जानी पुनिहोय के न होय।[viii]

ग्रामीण परिवेश मे आज भी 'मनुष्य' रूढ़ परम्परा, अन्धविश्वास और कुण्ठाओं से घिरा हुआ है। आर्थिक और सामाजिक दबाव से शोषक समाज उसकी मूल चेतना को दबाये हुये है। उसने जीवन और चेतना के बीच एक गहरी खाई उत्पन्न कर दी है। परिणामतः अंचलों में गरीबी, पिछड़ापन, अन्धविश्वास, शोषण एवं उत्पीड़न ने आंचलिक जीवन को अभी भी घेर रखा है। विन्ध्यांचल के कहानीकारों ने अपने कहानियों में इस यथार्थ का मार्मिक चित्रण किया है।

कुंण्ठा ग्रस्त जीवन या समाज में गरीबी एवं शोषण प्रमुख रूप से उत्तरदायी तत्व है। शालालुद्दीन सिद्दीकी की 'देबारी' कहानी गरीबी का रोमांचक प्रसंग है– 'गरीब केर जनम उधारी मा, जमानी मजूरी मां, बुढापा सबै दिन सोच फिकिर अउ करजा मा बीतत है। ओखे जिन्दगानी मां भुखमरी आधे कउर देबारी होती है।[ix]

भागवत प्रसाद शर्मा की कहानी 'घर', तिरिया पुरान' एवं 'घुनघुना' में गरीबी का जो यथार्थ दृश्य उत्पन्न हुआ है उससे पाठकों में रोमांच उत्पन्न होता है। 'घुन' कहानी में नरबदिया की महतारी मटरी अपनी बेटी की मर्यादा खो देने के बाद छटपटती हुई अपनी बेवशी व्यक्त करती हुयी कहती है–'पेट चण्डाल जउन कराबय थोरे आय, अब धाबय न ता एहं उदड़ार का धाधे कसिकय। विना धाये कय दिन बीतत, के है बइठे–बइठे खबाबय बाला।[x]

ग्रामीण अंचलों में गरीबी का प्रमुख कारण शोषण है। बधेली कहानीकारों ने शोषण के खिलाफ भी अपनी लेखनी चलायी,। बाबूलाल दाहिया की कहानी 'ढील मूठ डेगरू चलय में शोषण के मार्मिक दृश्य देखने को मिलते है। डेगरूआ पण्डित दादोली राम की हरबाही करता है, रात दिन जी तोड़ मेहनत करने के बाद उसको मिलता दो पैला गोजरहा जबा, भला इसमें एक परिवार का गुजर हो सकता है। स्थिति को स्पष्ट करते हुये लेखक ने लिखा है कि–

'एतनेउ मेहनत मसक्कत मां ओही सिरिफ पोकट्ठे पइला मां दुइ पहला गोजरहा जबा। किसान जो जादा परसन्न होई जांय तब जड़ाबर में नाव का एकात ठे पुरान धुरांन मिरजाई ओढ़ना दय देबा करय। पै महर जिन अउबल नम्बर के कसरबारिन, ऊइ अपने खातिर ता मेर–मेर के जेउनारि बनामय, अंतरे रोज करहिया चिललिलातय रहय, पै डेगरूआ ओई मलीदन का खाय लेय।[xi]

शोषण के अतिरिक्त आंचलिक जीवन में कुण्ठा का एक और तथ्य वहां की अशिक्षा, अन्धविश्वास, आदि भी है। अन्धविश्वास एवं अशिक्षा ग्रस्त कुंण्ठा का चित्र बाबूलाल दाहिया की 'परेत' कहानी की नायिका 'भगवनिया' अपने मलेरिया ग्रस्त पति को ठीक करने के लिये अशिक्षा एवं अन्धविश्वास के कारण चउरा–देबाला में जाती है, जहां ओझा, मुरगा, बकरा एवं नारियल चढ़ाने के लिये उससे तीन सौ रूपये ऐंठ लेता है इसी प्रकार पण्डित गणेशी महाराज

भी ग्रह शान्ति कराने के नाम पर पूजा की सामग्री एवं पांच ब्राम्हणों के भोजन कराने के नाम पर सैकड़ों रूपये ले जाते है। शराब और अशिक्षा ग्रामीण अंचल में घुन की तरह लगा हुआ है, जिसका परिणाम यह होता है कि लोगों के घर में दीवाली का प्रकाश विकीर्ण नहीं होता। इस समस्या का चित्रण भी 'देवारी' कहानी में दृष्टव्य है–

रात मां सगला गांव सेठ महाजर, किसानन केर घर मां दियन केर बरात सजी पठाखा फूटें खुशियाली मनाई गर्यी, वही रात लक्ष्मी जब गांव मां पधारी तब पूरा गांव अंधियार मां डुबत उतरात रहा, सिर्फ सेमुंआ केर घर के आगे एकठे अंधिकारे मा जुगुर–जुगुर दिया जलत रहय।[xii]

बघेलखण्ड की जीवन गाथा का यथार्थ रूप यहां के कहानीकारों को मिलता है। आजादी के इतने दिनों बाद भी इस क्षेत्र के जनजीवन को आर्थिक, सामाजिक एवं मानसिक रूप से आजादी नहीं मिल पाई है। इस अंचल का एक वर्ग सदियों से परम्परागत गुलामी तथा शोषण की चक्की में पिसता रहा है। आज भी उसी प्रकार से शोषित है। देश में चुनाव की स्थिति जब आती है, मात्र उस समय कुछ सफेद पोश नेता आकर अपना उल्लू सीधा करते हैं बाद उन्हें फिर से शोषण के उसी दो पाटों में पांच वर्षो तक पिसना पड़ता है। शोषितों के ये दो पाटे है–उच्चवर्गीय वर्चस्व एवं शासकीय कर्मचारी, उच्च वर्ग के अन्तर्गत पुराने सामन्त तथा अधिकारी आते हैं जो आज भी इन अंचलों में अपना साम्राज्य कायम कर रखे हैं। प्रशासकीय कर्मचारी हैं जो जनता का शोषण करना अपना अधिकार समझते हैं। इन्हीं दो पाटों के बीच आंचलिक जन–जीवन आज भी त्रस्त है।

बघेलखण्ड के कहानीकारों ने इस सामन्त शाही वर्चस्व का यथार्थ पूर्ण चित्रण करने में कोई कोताही नहीं की है आज ग्रामीण अंचलों में सामन्त वर्ग किस प्रकार अपना प्रभाव जमा रखा है। उन पर कैसे–कैसे जुल्म ढाते हैं यहां तक की उनकी मर्यादा तक को नहीं छोड़ते। उनके सामने ही उनकी बहू–बेटियों की लाज कैसे लूट ली जाती है। किसी के थोड़ा भी सिर उठाने पर उसे गोली से इस प्रकार उड़ा दिया जाता है जैसे ये जंगल में किसी निरीह जानवर का शिकार करते है। अथवा अपने पालित गुण्डों के द्वारा उनकी षड़यंत्र पूर्व हत्या करवा देते हैं। घर में आग लगाकर घर के भीतर ही उन्हें भून डालते हैं। उनकी जमीन, जायदाद, जर–जोरू पर अपना पूरा अधिकार समझते हैं।

प्रशासकीय एवं जनता का सेवक कहे जाने वाले नेताओं को भी वे पटा कर रखते इन सब का यथार्थ पूर्ण एवं मार्मिक दृश्य बघेली कहानियों में वर्णित है।'चुरियन केर कोर' कहानी में सैफू ने इस घटना का वर्णन किया है कि किस प्रकार ये सामन्तवर्ण अपने व्यसन एवं कामाग्नि में दूसरों की विवाहित बहू बेटयों को उठाकर अपने महल के भीतर रख लेते हैं और अपने

विलास का शिकार बनाते है। इस कहानी की घटना सामन्ती कार्य कलापों का यथार्थ एवं मार्मिक स्मरण कराती है

'खटकीरा' कहानी के माध्यम से सैफू ने यह व्यक्त किया है कि जनता एवं समाज की सेवा करने वाले ये प्रशासकीय कर्मचारी एवं अधिकारी ही समाज को खटमल की तरह चूस रहे है। पटवारी, तहसीलदार, थानेदार, वकील, न्यायाधीश, पेशवर सभी तो जनता का खून चूसते है। इस कहानी का नायक 'भोदू' बताता है कि–

जब पेशी से लउट के अई, तब घरबाली मारे उराब के पूछवा करै के का भा? फइसला मां, भा के नही? अब का बताई हंसि के कहि देबा करी, के तोर चुरबा गहन धइ के जउन छ सै रूपिया लइ गयेन तय ओखर ता फइसला पेशकार अउ उकील कर दिहिन और रहिगा मुकदमा त पेशी होइ गइ है।[xiii]

भागवत प्रसाद शर्मा की कहानी 'घुनघुना' भी सामन्ती शोषण एवं अत्याचार का जीता जागता दस्तावेज है। जिसमें अनाथ विधवा की बेटी नर्मदिया जिस सामन्त के घर गोबर उठाती है उसी की हविस का शिकार बनती है। उसी समय नरबदिया का पति घटना को सुनकर आता है तथा नर्मदिया को लेकर उसका पति 'मनगौहा' कालू सिंह के द्वार पर न्याय मांगने जाता है, रात भर वहीं पड़ा रहता है सुबह दोनों नदारद हो जाते है, उस समय नर्मदिया की मॉ मट्टी रो–रोकर चिल्लाती है– 'नरबदिया का चण्डालै मारि डारिनि, रतन गौहा केर हलाल होइगा, हम सब केर निर्बस कइके छोड़ब एक–एक का बिनि–बिनि खाब।[xiv]

बघेली कहानियों में जीवन के विविध राग विराग और परम्पराओं, मान्यताओं के व्यापक चित्र मिलते है। रामप्रसाद तिवारी की कहानी संग्रह 'बूझ–अबूझ' में बघेलखण्ड के लोक जीवन पर केन्द्रित 15 कहानियों का संकलन है श्री तिवारी ने कहानियों मे बघेलखण्ड के लोकजीवन में यथार्थ की अभिव्यक्ति की है। बिना लाग–लपेट के अपनी बात कहने के अभ्यस्थ रामप्रसाद तिवारी के कहानी बूझ–अबूझ में ग्रामीण क्षेत्र में चलने वाली सह–मात के खेल का सजिव चित्रण है, गॉव में रहने वाले व्यवसायी और जमींदार आपस में मिल–जुलकर सहज–सरल और संकोची ग्रामीणों को अपने षंडयत्रों में फंसाकर उनके धन–संपति का दोहन करते हैं यह जानने के वावजूद सरल–सहज ग्रामीण जनों का याह विश्वास है कि सत्य–असत्य, न्याया–अन्याय, सही और गलत के अंतद्वंद्व में उलझे मामलों में विजय सत्य की ही होगी। उनको जीवन्तता देता रहा है जिसके बल पर हर कठिन परिस्थितियों में अपने आपको स्थिर बनाये रहते रहे है। ग्रामीण संस्कृति के चिंतन मन की आधारशिला चौपाल के सजिव चित्रण कहानीकार ने बूझ अबूझ कहानी में किया है–

गाउॅ केर दुइ चारि जने संझा मा बिरऊ के कउड़ा मा बइठत रहें। पीपर के नीचे दुइ झऊआ करसी, चारिठे मोगरी सुचि देइ मा कउनउ कोर कसरि नहीं होति रही।

गोरूआरी–बछेरूआरी कइ के बूझ–अबूझ फुरसतिहा कउडा मा आइनि जात रहें । चारि मुॅह, चारि बाति, केर बतंगड, कुछु लबरी कुछु फुरि केर उथेह लगि जात रहा।[xv]

बघेलखण्ड में भी नारी समाज की वही स्थिति निर्मित हुई, जो सम्पूर्ण भारत के विविध अंचलों में व्याप्त थी आजादी के बाद भी पुरूष वर्ग एवं सामाजिक परम्पराओं ने यहां की नारियों को अपनी संकीर्णता पूर्ण परम्पराओं से मुक्त करने में संकोच किया है। इस अंचल के कथाकारों ने नारी की इस वेदना को नजदीक से देखा और साहित्यकार का संवेदन शील हृदय द्रवित होने लगा। इन कहानीकारों ने अपनी कहानियों में नारी वर्ग की स्थिति का यथार्थ एवं मार्मिक चित्रण किया है। जिसमें नारियों की करूण दशा, नारी जागरूकता, विधवापन, बेमेल विवाह, दहेज–प्रथा, दैन्य भाव, यौन विसंगतियों, लोकापवाद, पर्दा प्रथा, नारी अशिक्षा आदि विभिन्न समस्याओं का चित्रण पाया जाता है।

रामनरेश सिंह की कहानी 'अमर बौड़ि', 'रानी' एवं 'नाता–रिश्ता में नारी जागरण, उत्पीड़न, थोथा अह की रानी पात्र 'चन्दी' अपने पति रामदीन, सासु एवं ननद के अत्याचार को सहन नहीं कर पाती तथा विद्रोह कर बैठती है। सासु एवं ननद को पीट देती है। पति को भी मारने दौड़ती है। 'चम्पी' ठाकुर बाबू के घर पर पूरे समाज के समक्ष अपने प्रति होने वाले अत्याचारों का बयान करती हुयी कहती हैः–

'अरे अम्मा ई हमारि मंसेरू आहीं, कहथां नेता के अगे जा, हमारि नौकरी लगबाउ। महतारी कहथी पटवारी के घरे जा, कमाई कइ लाउ, सबका खबाउ। तोर बाप हमका ठागि डारिसि हय, ता बिटियइ से सूल करब। येन करि बहिनी गमने जई, हम से कह थां के अपने भउजी महतारी केर गहना चोराइ लाउ। अम्मा जी अब अपनइ बताई के ई मंसेरू आहीं, सात फेरी डारि कइ लअ आए हैं, अब मोही मरिहीं।[xvi]

बघेली कहानियों में कहानीकार प्रायः जनपद की बोली को उसके समस्त जनपदीय प्रभावों के साथ प्रयोग करते हैं, इससे संवाद स्वाभाविक एवं अनौपचारिक बन गये हैं। इनके अधिकांश पात्र अशिक्षित या अर्द्धशिक्षित है। अतः उनके उनके वाक्य टूटे फूटे एवं अनपढ़ है। व्याकरण के विषयों की सतर्कता भी इनमें नहीं है फिर भी भाषा भावों की अभिव्यक्ति में पूर्ण सफल रही है–

'अब तहिन बताव गांव घर के बात आय, मेला ता सबै का जांय का है, अब कइसन कीन्ह जाय। रमदइला कहिस, सुनी मालिक एई पण्डित फुलिया का कुइयां मा पानी नहीं भरै दिहिन, एक रोज तलाये मां नहाति रही है तो गारी देत रहें..............। ठाकुर कहै लागे, देख रमदइला या सब होतै रहत है, आज बड़मंशी केर बात सामने है। पुरान बातन केर सुधि नहीं करै का होय। जो हम सब कोऊ इहै मेर कहै लागी ता अन्तै बाले का कहि हैं।[xvii]

कहना न होगा कि बघेली कहानी का इतिहास हर कहानी की तरह पुराना है। बघेलखण्ड के जन जीवन में सदियों से कही सुनी और भोगी जाने वाली कथाओं के भण्डार से आज की बघेली कहानी को खाद और बीज की प्राप्ति हुई है। जो वक्त के साथ अंकुरित होकर अब पल्लवित और पुष्पित हो रही है।

संन्द्रर्भ सूची–

[i] त्रिपाठी अभयराज बघेली लोक कवियों का व्यक्त्वि एवं कृत्तिव अप्रकाशित शोध प्रबंध पृ 52
[ii] ग्रियर्सन जार्ज इवूलूशन ऑफ अवधी पृ 6
[iii] ग्रियर्सन जार्ज इवूलूशन ऑफ अवधी पृ 7
[iv] तिवारी उदय नारायण भाषा विज्ञान की भूमिका पृ 183
[v] सिंह रामनरेश छिमा संकलित
[vi] दाहिया बाबूलाल ढील मूठ डेबारू चलै
[vii] दाहिया बाबूलाल कोन कुसंगत पाइ नसाई
[viii] शर्मा भागवत प्रसाद टूका कउरा
[ix] सिद्दीकी शलालुद्दीन देबाती कहानी
[x] शर्मा भागवत प्रसाद घुनघुना कहानी
[xi] दाहिया बाबूलाल ढील मूठ डेमरू
[xii] देबारी शलालुद्दीन सिद्दीकी
[xiii] सिद्दीकी शलालुद्दीन खटकीरा
[xiv] शर्मा भागवत प्रसाद घुनघुना
[xv] तिवारी रामप्रसाद बूझ अबूझ पृ 12
[xvi] सिंह रामनरेश अमर बौड़ि
[xvii] सिंह रामनरेश छुआ–छुत

ENGLISH HISTORIOGRAPHY OF MEDIEVAL INDIA : A BRIEF SURVEY

Dr. NEELAM RANI
Asstt, Professor, Deptt. of History, MDU Rohtak
Email: neelamrani1284@gmail.com

In a study of modern historiography on Medieval India, English historical writing on the period forms the focal point. The servants of the East India Company looked upon the Christians as their predecessors in supremacy of India and their policies and administration appeared to offer 'clause to the present political and administrative problems'. Christian historiography in India has been aptly described primarily a 'history of historians', 'the study of historians by historians' or 'a chronicle of chronicles', a chronicle of emperors'.[1] Its methods were like those of *Hadith* study, it was derived from authority and the historian was thus 'a scribe rather than a researcher'.[2] Notwithstanding their pledged search for truth as revealed in *Quran*, most Christian historians in India were courtiers or officials writing on the orders of their rulers with an eye to gain favour.

British historians, in spite of Buckle and Lacky and the continental efforts of Riehi, Freytog and Kurchardt, did not attempt to change either the methodology or the form of native Christian Historiography, In general, they rather subscribed to it. The framework of political narrative was retained and no need was felt to show the process of how evidence was turned into history, for history was written from the testimony of 'authorities' and sources'.[3] The medieval Indian history sections of James Mill, *History of British India* (1817) of G.R. Glieg, *History of the British Empire* (1830) and of Mountstuart Elphinstone, *History of India* (1841) were largely based on Firishta as translated by Dow and Briggs.

The trend continued afterwards as publication of *Bibliotheca Indica Series* brought out, edited texts of principal medieval Indo-Persian histories. Another major work that left a deep, and almost exclusive impact well into the twentieth century, was Elliot and Dowson, *History of India as told by its Own Historians*-eight volumes of translations into English from the Persio-Arabic Historians of Medieval India. For Lane-Poole, 'to realize Medieval India' there was "no better way than to drive into the eight volumes of the priceless *History of India as Told by Its Own Historians."* [4]

The same tendency was evident in Ishwari Prasad, *History of Medieval India,* 1925 who 'relied upon' original authorities' and based his opinions on actual facts-what Peter Hardy calls 'culling readymade facts' or 'mining readymade facts' from historical data.[5] Thus, the earlier native methodology on Medieval Indian history was continued by British scholars as well as by some native historians writing in English with western training. Having been aware of the works of Alexander Cunningham, John Marshall and J. Burgess in the sphere of archaeology, or Moreland in Economic history, their confining themselves to political history, appears to have been due to factors other than sheer exigency."[6] Hence, from the late eighteenth century, the Company was a very zealous patron of such historical studies. More than anything else, self-interest led firstly to the rise of Persian scholarship and secondly prompted historical writing on Christian India based largely on Persian literary sources, with a

keen eye on its current political and administrative implications for the British interest." [7]

Another undercurrent of such historical studies was the impact of the contemporary British schools of historical thought which easily divides most of the British historians as representatives of the Enlightenment. 'Evenglicalism, Utilitarianism and Romanticism.[8] Moreover, the impact of some outstanding British historians notably Edward Gibbon and William Jones, on medieval Indian history, though very much indirect, was nonetheless vital. Despite Gibbon's and Jones, affiliations to the schools of Enlightenment and Romanticism, respectively their impact in certain respects is easily discernible on most of the British historians irrespective of the Schools they belonged to, as regards some general assumptions about Hindus and Christians.

For Gibbon, Christians as members of a distinct society and its inherent values were people different from everyone but Christians. Their civilization had stumpled under the blows of despotism, both civil and spiritual.[9] Paradoxical it was, but both rise and fall of Islamic civilization owed it to its religion.[10] In summing up Gibbon had been struck not so much by its success as its failure and the Failure he attributed to their 'betrayal of Reason'.[11] The Islamic civilization at its best was superior to medieval European civilization but it was no match for its counterpart in modern Europe.[12] William Jones' assessment of the Hindu society and civilization too had significant implications for Christian Indian History. The Hindus were for him 'the Greeks of Asia' and he attributed the decline of the Hindu civilization to the Christian conquest of the country. For all his love for, and reputation as a great admirer of Asians, Europe remained for him 'the fair princess of the world' and Asia her 'handmaid'.[13]

Another and perhaps the most striking aspect was that from Alexander Dow (1768-72) to Wolsely Haig (1928) the British historical writing on medieval India clearly lends itself to an inherent unity of idea, irrespective of the different influences of current British intellectual life on it. Some of these historians sought to inform, while others even criticised the British policies towards India, but none failed to justify British rule over India.[14] There was difference in attitudes towards medieval India, in manner and shades of subtlety in conveying it, but they all assumed 'the intellectual and moral superiority of contemporary Great Britain over medieval Christian India."[15] Besides, till the end of late 19th century British Imperialism (1870-1905)— the ascendancy of the small island people of England to the extent of the 'Sun never Setting' in their empire could only be explained in terms of superiority of the British national character.[16] The impact of political and administrative exigencies on the writings on medieval India led to a motivated interpretation. Of its implications for historiography of the period, even the then British historians were quite aware of it and presently they are even more precise about it. That it led not only to motivated interpretation, it also postponed the percolation and option of wider concepts of historiography prevalent in the West.[17]

References

1) See P. Hardy, *Historians of Medieval India*, Pp. 1-2. Jagdish Narayan Sarkar, "History and Historians of Mediaeval India", *The Quarterly Review of Historical*

Studies, Vol. III, Nos. I & 2. 1963-64, p. 54.

2) P. Hardy, "Some Studies in Pre-Mughal Christian Historiography", *Historians of India, Pakistan and Ceylon*, p. 125.

3) P. Hardy, *Historians of Medieval India*, pp. 16-17.

4) Stanley Lane-poole, *Medieval India Under Mohaohammedan Rule, 1903*, reprint, 2nd ed. Universal Publishers, Delhi, 1971, Preface, vi.

5) P. Hardy, *Historians of Medieval India*, PP. 12-13

6) Jagdish Narayan Sarkar in "History and Historians of Mediaeval India", *"The Quarterly Review of Historical Studies*, Vol. III, Nos. 1 & 2, 1963-64, PP. 54-55, Sums it up firstly 'due to the natural human motive of economising labour-having found readymade 'evidence' in lndo-Christian Chronicles "superior to Our own (English) medieval chronicles ... written for the most part not by monks but by men of affairs, often by contemporaries who had seen and taken part in the events they recount" (Dodwell, India, Vol. I, pp. 22-23). Secondly, due to the influence of contemporary British historiography which was essentially political and constitutional, thirdly, due to British Imperial pride and complacency about the blessings of British rule and fourthly, many of British pioneers in field were primarily officials and not academicians, they approached "the problems of Indian history from the administrative point of view".

7) J.S. Grewal, *Christian Rule ill India: The Assessments of British Historians*, pp. 23-24. In 1769, Robert Orme was appointed historiographer to the East India Company at £ 400 a year, succeeded after his death in 1801 by John Bruce. The East India Company Directors had subscribed for 150 copies of John Richardson's *Dictionary of Persian Arabic and English* (1777), an encouragement extended to *The Institutes of Timour*, They also resolved to subscribe for forty copies of every work of India and often subscribed for more than forty. Sir William Jones made observation on 'magic wand of self-interest' when in 1771 he published his *Persian Grammar* to meet the demands of those who wished to learn the language in order to improve qualifications for service in East India Company.

8) See A.N. Whitehead, *Adventures of Ideas*, Introduction, xiii, for details, J.S. Grewal's *Christian Rule in India : The Assessments of British Historians*.

9) Edward, Gibbon, *The History of the Decline and Fall of the Roman Empire* ed. J.B. Bury, Methuen & Co., London, 1896-1900, Vol. V, pp. 323-382, 387, 397, Vol. VI, 48-51, Vol. VII, 13.

10) J.S. Grewal, "Edward Gibbon on Islamic Civilization", *Medieval India; History and Historians*, p. 24.

11) Edward Gibbon, *The History of the Decline and Fall of Roman Empire*, Vol. III, 71

12) *Ibid.*, Vol. I, 23.

13) William Jones, *The Works* (1799-1807), Indian reprint, Agam Prakashan, Delhi, 1977, III, 24-46, 229-52.

14) J.S. Grewal, *Christian Rule in India* : *The Assessments of British Historians*, pp. 159-163.

15) *Ibid.*, Introduction, p, 5

16) E.T. Stokes, "The Administrators and Historical Writing on India". *Historians of India, Pakistan and Ceylon*, p. 384.

17) Edward Thompson and G.T. Garratt in a bibliographical note to their work, *Rise and*

Fulfilment of British Rule in India, S. Chand & Co., Delhi, 1934, p. 597, noted 'Of late years Increasingly, and no doubt all Indian questions have tended to be approached from the 'standpoint of administration, "Will this make the easier and quieter Government"? This knowledge of being in *Partibus infidellum* exercises a silent censorship, which has made British Indian history the worst patch in current scholarship". Peter Hardy in *Historians of Medieval India,* p. 9, writes, "There is little doubt, too that the fact that so many British writers on medieval period were not academic historians but officials accustomed to approach Indian problems as problems of government and administration, delayed the reception among historians of India, of wider concepts of the scope of historical study in England ... Sir Wolseley Haig, Sir William Hunter Sir Alfred Lyall, William Irvine, Henry Beveridge and Sir Richard Burn had all had official experience to influence their later academic activities".

हिन्दी कविता में व्यंग्य

(डॉ. श्रीमती अंजलि शर्मा)
प्राध्यापक (हिन्दी)
शास.बिलासा पी.जी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय
बिलासपुर (छ.ग.)

समसामयिक परिस्थितियों में निरंतर परिवर्तन के परिणाम स्वरूप जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बदलाव आने लगा है। शोषक और शोषित का एक तीखा वर्ग संघर्ष संक्रामक रोग की तरह पनप रहा है। राजनीति में नेताओं का दृष्टिकोंण इतना ओछा और टुच्चा हो गया है कि इनसे किसी तरह मूल्यों की अपेक्षा करना व्यर्थ है। राजनेताओं की सेवा जनकल्याण प्रेरित न होकर स्वार्थ सिद्धी का साधन हो गया है। ठीक यही स्थिति परिवार में भी है, प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थ की पूर्ति चाहता है। अपनी नैतिक, अनैतिक आकांक्षाओं की तुष्टि चाहता है। परिणामस्वरूप परिवार, समाज देश में तमाम प्रकार की भ्रष्ट बातें आ गई हैं। मनुष्य कुंठा, घुटन, शोषण, संजास और आक्रोश को अपने अंदर कोढ़ की तरह महसूस करता रहा है। इस संड़ांधपूर्ण व्यवस्था इस दिशाहीनता से नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है, ऐसी परिस्थिति में सहज ही है कि लेखक की लेखनी कुव्यवस्था को बदलने के लिये पैनी हो। कहा भी गया है जो काम तोप, तलवार नहीं कर सकते, व्यंग्य की पैनीधार से सफलता मिलती है। चोट खाया मनुष्य जब बात करेगा तो व्यंग्य में ही बोलेगा, जब कुछ करना होगा तो प्रहार ही करेगा। यही कारण है कि रचनाकार, कृतिकार, कलाकार ने स्वयं को भीतर बाहर से आहत अनुभव किया है, वह व्यंग्यशील हो उठा है।

आधुनिक हिन्दी कविता में व्यंग्य आकस्मिक नहीं है उसमें मानवीय जीवन की कटुता, राजनीति, समाजकी अभिव्यक्ति की विसंगतियों को व्यक्त करने के लिये सर्वत्र व्यंग्य का सहारा लिया है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य का महत्व बढ़ गया। आधुनिक युवाकवि असभ्यता पर व्यंग्य तो करता ही है, साथ ही सभ्यता पर भी व्यंग्य करता है। उसने बेईमानी को अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है तो कथित ईमानदारी पर भी व्यंग्य करने से नहीं चूके हैं। जनता को बेवकूफ बनाकर वोट लेने वाले और पुनः मूर्ख बनाने वाले नेताओं पर व्यंग्यात्मक आक्रमण किया गया है, तो धोखे में आ जाने वाली जनता की बेवकूफियों को व्यंग्य का विषय चुना है। यहां तक कि कवियों ने व्यंग्य न बरने वाले विषय पर भी व्यंग्य किया है जैसे "व्यंग्य मत बोलो

काटता है जूता तो क्या हुआ
पैर में न सही
सिर पर रख डोलो।"[1]

स्वातंत्र्योत्तर तथा समकालिन कविता में हर दृष्टि से व्यक्ति एवं कलाकार के मोह भंग की सूचना गहनता एवं तीव्रता के साथ मिलती है। जागरूक रचनाकार संत कबीर के आधुनिक प्रतिनिध से लगते हैं। समसामयिक कवियों ने कबीर से भी अधिक तेजी से चल रही संसार रूपी चक्की में पिसने वाली मनुष्यता के दुखदर्द को और भी बेबाकी से

जनसामान्य तक पहुंचाया है।

व्यंग्य की उत्पत्ति वि + अंग = व्यंग्य से है। व्यंग्य शब्द अंग्रेजी के सेटायर के आधार पर किसी व्यक्ति या समाज की बुराई या न्यूनता को समकालीन हिंदी कविता के भली भाँति सी दिखले वाली, मीठी–मीठी सी लगने वाली सीमाएं तोड़ी हैं। समकालिन कविता बौद्धिक कलाबाजी के विरूद्ध अपने समय के खतरों के प्रति अधिक चौकन्नी है। उसकी अपलक आत्मचेतना विराट जनता की स्वयंस्फूर्त चेतना के अद्वितीय सृजन से आत्मीय, सजग और विश्लेषणात्मक रिश्ते बनाती हैं।

आठवें दशक के आरंभ के साथ–साथ कविता दिशहीन बेचैनी से निकलकर जनता की दिशावाचक सक्रियता के साथ उपजी, शासक दल को भी गरीबी हटाओ और राष्ट्रीयकरण का नारा देना पड़ा, परिस्थितियों का रूख जनतांत्रिक हुआ। कविता भी भाववाद के दलदल से निकलकर वस्तुस्थिति से साक्षात्कार का प्रयत्यन करती दिखाई पड़ी। अध्ययन, चिंतन, मनन से संतुलित यथार्थ दृष्टि विकसित हुई। भावावेश प्रदर्शन की जगह बाहर देखने की प्रवृत्ति बढ़ी। सन् उन्नीस सौ सत्तर के बाद बदली हुई सामजिक परिस्थितियों में काव्यबोध के विकास का मार्ग तैयार हो रहा था लेकिन ऐसे कवि भी थे जो रूढ़िवादी मार्ग को छोड़ने के लिये तैयार नहीं थे।

नवें दशक की कविता का खुलापन विगत के खोखलेपन को भरने का कार्य करता है। छोटी–छोटी अनुभूतियों भी स्थानीयता के साथ कविता में आ रही है। "नब्बे दशक की नवोत्तरी कविता प्रतिबद्धता के परे और बाद की कविता है जिसमें प्रतिबद्धता का लोकधर्मी स्वरूप है, अकविता की आक्रामकता है, और नई कविता का वस्तु यथार्थ है।"[2]

साठोत्तर पीढ़ी के कवियों ने रोमानी दृष्टि का पूर्णतः परित्याग किया। परिवेश के प्रति सजगता रखते हुए उन्होंने साधारण आदमी की परेशानी तथा संघर्ष में हिस्सा लिया। दो चुनाव के पश्चात जन तंत्र की विसंगतियों, अवसरवादियों की क्षुद्रताओं और राजनीति की कमजोरियों ने जनता को अपना असली रूप दिखा दिया। साठोत्तरी कवियों ने टूटते हुए मूल्यों, विघटित मान्यताओं, अनैतिक नैतिकताओं, खोखली भावुकता के विरूद्ध आवाज उठायी। इन कवियों ने मुक्त और संकोच रहित भाषा में अपनी मनोभावना को अभिव्यक्त किया। साठोत्तरी कवियों ने यौनाचार का खुला चित्रण भी किया, बावजूद इसके इन कवियों ने राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, वैयक्तिक विसंगतियों एवं अभावों पर पूरे आक्रोश से अपनी लेखनी चलायी। युवा व्यंग्यकार कवियों की यह मानसिकता रही कि भाषा के इंद्रजाल में उलझाये बिना अपनी कविता में प्रत्यक्ष आक्रमण करने में विश्वास रखती है।

श्रीकान्त वर्मा नई कविता के कवि हैं, तथपि साठोत्तरी रचनाओं में वे आक्रोश, मोहभंग और बेबाकी का रंग लेकर प्रस्तुत होते हैं। इनकी कविता पूर्णतः नाटकीय संरचना के माध्यम से समूची स्थिति के व्यंग्य को उठारने में सफल है। इनकी रचनाओं में सभ्यता के साथ–साथ असभ्यता के लिये असुविधा पैदा करने वाला व्यंग्य मिलता है। श्रीकान्त वर्मा की सधी हुई अभिव्यक्ति के कारण कविता का संपूर्ण आक्रोश सहज ही व्यक्त हो जाता है, जो पाठक को सोचने पर मजबूर कर देता है। राजनीति की सड़ियल चालबाजियों पर गहरा

आक्रोशपूर्ण व्यंग्य कवि ने किया है। "बुखार" उदाहरण दृष्टव्य है :–

"मंच पर खड़े होकर, कुछ बेवकूफ चीख रहे हैं।
कवि से आशा करता है सारा देश
मूर्खों देश को खोकर ही, मैंने प्राप्त की थी
यह कविता।"[3]

अन्याय विलासिता और मुखौटों पर व्यंग्यात्मक प्रहार करने वाले श्रीकान्त वर्मा ने षड्यंत्र और लोकतंत्र की तुकें जोड़कर दूसरों की क्रिया कलापों पर प्रहार करते हुए कहते हैं :–

"कुछ लोक पूर्तिया बनाकर
फिर
बेचेंगे क्रांति की (अथवा षड्यंत्र की)
कुछ लोग सारा समय
कसमें खायेंगे
लोकतंत्र की
मुझसे नही होगा
जो मुझसे
नहीं हुआ वह मेरा
संसार नहीं।"[4]

रघुवीर सहाय यथार्थ के प्रति अधिक जागरूक रहे हैं। इनकी कविताओं में सामाजिक यथार्थ को व्यंग्य के माध्यम से प्रमुखता से उभारा गया है। "आत्महत्या के विरुद्ध" काव्य संकलन में व्यंग्य की तीव्र पीड़ा की अभिव्यक्ति हुई है। संवेदनशील व्यक्ति के अकेलेपन और उनके द्वारा संस्थापित व्यवस्था के हाथों बेवकूफ बनने से इंकार करना रघुवीर सहाय की कविता में स्पष्ट दिखाई देता है। कड़वी सच्चाई को सीधे और बेलाग ढंग से कह देना रघुवीर सहाय को साधारण आदमी के करीब ले आता है। उनका व्यंग्य चतुर्मुखी है:– एक ओर कोला भाई यंत्री, खुशनसीब खुशीराम, नेकराम नेहरू, दिग्विजय नारायण सिंह, मुसद्दीलाल, घिघियाते उपकुलपति, कुकुआते राजकवि, फदकते संपादक, मंहगी चलती महिलाएं, क्रांतिवार्ता करते बुद्धिजीवी, देश को खाते हुए दल आदि सभी पर तीखा मर्मान्तक व्यंग्य किया है। दूसरी ओर अंधे बाप, हांफते बच्चे, भीख मांगते बुढ्ढे की कुतरी हुई खुशियों से बेहियाई जिंदगी जिसे जाने की दर्दनाक दास्तान भी इनकी रचनाओं में उभरता है। रघुवीर सहाय की कविता का मुख्य स्वर लड़ाई है, वह समाज में सबकी पीड़ा महसूस करके अपने टूटे हुए व्यक्तित्व को रचना योग्य बनाये रखने की कामना लेकर चीजों को आर पार देखकर प्रहार करते हैं।

"आत्महत्या के विरुद्ध" की कई राजनीतिक व्यंग्य कविताएं अपनी विषय वस्तु की समग्रता और शिल्प सिद्धी के कारण समसामयिक व्यंग्य को उभारने में सफल रहे हैं। "नेता क्षमा करें" में "लोगों में श्रेष्ठ लोगों" नेताओं को श्रेष्ठ कहकर कवि इस श्रेष्ठता पर व्यंग्य करते हैं :–

"लोगों में श्रेष्ठ लोगों मुझे माफ करो
मैं तुम्हारे साथ नहीं आ सकता।"[5]

लोकतंत्र के रक्षक ही उसके भक्षक हो गये हैं, उसका प्रतिनिधित्व मुसद्दीलाल करते हैं। भक्षक के विरोध में बोलने वाले कम हो रहे हैं, लेकिन बोलने से कुछ न कुछ तो होगा वे कहते हैं :– "कुछ होगा कुछ होगा अगर मैं बोलूँगा। न टूटे न टूटे तिलस्म सत्ता का, मेरे अंदर एक कायर टेटूगा। टूट मेरे मन टूट एक बार सही तरह।"[6]

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के काव्य में व्यंग्य सुनने वाले तिलमिला उठे और कलई खुलने वाले चित्रण मिलते हैं। कवि विडम्बनाओं को बर्दाश्त करने वालों के सारल्य पर भी व्यंग्य करते हैं। उन्होंने अपने काव्य में व्यंग्य को विडम्बना और विसंगति को उभारने वाले माध यम के रूप में अपनाया है। "काठ की घंटियॉ" में संग्रहीत कविता "काफी हाऊस में एक मेलोड्रामा" में व्यंग्य देखिये :–

"बच्चों, उनसे बचो। जो मुर्दा हाथ गिनकर। युग निर्माण की घोषणा कर रहे हैं। बचो उनसे बचो जो लकड़ी की टांगों पर दौड़कर। मानव प्रगति का इतिहास लेखने लगे हैं।"

कुंवर नारायण आज के परिदृश्य में अकेले कवि हैं, जिनका नैतिक दार्शनिक विजन यथार्थ की जटिल रहस्यमयता को बौद्धिक अभिव्यक्ति में बदलकर आश्वस्ति का अनुभव करता है। कुंवर नारायण के कविताओं में व्यंग्य विलक्षण चमत्कार और उक्ति वैचित्र्य के कारण रोचक होता है। आधुनिका की रूप सज्जा निर्वस्त्रीकरण का प्रचलन और शारीरिक प्रदर्शन वृत्ति पर व्यंग्य करते हुए वे कहते हैं :–

"देखने में दर्द है, सुनने में सर्द है,
उठने में गर्द है, आदमी में औरत है,
औरतों में मर्द है।"

कवि की बाह्य पीड़ा आत्म प्रचार और पुरुषत्वहीन स्त्रैणता पर कवि ने तीक्ष्ण प्रहार किये हैं।

कुंवर नारायण व्यंग्य विडम्बना का उपयुक्त छंद पाने की कोशिश में मैथलीशरण गुप्त से भी पीछे जा सकते हैं, उदाहरणार्थ भारतेंदु के जिंदादिली से उनकी "सफलता की कुंजी" कविता पढ़ने पर "अंधेर नगरी" की याद आ जाती है उदाहरण देखिये :–

"उस वक्त वहां दो ही थे, लेकिन जब गोलियां चलीं
मारा गया एक तीसरा जो वहॉ नहीं, चाय की दुकान पर था.......
पकड़ा गया चौथा, जो चाय की दुकान पर भी नहीं
अपने मकान पर था, उसकी गवाही पर
रगड़ा गया पांचवा, जिसे किसी छठवें ने
फॅसवा दिया था, सातवें के शिनाख़्त पर
मुकदमा जिसे आठवें पर चला, उसके फलस्वरूप
सजा नवें को हुई

और दसवां जो बिल्कुल साफ छुटकर
एक ग्यारहवें के सामने गिड़गिड़ाने लगा वह
उसकी मार्फत
एक नयी सफलता तक पहुंचने की कुंजी को
उंगलियो पर नचाने लगा।"

यहाँ व्यंग्य न्यायसत्ता पर है जिसके आसपास मूर्खता है, उसके चलते अन्यास हो जाता है। यहां जिस तंत्र पर व्यंग्य है, वह ज्यादा चतुर चालाक तकनीक साधन संपन्न है।

न्याय व्यवस्था पर मार्मिक व्यंग्य करते हुए वे कहते हैं :– "जिन्हें सजा सुनाई। मौत की सजा। कब के मर चुके थे। जिन्हें रिहाई दी गई। पूरी सजा काट चुके थे।"

धूमिल साठोत्तरी पीढ़ी के उन युवा कवियों में से हैं, जिनकी कविता आंतरिक सच्चाई के कारण महत्व रखती है। मनुष्य के चारों ओर बढ़ती व्यभिचार, चरित्रहीनता, बेईमानी, का पूरा एहसास धूमिल की कविताओं में लिता है। देश की वर्तमान स्थिति, जन साधारण की स्वप्न भंग की स्थिति, समाजवादी नारों के खोखलेपर, बेईमानी से भरा निरर्थक जीवन जिये जाने की स्थिति, उदासीनता की मनोवृत्ति इन सभी पर धूमिल ने व्यंग्य किया है। "बीस साल बाद" कविता में वह देश के नक्शों पर गोली के छर्रों, बिखरे जूतों की भाषा, गाय की गोबर के साथ आजादी को सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम बताकर यह भी कह देते हैं कि इन थके हुए रंगों को एक पहिया ढो रहा है, उदाहरण दृष्टव्य है :–

"और सड़कों पर बिखरे जूतों की भाषा में
एक दुर्घटना लिखी गई है।
हवा में उड़ते हिन्दुस्तान के नक्शे पर
गाय ने गोबर कर दिया है।"

साठोत्तरी परिवेश को सच्ची और व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति देने वाले कवियों में लीलाधर जुगड़ी प्रमुख है। उन्होंने युगीन परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में साधारण आदमी द्वारा भोगी जाने वाली पीड़ादायी परिस्थितियों पर प्रहार किया है। अर्थशून्यता, मनुष्य की अनिर्धारित नियति, आदर्श शून्यता, राजनीतिक षड्यंत्रों आदि को पूर्णतः उघाड़ देने की क्षमता जुगड़ी जी की रचनाओं में मिलती है। चुनाव, राजनीतिक पार्टियॉ, पिसती हुई जनता और व्यवस्था के ठेकेदारों की आजादी के बाद की स्थिति आदमी के बदलते अंदाज को कुछ इस तरह कहते हैं :–

"मौसम बदतमीजी की हद से
बाहर हो गया है
जहाँ मैं हूँ, जहाँ तुम हो
पहिए पहनकर
पद से
पहचान का
हर आदमी कायर हो गया है।"

चंद्रकान्त देवताले समसामयिक कवि हैं। "हड्डियों में छिपा ज्वर", दीवार पर खून से सना लकड़बघ्घा हँस रहा है।" इनके प्रकाशित काव्य संग्रह हैं। आज की दुनिया को सही दिशा में न ले जाने की कविता की अक्षमता उन्हें दुखी कर देती है और यह जानते हुए भी भ्रष्ट परिवेश में व्यर्थ हो गई है कविता। कवि कहते हैं, "मैं भड़भूजे की तरह इन शब्दों को कब तक फोड़ता रहूंगा ? मस्तिष्क के भीतर मृत मछलियों को ऊबेरते हुए नदी के चढ़ते हुए बुखार को कब तक अपनी हड्डियों के थर्मामीटर में चुपचाप पढ़ता रहूंगा ? आगे व्याकुलता से कहते हैं :– "मैं थिरकती हुई धरती पर खिलते हुए वसनत के साथ। उस साबुत घर के सपने। कविता सौंपना चाहता हूँ। सभ्यता के इस उफनते उजाले में। भूमिगत कैंसर के खिलाफ। अपनी एक निहत्थी कविता को लेकर। मैं भी कीचड़ की दीवार पर। कुछ छाप देना चाहता हूँ।

सामाजिक सरोकारों से सम्बद्ध कविता में संयम बरतते हुए व्यंग्य करते हैं।

समसामयिक कवियों में सुरेन्द्र तिवारी का नाम व्यंग्य के प्रसंग में अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके संकलन "जूझते हुए" की समस्त कविताएँ प्रहारात्मक व्यंग्य करती हैं। नौकरशाही, भाई भतीजावाद, दल बदल पर उन्होंने सटीक व्यंग्य किये हैं। सुरेन्द्र तिवारी ने "पार्टी" शीर्षक कविता में पार्टी के दोहरे अर्थ का भरपूर उपयोग करके व्यंग्य की सृष्टि की है :–

"समझदार खा पीकर चले गये
नासमझ कर न सके जल्दी
नासमझ पार्टी में बने रहे
समझदारों ने पार्टी बदल दी।"

समसामयिक व्यंग्यात्मक काव्य रचने में माणिक वर्मा पूर्णतः सक्षम कवि हैं। उनके व्यंग्य में प्रहार सर्वाधिक मिलता है। इनकी रचनाओं में युगीन सामाजिक, राजनीतिक व्यंग्य अधिक मिलते हैं। बौद्धिक ऐयाशी पर व्यंग्य करने वाली निम्नांकित पंक्तियॉ दृष्टव्य हैं :–

"क्रास का अर्थ है हमारे लिये दूसरे सूली चढ़ें
और उनको मसीहा मानने के प्रश्न पर
काफी हाऊसों में बैठक हम एक दूसरे से लड़ें।"

नयी पीढ़ी के शृद्धतः व्यंग्य कवियों में दिनकर सोनवलकर का नाम लिया जाता है। इनकी कविताओं में वर्तमान जीवन की असंगतियों पर प्रहार मिलता है। "साहित्यिक बिजनेस", "दीवाने आम", "तकदीरें", "गली और रूमाल", "क्रान्ति", "कथनी और करनी", "दोहरे व्यक्तित्वों की गुलामी", "नई पीढ़ी", "इंटलेक्युअल", "चमड़े के सिक्के", "नई कवि की शंका", "अखबारी जिन्दगी", "गणतंत्र की शपथ", "तीन आईने" इन रचनाओं में व्यंग्य का पैनापन स्पष्ट दिखाई देता है।

दिनकर सोनवलकर सामाजिक बोध को अनुभूति के स्तर पर भोगते हैं और उसे सहज रूप से अभिव्यक्ति भी देते हैं। संवेदना की प्रचुरता और कवियों के प्रति ईमानदार होने के बावजूद अधिकांश रचनाओं में आक्रोश का स्वर कुछ धीमा सा प्रतीत होता है। "गणतंत्र की शपथ" कविता में समसामयिकता को सटीकता के साथ प्रस्तुत करते हैं :–

"और इस तरह
पूरा हो रहा है स्वप्न
स्वराज्य का
स्व यानि मैं और मेरा परिवार
मेरे रिश्तेदार
कुछ पूँछ हिलाने वाले कुत्ते वफादार।"

उपरोक्त कविता में जनतंत्र की शपथखाने वाले नेताओं के कुकृत्यों एवं स्वार्थों पर करारा व्यंग्य करते हैं। सोनवलकर जी विषमताओं को व्यक्त करने के लिये व्यंग्य को रचनाओं का माध्यम बनाया।

बढ़ते हुए अमानवीकरण तथा मूल्यों के ह्रास के कारण आदमी जैसे–जैसे यंत्रवत होता जा रहा है, मूल्यों की गहरी प्रतिबद्धता गायब होती जा रही है। लोग ज्यों–ज्यों नारेबाजी भाषणबाजी की ओर आकर्षित होते जा रहे हैं, कवियों की जिम्मेदारियाँ बढ़ गई हैं। वह एक तरफ सपनों की लौ जगाये रखें, दूसरी ओर चुप्पी साध लेने का खतरा मोल न लें।

संदर्भ ग्रंथों की सूची

1. एक सूनी नाव सर्वेश्वर दयाल सक्सेना – पृ. 56
2. पल प्रतिपल जुलाई दिसम्बर 1996 पृ.क्र. 149
3. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य शेरजंग गर्ग पृ.क्र. 374
4. स्वातंत्र्येत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य पृ.क्र. 375
5. "हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास" बच्चन सिंह पृ.क्र. 442
6. "आत्महत्या के विरूद्ध" रघुवीर सहाय पृ. क्र. 9
7. हिन्दी साहित्य में हास्य और व्यंग्य डॉ. प्रेमनाराण टंडन – पृ. 268
8. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास बच्चन सिंह पृ. 440
9. हिन्दी साहित्य में हास्य व्यंग्य डॉ. प्रेमनारायण टंडन पृ. 270
10. "कविता का अर्थात्" परमानंद श्रीवास्तव पृ. क्र. 131
11. "कविता का अर्थात्" परमानंद श्रीवास्तव पृ. क्र. 133
12. हिन्दी काव्य संकलन सं. चंद्रकान्त देवताले पृ. 67
13. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य पृ. 133
14. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास पृ. 454
15. "जूझते हुए" सुरेन्द्र तिवारी पृ. क्र. 27
16. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कविता में व्यंग्य पृ. क्र. 367
17. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य पृ. क्र. 401
18. डॉ. श्रीमती अंजलि शर्मा "युगान्तर" अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य एवं शोध पत्रिका र.क्र.363

Law of Maintenance in India-An Analysis

Anju
Ph.D Student
M.D.University, Rohtak

Hindu sages, in most unequivocal and clear terms, laid down that maintenance of certain persons is a personal obligation. Manu declared: "The aged parents, a virtuous wife and an infant child must be maintained even by doing hundred misdeeds”.[1] Brihaspati said, "A man may give what remains after the food and clothing of family: the giver or more (who leaves his family naked and unfed) may taste honey at first but afterwards finds it poison.”[2] According to the Mitakshara: "Where there may be no property but what has been self—acquired, the only persons whose maintenance out of such properly is imperative, are aged parents, wife and minor children.”

The maintenance of the aged parents, infant children and wife is considered to be the greatest duty of a person It is the belief of Hindus that if one faithfully fulfils this duty, the gates of heaven are wide open for one. One may also attain salvation On the other hand, a person who indulges in charity or dun at the cost of the maintenance of his aged parents, infant children and wife is condemned by the sages, it is like tasting honey which turns out to be poison later. During the British period, it was a well established rule that the maintenance of the aforesaid three sets of persons was a personal obligation of every male Hindu. Under the modern Hindu law, in respect of aged parents and minor children, this is an obligation of every Hindu, male or female, Thus, a Hindu has personal obligation to maintain (1) his wife, (2) children, and (3) aged parents.

S. 18 (1), Hindu Adoptions and Maintenance Act.-

When wife lives with husband.-In all patriarchal societies, it has been considered an imperative duty of the wife to live with her husband and perform all conjugal duties. Side by side with this obligation of the wife, the husband's obligation to maintain his wife begins with marriage. A wife who resides with her husband must be maintained by him. It cannot be a valid ground to refuse maintenance that his financial condition is not good. The obligation of the husband to maintain his wife is a personal obligation.[3] Where an immature wife lives with her parents, the

[1] Cited in Mitakshara, II, 175.
[2] Brihaspati, XV, 3. Katyayana and other sages are to the same effect.

[3] Iayanti v. Alumelu, (1904) 27 Mad. 45.

husband's obligation to maintain her subsists. Except the husband, no other member of the family has any personal obligation to maintain her.

The husband's obligation to maintain her comes to an end only when she leaves him without any good cause or without his consent? Before 1956, it was a settled. law that an unchaste wife who continues to live with her husband, was entitled to starving maintenance[4] An unchaste wife, who left her husband but subsequently repented, performed expiatory rites and returned to live with her husband, was entitled to maintenance.‘ The modern Hindu law lays down that a Hindu wife is entitled to be maintained by her husband during her life time.[5]

Sub-section (3) of S. 18 lays down that "a Hindu wife shall not be entitled to separate residence and maintenance from her husband if she is unchaste or ceased to be a Hindu by conversion to another religion." It is submitted that this provision is applicable to sub-section (2) of S. 18 which provides for separate residence and maintenance for a wife in certain cases. It cannot be applicable to the case of the wife who lives with her husband, i.e. to sub-section (1). This is made clear by S. 24 which lays a general disqualification; a non-Hindu cannot claim maintenance- Thus, a wife who has ceased to be Hindu cannot claim maintenance under the modern law; she could also not claim it under the old law. But an unchaste wife who lives with her husband, can claim maintenance against her husband under the modern law. Her excommtmication[6] or the conversion of her husband,[7] did not lead to forfeiture of her right of maintenance under the old law. It is submitted that the same is the position under the modern law.

S. 18(2), Hindu Adoptions and Maintenance Act.-

When the wife lives apart. — A wife who lives apart with the consent of the husband is entitled to maintenance. She is also entitled to maintenance if she lives separate from her husband for a justifiable cause. Section 18(2) of the .Hindu Adoptions and Maintenance Act, 1956, lays down the grounds on which a wife may live separate and claim maintenance. These are:

Remedy for maintenance under Section 18 of the Act and under Section 125, Code of Criminal Procedure are co-existent, mutually, complementary, supplementary and in aid and addition of each other. An order of maintenance under Section 125 cannot foreclose claim under Section 18.[8]

---

[4] Bammudevara v. Bammadevara, (1928) 55 M.L.]. 242; Sidlingappa v. Sidava, (1872) 2 Born. 634; Mutyala v. Muiyala, 1958 A.P. 582.

[5] Parami v. Mahadevi, (1910) 34 Bom. 278.

[6] Sita v. Gopal, 1928 Pat. 275; Shibli v. Iodh, (1833) 14 Lah. 759; Sathyabhuma v. Keshava, (1916) 39 Mad. 658; Rama Nath v. Rajonimoni, (1890) 17 Cal. 678.

[7] Section 18 (1), HAMA, 1956.

[8] Sobha v. Bhim, 1975 Ori. 180.

Application for maintenance may be filed in the court within whose jurisdiction the cause of action arose.[9]

S. 18(3), Hindu Adoptions and Maintenance Act.—

Forfeiture of the claim of maintenance.—A wife entitled to separate residence and maintenance may forfeit her claim in the following three" cases:

(1) An Lmchaste wife has no right to claim separate residence and maintenance, [S. 18(3), Hindu Adoptions and Maintenance Act.

(2) A wife who has ceased to be a Hindu by conversion to another religion has no right to claim jnaintenance. [S. 18(3) and S. 24 of the Hindu Adoptions and Maintenance Act.]

(3) Once a view was that when the wife who had resumed cohabitation with her husband forfeits her claim for separate residence and maintenance, because the pre—condition of the claim is that the wife is living separately from her husband, if that pre—condition ceases to exist, the wife cannot continue to claim maintenance.[10] But in Meemzkshi v. Muthukrishna[11] the court said that just because the wife had sexual intercourse with her husband, while she continued to live separate from her husband, may not extinguish the decree for separate maintenance. Similarly, in Dattu v. Tarabai,[12] the court observed that by mere resumption of cohabitaton, the order of maintenance passed under Section 18(2) does not terminate. It is submitted that these are correct. So long as the basis of separate living is not extinguished, she will be entitled to live separate and claim maintenance.

The Hindu law. Still does not recognize the right of the husband to claim maintenance against the wife, except in cases which are covered under Sections 24 and 25, Hindu Marriage Act, 1955.

Children

S. 520, Hindu Adoptions and Maintenance Act.—

The obligation to maintain one s children is a personal obligation and arises out of the personal relationship of parent and child. In most of the early systems of law, the obligation to maintain children was imposed on the father alone and only in respect of legitimate children; Under the old Hindu law, the father was required to maintain both his legitimate and illegitimate children. The modern Hindu law imposed the obligation on both the parents and in respect of both legitimate and illegitimate children.[13] Ordinarily, the obligation extends during the minority of children.

---

[9] Aher Mensi Ramsi vi Aherani Bui Mini Ietha, 2001 Guj. 148.
[10] Venkayya v. Raghavamma, 1942 Mad. 1.
[11] 1961 Mad. 380.
[12] 1985 Bom. 106.
[13] Section 20(1), HAMA, 1956. _

Legitimate and adopted sons.—

A Hindu is required to maintain his natural as well as adopted sons. The mere refusal of a son to live with his father does not disentitle him from claiming maintenance; though quantum of maintenance may be affected[14] the same is true about a disobedient son. The obligation of parent to maintain the son ceases on his attaining majority, even if the son is incapable of maintaining himself due to temporary illness or disorder.[15] But if disability or disorder is of a permanent nature, it is submitted, it would be in consonance with the principles of Hindu law that parent's obligation to maintain him is recognized.

Illegitimate son—

Hindu law has never considered an illegitimate son as a filius nullius and all along imposed an obligation on the putative father to maintain his illegitimate son.[16] From the point of view of maintenance, the illegitimate sons may be classified thus: (1) an illegitimate son of the first three classes born of an avarudha dasi (permanently and exclusively kept concubine), called a dasiputra, (2) dasiputra of a sudra, (3) illegitimate son from a non-Hindu woman, and (4) other illegitimate children such as born of adulterous or casual intercourse.

The dasiputra of the twice born classes was, under the old law, entitled to maintenance during his entire life against his father. It was a personal obligation of the putative father, though it was necessary that the son lived with him and was obedient to him.[17] It was also enforceable against the separate property of his father.[18] If the father died as a member of the joint family leaving behind no separate property, it could also be enforced against the interest of the father in the joint family property[19] Such a son was entitled to full maintenance and not merely to compassionate maintenance.[20] Under the modem Hindu law, the dasiputra is entitled to maintenance only during his minority.

The position of the dasiputra of a sudra had been better. As has been seen in Chapter XI and Chapter XIV after the death of his putative father, he becomes a coparcener and has the right of survivorship and partition. From the point of view of maintenance also, his position has been slightly superior. A dasiputra of a sudra was entitled to maintenance during his entire life and was entitled to full maintenances Under the old law, an illegitimate son of a Hindu born of a non-Hindu woman was entitled to maintenance, if he was brought up as a Hindu but if he was not brought up

[14] Sardul Singh v. Partap Singh, 1877 P.R. 46. .
[15] Bhupati v. Basanta, 1936 Cal. 556.
[16] Mitakshara 1.12; V 3; See also Paras Diwan. The Illegitimate Child in Modem Law, 1969 Allahabad Law Review, 5-24.
[17] Nilmaney v. Beneasaor, (1879) 4 Cal. 91.
[18] Rashdan Singh v. Balwant Singh, (1900) 22 All. 191; Chouturya v. Purhalad, (1957) 7 M.I.A. 18
[19] Ibid. Velliayappa v. Natarajan, 1931 P.C. 294.
[20] Rattinabpathy v. Gopqla, 1929 Mad. 545.

as a Hindu, his claim was not maintainable.[21] The same is the position under the modern law. The son born of an adulterous or causal intercourse was also entitled to maintenance under the old Hindu law, but only during the minority.[22]

The Hindu Adoptions and Maintenance Act, 1956, abolishes all distinctions between illegitimate sons. All illegitimate sons are entitled to maintenance during their minority. No illegitimate son can claim maintenance after he has become a major.

Legitimate and adopted daughters.—

Our sages, unequivocally, recognized it to be the father's obligation to maintain his legitimate daughter till her marriage and to pay for her marriage expenses. It was the father's personal obligation. After the (father's death, she was to be maintained out of the separate properties of his father[23] The obligation ceased on her marriage[24] The Hindu sages laid down that even after the marriage of the daughter, the father has a moral obligation to maintain her, if she failed to get maintenance from her husband's family. Similarly, father has the obligation to maintain his widowed daughter. It has been seen earlier that if a son lived separate from his father, he did not forfeit his right to maintenance. This was not the case with an unmarried daughter. She was required to live with her father. It was also necessary that she should obey her father. But if she lived separate from the father for a justifiable cause, she could still claim maintenance. In Laxmi v. Krishna,[25] the father was living with his second wife and the daughter was living with her natural mother who was living separate from her husband. The court held that this justified daughter's living separate from her father.[26] But mother cannot claim maintenance for her son above five years who is living with her.[27]

Section 20(2), Hindu Adoptions and Maintenance Act lays down that a Hindu has an obligation to maintain his children during their minority. It seems that in respect of unmarried major daughters this obligation continues, though the father or mother are required to maintain a major unmarried daughter only so far she is unable to maintain herself out of her own earning or other property.[28] In Sneh Prabha v. Ravinder Kumar,[29] the Supreme Court said that court has power to award maintenance against the father for major daughters also till they get married or settled gainfully. The question whether she has any earnings of her own or property out of the income of which she

---

[21] S. Ratnaraja Kumar v. Narayumz, 1953 S.C.j433; Amireddi v. Amireddi, 1865 S.C. 1970.
[22] Kaila v. Kanniammal, (1962) 2 M.L.]. 529; Pandumng v. Sonabai, 1949 Nag. 159; Tikaram v. Narayan Singh, 1958 M.P. 231.
[23] Bai Mangal v. Bai Rukmani, (1899) 23 Bom. 291. 1
[24] Kartic Chandra v. s. Sundri, (1946) Nag. 217.
[25]
[26] 1968 Mys. 288.
[27] See also Kulbhushan v. Raj Kumari, 1971 S.C. 234.
[28] Sopha v. Bhima, 1975 Ori 180. 1
[29] S. 23 (2) of the Act.

could maintain herself is a question of fact to be decided in each case on the material on record. That the major daughter is capable of earning is an irrelevant matter. What has to be shown is that she is actually earning or has property. Section 20 (3) does not speak of the capacity to earn an income but speaks of the existence of a source of income and the ability to maintain oneself with such income.[30] The obligation to maintain a daughter includes reasonable expenses of her marriage.[31]

The adopted daughter "has the same right to claim maintenance as a natural born legitimate daughter.

Illegitimate daughter—

The textual law is silent on the putative father's obligation to maintain an illegitimate daughter. Before 1956, there was a controversy among our High Courts whether the putative father has an obligation to maintain his illegitimate daughters.[32] The Bombay High Court held that under the old Hidu law an illegitimate daughter had no claim of mainenance against the estate of her deceased father.[33] In Vellaiappa v. Natarajan[34] the Privy Council held that an illegitimate daughter was as much a member of her father's family as an illegitimate son and therefore she was entitled to maintenance.

Under the modern Hindu law, the controversy has been set at rest; she is entitled to claim maintenance against both her putative father and natural mother, but only during minority.[35]

Aged or Infirm Parents:

The obligation to maintain aged or infirm parents is a personal obligation arising out of the parent-child relationship. However, under the old Hindu law, this obligation was imposed on the son alone. Daughters had no such obligation.-The modern Hindu law, (s. 20, Hindu Adoptions and Maintenance Act, 1956) makes it an obligation of sons and daughters. Under the old Hindu law, "parent" did not include a step parent.[36] Explanation to S. 20, Hindu Adoptions and Maintenance Act now includes a childless stepmother in the expression ‘parent’. The childless stepfather is still excluded from the purview of the expression "parent".

The obligation to maintain one's aged parents exists during one's life time. The obligation being personal, it exists independently of the personal possession of any property, ancestral or personal.[37] However, under the modem Hindu law this obligation is not absolute. One is required to maintain

[30] 1995 SC 2110.
[31] Laxmi v. Krishna, 1968 Mys. 288; Wal Ram v. Mukhtiar, 1969 Punj. 285.
[32] Chandra v. Nanak, 1975 Del. 175.
[33] Parvati v. Ganpat, 18 Bom. 177; Vellaiappa v. Natarajan, 50 Mad. 340; Champa Bai v. Raghunatl (1946) Nag LJ. 97.
[34] Iaiwanti v. Gopal Bhai, 1968 Bom. 314.
[35] Section 21 (1), Hindu Adoptions and Maintenance Act, 1956.58 I.A. 407.
[36] Bai Daya v. Nath, 9 Bom. 279; Kedar Nrfltihl v. Hemangini, 13 Cal. 336.
[37] Iayani v. Alamelu, 37 Mad. 45; Appibai v. Khimiji, 60 Bomj 455; Rosan Lal v. Barkat Ram, (1958) 60 P.L.R. 433.

one's aged or infirm parent when the latter is unable to maintain himself or herself out of his or her own earning or property; and if they are not able to maintain themselves, they should be treated as aged or infirm.[38]

The wife, the children and the aged or infirm parents forfeit their claim of maintenance if they cease to be Hindus. A question arises that right to claim maintenance is available under criminal law as well, i.e., under Section 125, Code of Criminal Procedure. So is there any conflict between the criminal remedies and remedies available under personal laws? Remedies under both the laws are held to be co-existent, mutually, complementary, supplementary, and in aid and addition to each other. Any order of maintenance under Section 125, Code of Criminal Procedure cannot foreclose remedy under Section 18[39], though the amount under Section 125, Code of Criminal Procedure shall be taken into consideration while awarding maintenance under personal law.[40]

S. 19, Hindu Adoptions and Maintenance Act.—

Daughter-in-law- Hindu law has, all along, recognized it to be an obligation of the joint family to maintain the wives and widows of coparceners. A widowed daughter-in-law can claim maintenance against the joint family property. The claim is enforceable against the karta so long as the daughter-in-law has a right to claim maintenance against the coparcenary property in the hands of the father-in-law.[41] Apart from this, the father-in-law has no legal obligation to maintain a widowed daughter—in—law. But Hindu law recognized it to be a moral obligation of the father-in-law to maintain a daughter-in-law who has no other means of maintenance. On the death of the father-in-law, the moral obligation became a legal obligation against the persons who inherited the property of the father-in-law. However, the father-in-law had no personal obligation to maintain a daughter-in-law.[42] Therefore, where father-in-law did not inherit any ancestral property, he was not liable to pay any maintenance to his widowed daughter-in-law.[43]

The Hindu Adoptions and Maintenance Act, 1956, purports to put the daughter-in-law as a class by herself by enacting a separate section for her, viz., S. 19.[44] But on a close scrutiny of the provision, it becomes evident that there is no material difference between her and other dependents about whose maintenance the Act makes provision in Sections 21 and 22. Section 19 does not make it a personal obligation of the father-in-law to maintain his daughter-in-law. Provisos to sub-sectiion

[38] Section 20(3) of the Act; See also Shamu Bai v. Shai Magan, 1961 Raj. 207; Munni v. Chhote, 1983 All. 444.
[39] Aher Mensi Ramsi v. Ahenmi Bai Mini Ietha, 2001 Guj. 277.
[40] Merubhai Madanbhai Odedra v. Rnniben, 2000 Guj. 277.
[41] Animutta v. Gandhiammal, 1977 Mad. 372.
[42]
[43]
[44] Meenukshi v. Rama, (1914) 37 Mad. 396.

(1) and I sub-section (2) dispel all illusions one might harbour by reading the marginal note or the main provision in sub-section (1). Further, if we read sub-section (2), the obligation is confined to the coparcenary interest of the father-in-law. The significance of the provision seems to be this : after partition the father-in-law has no obligation to maintain the daughter-in-law under the law of the Mitakshara joint family. But under S. 19 he will be obliged to maintain her in the circumstances mentioned therein.

Under S. 19, the father-in-law's obligation to maintain the daughter-in-law is not a primary obligation; it is not even a secondary obligation. It is remote obligation. The father-in-law's obligation will arise only if

(a) the daughter-in-law is unable to maintain herself out of their own earnings or other property, or

(b) the daughter-in-law (in case she has no property of her own) is unable to obtain maintenance[45]

(i) from the estate of her husband,

(ii) from the estate of her father,

(m) from the estate of her mother, or

(iv) from her sons or daughters or from their estate.

Even then the obligaion of the father-in-law is a very limited one, he is obliged to maintain the daughter-in-law only from "Any coparcenary property in his possession out of which daughter-in-law has not obtained any share". Further, the father-in-law should have the means to do so from such property, i.e., if the coparcenary property is already very meagre, he may not have any obligation to maintain the daughter-in-law. If the father-in-law has no coparcenary property, he has no obligation to maintain the daughter-in-law.

Coparcenary property –

The term "coparcenary property" has come for interpretation before the Punjab High Court in three cases. In Angad Singh v. Dhan Kaur,[46] the court said: "Coparcenary property in S. 19 cannot mean coparcenary property as understood in Mitakshara law because that will nullify to a great extent, the very purpose of the statute, as the word coparcenary property in the context is not a word of art. Parliament-was using this word to give it the ordinary meaning, i.e., property which has been inherited from a common ancestor." The court further said that the term ‘coparcenary property’ includes ancestral property’ as the term is understood in the Punjab customary law. This view was confirmed by the majority in the Full Bench judgment in Gurdeep Kaur v. Ghamand Singh.[47] Where the court said that coparcenary property includes ancestral property, joint

[45] Master Daljit Singh v. S. Dara Singh, 2000 Del. 292.
[46] Raj Kishore v. Maena, 1995 All 70.
[47] 1961 Punj. 391.

acquisitions and accretions? This view was reiterated by the court in Kapur Kaur v. Kishun Singh.[48] Thus, the ancestral the latter is sufficient to maintain him and his wife, the daughter-in-law is property". In Jai Kaur v. Pala Singh[49] the court said that if the father-in-law has entitled to claim reasonable maintenance from the ancestral property without the quantum of such maintenance curtailed by burdening it with his and his wife's maintenance.

This provision may not benefit the daughter-in-law to any appreciable extent. If she takes a share in the coparcenary property which she will under S.6, Hindu Succession Act, 1956, the father-in-law's obligation is at end, even though her share may be paltry and the father—in-law may be a very well-to-do person. Its importance may lie in those limited cases where a partition had taken place before the death of the husband of the daughter-in-law (in such 5 case she will take no share in the joint family property) and subsequently when the husband dies leaving behind practically nothing, the daughter-in-law will be able to enforce her claim against the father-in-law, if the father-in-law has some coparcenary property, i.e., in those cases where he has taken a share in partition. The daughter-in-law will forfeit her claim of maintenance if: (a) she remarries, or (b) she ceases to be a Hindu by conversion to some other religion.

Conclusion

The social structure of Hindu society the joint family system looms large, the law of maintenance has a special significance in Hindu law. All members of a joint family, whatever be their status and whatever be their age, are entitled to maintenance. Hindu law also recognizes that a Hindu has a personal obligation to maintain certain near relations, such as wife, children and aged parents and that the one who takes another’s property has an obligation to maintain the latter’s dependents.

[48] 1965 Punj. 238.
[49] Mehar Singh, I. dissenting.

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष सितम्बर 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

रायपुर जिले में महिला उद्यमिता
समस्याएं एवं संभावनाएं

श्रीमती प्रीति कंसारा
सहायक प्राध्यापक–अर्थशास्त्र
शासकीय दू.ब.महिला महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

शोध सारांश –

एक सफल उद्यमी के रुप में स्वयं को सिद्ध करना महिलाओं के लिये सबसे बड़ी चुनौती है। महिलाओं को घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर स्वयं को सफल उद्यमी के रुप में स्थापित करने बहुत सी बाधाओं को पार करना पड़ता है। महिला उद्यमी की सबसे बड़ी कठिनाई उसका महिला होना है, क्योंकि परंपरागत, रुढ़ीवादी भारतीय समाज में महिलाओं को दोयम दर्जा प्रदान किया गया है। भारत में व्यवसाय के क्षेत्र में महिलाओं का प्रवेश विगत कुछ दशकों से ही तीव्र हुआ है। सातवीं पंचवर्षीय योजना में भारत सरकार द्वारा राष्ट्र निर्माण में महिलाओं की भूमिका पर जोर दिया गया एवं विकास कार्यों में महिलाओं को भागीदार बनाने के लिये एक विस्तृत कार्य योजना बनाई गई। इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक व आर्थिक क्षेत्र में महिलाओं के स्तर को ऊंचा उठाकर लघु उद्योग क्षेत्र के विकास में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को बढ़ाना था। भारत में अभी भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं की व्यावसायिक गतिशीलता कम है। पारिवारिक एवं सामाजिक परंपराएं महिला उद्यमिता के विकास में बाधक बनती है। निम्न तकनीकी ज्ञान व कुशलता के अभाव में महिलाएं केवल घरेलू उद्योगों में ही योगदान दे पाती हैं।

कुंजी शब्द–उद्यमिता, महिला,रायपुर जिला, समस्याएं।

प्रस्तावना–

हमारे देश में महिलाओं को परिवार, समाज तथा काम की दोहरी जिम्मेदारी को एक साथ निभाना पड़ता है। विघटित हो रहे संयुक्त परिवारों के कारण एक ओर उन्हें बुजुर्गों का मार्गदर्शन एवं सहयोग नहीं मिल पाता तो दूसरी ओर समाज का महिलाओं के प्रति रुढ़ व्यवहार उसकी कठिनाईयों में और वृद्धि कर देता है। संवैधानिक समानता के बावजूद पुरुषों का वर्चस्व महिला उद्यमिता के विकास को आज भी प्रभावित करता है।

भारत में महिला उद्यमियों को अपना व्यापार–व्यवसाय स्थापित करने और उसे चलाने में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। महिलाओं को पुरुषों की तुलना में परिवार में और उसके बाहर भेदभाव के कारण अधिक कठिनाइयों से जूझना पड़ता है। उन्हें वित्त प्राप्त करने की प्रक्रिया संबंधी औपचारिकताओं को पूर्ण करने, संपत्ति आदि की जमानत देने में अत्यधिक समय नष्ट करना पड़ता है। अक्सर इसका कारण संवेदनशीलता का अभाव और महिलाओं के प्रति भेदभाव की भावना का होना है, तथापि अधिकांश महिलाओं का कहना है कि बिक्री अथवा विपणन उनकी मुख्य समस्या है।आर्थिक पिछड़ापन, पारिवारिक व सामाजिक सहयोग का आभाव, अवसरों

खंड 08 अंक 33 वर्ष सितम्बर 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

के प्रति अज्ञानता, प्रेरणा का आभाव, शर्मिलापन एवं हिचक, परंपरागत व्यवसायों को प्राथमिकता एवं सुरक्षित रोजगार की ईच्छा, इत्यादि ग्रामीण महिलाओं में उद्यमशीलता की प्रमुख बाधाएं हैं।

अध्ययन के उद्देष्य –

1. रायपुर जिले में महिला उद्यमियों की समस्याओं एवं बाधाओं का अध्ययन करना।
2. रायपुर जिले में महिला उद्यमिता के विकास हेतु उपयुक्त व संगत सुझावों को प्रस्तुत करना।

शोध परिकल्पना–

1.रायपुर जिले में महिला उद्यमियों को उद्यम संचालन में व्यक्तिगत, सामाजिक एवं पर्यावरण संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

समंकों का संकलन–

प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक समंकों पर आधारित है। प्राथमिक समंकों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है। न्यादर्श हेतु 135 महिला उद्यमियों का चयन निदर्शन पद्धति से किया गया है।

समंकों का विष्लेषण –

1. प्रतिशत एवं माध्य
2. भारित क्रम विश्लेषण

महिला उद्यमियों की समस्याएं–

उद्यम स्थान, उद्यम की प्रकृति एवं उद्यमी की व्यक्तिगत भिन्नता के अनुसार समस्याओं की प्रकृति भी भिन्न होती है। एक महिला उद्यमी को अनेक प्रकार की उद्यम संबंधी समस्याओं जैसे कच्चा माल, विपणन, उर्जा, श्रम, वित्त, तकनीक एवं मार्गदर्शन इत्यादि समस्याओं का सामना करना पड़ता है।ये सभी समस्याएं महिला उद्यमी के सफलता स्तर को प्रभावित करती है तथा उद्यम के विकास में बाधा पहुंचाते हैं। लघु उद्यम संचालित करने वाली महिलाओं का जीवन अत्यंत बाधाओं से युक्त होता है उसे लगातार कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है किंतु अनेक समस्याओं के बावजूद महिलाएं आज तेजी से व्यवसाय के क्षेत्र में प्रवेश कर रही है। भारत में परंपरागत रुढ़ीवादी सामाजिक सांस्कृतिक वातावरण के कारण महिला उद्यमियों को व्यवसाय स्थापना, संचालन एवं विस्तार में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे –दोहरी जिम्मेदारी, परिवार में सीमित स्वतंत्रता, सीमित आर्थिक संसाधन एवं व्यक्तिगत समस्याएं जैसे शर्मिलापन, वार्तालाप कुशलता का आभाव, आत्मविश्वास की कमी आदि।

तालिका क्रमांक –1
रायपुर जिले में न्यादर्ष महिला उद्यमियों
की समस्या की प्रकृति का विष्लेषण

क्रमांक	समस्या	हां	प्रतिषत	नहीं	प्रतिषत	कुल
1.	व्यक्तिगत समस्या	110	81.48	25	18.52	135

2.	वित्तीय समस्या	95	70.37	40	29.63	135
3.	उत्पादन संबंधी समस्या	57	42.22	78	57.78	135
4.	विपणन संबंधी समस्या	85	62.96	50	37.04	135
5.	सामाजिक समस्या	62	45.95	73	54.05	135
6.	श्रम संबंधी	38	28.15	97	71.85	135
7.	पर्यावरणीय समस्या	72	53.33	63	46.67	135

तालिका क्रमांक 1 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि रायपुर जिले में सर्वाधिक 81.48 प्रतिशत न्यादर्श महिला उद्यमियों को व्यक्तिगत समस्याओं का सामना करना पडता है। द्वितीय क्रम में 70.37 प्रतिशत न्यादर्श महिला उद्यमियों को वित्तीय समस्या समस्याओं का सामना करना पडता है। सबसे कम 28.15 प्रतिशत न्यादर्श महिला उद्यमियों को श्रम संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसका प्रमुख कारण जिले में श्रम की अधिक उपलब्धता है।

उद्यम स्थापना संबंधी समस्याएं—

यूरोचेम्बर के अध्ययन के अनुसार महिला उद्यमियों को उद्यम स्थापना के समय सबसे प्रमुख समस्या वित्त संबंधी एवं उसके बाद क्रमशः कार्य व पारिवारिक जीवन में समायोजन, सूचना एवं परामर्श में कमी का सामना करना पड़ता है। किसी भी नए उपक्रम की स्थापना के पूर्व उद्यमी को विभिन्न पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। संसाधनों का कुशलतम संयोजन, परियोजना निर्माण, पर्याप्त वित्त व्यवस्था एवं सरकारी औपचारिकताओं को पूर्ण करने के पश्चात ही उपक्रम का संचालन विधिवत् किया जा सकता है।

रायपुर जिले में न्यादर्श महिला उद्यमियों के उद्यम स्थापना में आने वाली प्रमुख बाधाओं का भारित औसत क्रम विश्लेषण विधि द्वारा अध्ययन किया गया है। उद्यमियों द्वारा विभिन्न समस्याओं को प्रदत्त क्रम का भारित अंक ज्ञात कर समस्याओं को क्रम प्रदान किया गया है। एक महिला उद्यमी को पुरुष उद्यमी के समान ही उपक्रम की स्थापना हेतु अनेक कार्य करने होते हैं, जैसे जोखिम वहन करना, आर्थिक अनिश्चितताओं को वहन करना, नवप्रवर्तन को लागू करना एवं व्यावसायिक क्षेत्र में समन्वय, प्रशासन, नियंत्रण, देखरेख व नेतृत्व करना इत्यादि।

तालिका क्रमांक –2

रायपुर जिले में न्यादर्श महिला उद्यमियों की

उद्यम स्थापना संबंधी समस्याओं का विश्लेषण

क्र.	समस्या	क्रम				भारित	भारित	क्रम
		प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	अंक	औसत	
1.	मार्गदर्शन की कमी	**32**	**45**	**42**	**16**	**363**	**36.3**	**द्वितीय**

2.	सरकारी नियंत्रण एवं औपचारिकताओं की अधिकता	24	32	55	24	346	34.6	**तृतीय**
3.	वित्त की कमी	63	33	09	30	379	37.9	**प्रथम**
4.	अन्य	16	25	29	65	262	26.2	**चतुर्थ**
	कुल	**135**	**135**	**135**	**135**			

उद्यम स्थापना के समय प्रमुख समस्याओं में मार्गदर्शन की कमी, सरकारी औपचारिकता एवं नियंत्रण की अधिकता, वित्त की कमी एवं अन्य समस्याओं के अंतर्गत भूमि, श्रम, कच्चा माल एवं तकनीकी समस्याओं को शामिल किया गया है।

तालिका क्रमांक 2 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि रायपुर जिले में न्यादर्श महिला उद्यमियों को सर्वाधिक समस्या प्रथम क्रम पर (भारित औसत–45.8) वित्त की कमी रही है। व्यवसाय में प्रारंभिक चरण में वित्त की व्यवस्था एक प्रमुख समस्या है, और महिलाओं के संदर्भ में यह समस्या और भी अधिक गहन हो जाती है क्योंकि अधिकांश महिलाएं संपत्ति विहीन होती हैं जिससे उन्हें बैंक ऋण या संस्थाओं से ऋण प्राप्ति में कठिनाई होती है।द्वितीय क्रम पर (भारित औसत–38.5)महिलाओं को व्यवसाय प्रारंभ करने हेतु उचित मार्गदर्शन की समस्याओं रही है। यद्यपि जिले में उद्यमियों को मार्गदर्शन प्रदान करने हेतु कई संस्थाएं स्थापित है किंतु जानकारी के आभाव, संकोच एवं अत्यधिक व्यस्तता के कारण उन्हें उचित समय पर पर्याप्त मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हो पाती है।तृतीय क्रम पर (भारित औसत–34.4) महिला उद्यमियों को सरकारी नियंत्रण एवं औपचारिकता की समस्या का सामना करना पड़ता है। सरकारी तंत्र की कमजोरी, लेटलतीफी एवं भ्रष्टाचार के कारण महिलाओं को पंजीयन, परियोजना निर्माण, स्वीकृति, भू–आबंटन आदि प्रत्येक क्षेत्र में कठिनाईयों को झेलना पड़ता है। चतुर्थ क्रम पर (भारित औसत–16.7) अन्य समस्याएं जैसे स्थान चयन, बिजली, श्रमिक, बाजार सर्वेक्षण इत्यादि उद्यम स्थापना के समय समस्याएं रहती है।

उद्यम संचालन संबंधी समस्याएं–

रायपुर जिले में न्यादर्श महिला उद्यमियों के उद्यम संचालन में आने वाली प्रमुख बाधाओं को भारित औसत क्रम विश्लेषण विधि द्वारा अध्ययन किया गया है। उद्यमियों द्वारा विभिन्न समस्याओं को प्रदत्त क्रम का भारित अंक ज्ञात कर समस्याओं को क्रम प्रदान किया गया है। पूर्व तालिका के विश्लेषण से यह ज्ञात हुआ है कि महिला उद्यमियों को उद्यम स्थापना में आने वाली प्रमुख समस्या वित्त की कमी रही है। उसी प्रकार उद्यम संचालन में भी वित्त एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है।

तालिका क्रमांक – 3

रायपुर जिले में न्यादर्श महिला उद्यमियों की

उद्यम संचालन संबंधी समस्याओं का विश्लेषण

क्र.	वर्तमान समस्या	क्रम				भारित अंक	भारित औसत	क्रम
		प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ			
1.	वित्त की कमी	35	**24**	**10**	**16**	**248**	**24.8**	I
2.	सरकारी नियंत्रण की अधिकता	28	15	`06	17	186	18.6	IV
3.	तकनीक	19	16	21	16	182	18.2	V
4.	प्रशिक्षण	20	19	18	15	188	18.8	III
5.	प्रतिस्पर्धा एवं विपणन	12	18	45	29	221	22.1	II
6.	कच्चे माल की कमी	14	20	12	22	162	16.2	VII
7.	अन्य	07	23	23	20	163	16.3	VI
	कुल	**135**	**135**	**135**	**135**			

तालिका क्रमांक 3 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि रायपुर जिले में न्यादर्श महिला उद्यमियों को उद्यम संचालन में सर्वाधिक समस्या प्रथम क्रम पर (भारित औसत–24.8) वित्त की कमी रही है। पर्याप्त वित्त के आभाव में अधिकांश उद्यमी अपनी इकाईयों का आशानुरूप विस्तार नहीं कर पाई हैं, अतः कुल 85 इकाईयों ने इसे प्रमुख क्रम प्रदान किये हैं। द्वितीय क्रम पर (भारित औसत–22.1) महिलाओं को प्रतिस्पर्धा की अधिकता एवं विपणन की समस्या रही है। रायपुर जिला प्रदेश की राजधानी तथा प्रमुख व्यापारिक क्षेत्र होने के कारण इन महिला उद्यमियों को बाजार की तीव्र प्रतिस्पर्धा का सामना करना पडता है, साथ ही प्रथम पीढ़ी की उद्यमियों को बाजार कौशल का ज्ञान न होने के कारण इन्हें विपणन की समस्या का भी सामना करना पडता है, अतः कुल 104 इकाईयों ने इसे प्रमुख क्र प्रदान किये है। तृतीय क्रम पर (भारित औसत–18.8) महिलाओं को प्रशिक्षण की समस्या रही है। यद्यपि जिले में प्रशिक्षण हेतु विभिन्न संस्थानों द्वारा कार्यक्र संचालित किये जाते हैं फिर भी अनेक महिला उद्यमियों को उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया का व्यवहारिक ज्ञान नहीं मिल पाता है, अतः कुल 72 इकाईयों ने इसे प्रमुख क्रम प्रदान किये है।चतुर्थ क्रम पर (भारित औसत–18.6) सरकारी नियंत्रण की अधिकता की समस्या, पांचवें क्रम पर (भारित औसत–18.2) तकनीकी समस्या, छठवें क्रम पर (भारित औसत–16.3) अन्य समस्या तथा सातवें क्रम पर (भारित औसत–16.2) कच्चे माल की कमी की समस्या रही है।

इस प्रकार परिकल्पना सत्य हुई कि रायपुर जिले में महिला उद्यमियों को व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक समस्याओं के साथ–साथ व्यवसाय से संबंधित अनेक पर्यावरणीय समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

सुझाव–

महिला उद्यमियों को समय समय पर प्रशिक्षण प्राप्त कर नवीन उत्पादन, तकनीक विपणन पद्धति आदि से अवगत होना चाहिये।महिला उद्यमियों को बाजार प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिये उत्पाद साम्य के आधार पर समूह में विपणन कार्य करना चाहिये जिनमें वे अपने उत्पाद की कीमत एवं विशेष छूट हेतु योजना निर्धरित कर सकती है तथामहिला उद्यमियों द्वारा संघ अथवा समूह बनाएं जाएं ।

महिलाओं में उद्यमिता संस्कृति विकसित करने हेतु विशेष प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिये।

महिलाओं द्वारा स्थापित गठन, प्रबंधन एवं संचालन आदि में विभिन्न प्रक्रियाओं एवं कानूनी बाधाओं का सामना करने में पथप्रदर्शन, समर्थन एवं सहायता प्रदान की जानी चाहिये।

संदर्भ सूची–

1. सुधा, जी.एस., 2007 ,उद्यमिता के मूल तत्व, आर.बी.एस.ए. प्रकाशन, जयपुर।
2. तिवारी, संजय व तिवारी अंशुजा, (2008) "महिला उद्यमिता", ओमेगा पब्लिकेशन दिल्ली ।
3. Vinze Medha Dubhashi, 'Women Entrepreneur in India – A Socio- Economic Study of Delhi',1975-76, Mittal Pub. 1987- Delhi.
4. Dhameja, S. K. (2004), 'Women Entrepreneurs', Deep and Deep publication, New Delhi.
5. Rajesh Kaushik,Upendra Kaushik,K K Goyal, 'Women Entrepreneurs' Aavishkar Publishers, 2011.

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष सितम्बर 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

भारत में आतंकवादः एक समस्या

कु. चाँदनी नायक
शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग,
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

आतंकवाद आज भारत एवम् समस्त मानव जाति के लिये एक गंभीर समस्या है। हमारा पड़ोसी देश भी आतंकवाद पर नकेल कसने के लिए केवल जुबानी जमा खर्च का ही सहारा ले रहा है, ऐसे में यह आवश्यक है, कि आतंक का पालन-पोषण करने वाले एवम् उसे संरक्षण प्रदान करने वाले देश को अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी से अलग-थलग कर दिया जाये। तथा आतंक के आकाओं को कानून की चौखट पर लाने के लिये हमारे राजनेताओं को स्वार्थ पूर्ण राजनीति को त्यागकर राष्ट्रीय हित को सर्वोपरि रखना होगा। साथ ही कानूनी प्रक्रिया में तेजी लाकर पीड़ितों के आँसू सूखने से पहले न्याय की अवधारणा साकार करनी होगी।

मुख्य शब्द- आतंकवाद, अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी, मानवता, राष्ट्रीय हित, न्याय।

प्रस्तावना -

वह समय अतीत के गर्भ में विलीन हो गया है जब 'सोने की चिड़िया' कहे जाने वाले देश भारत में कभी शांति, प्रेम एवम् भक्ति की पवित्र गंगा प्रवाहित होती थी। किंतु समय ने अचानक ऐसी करवट ली। कि आज दुनिया में संघर्ष, हिंसा, लूटपाट एवम् मारकाट का ताण्डव नृत्य हो रहा है। दक्षिण एशिया में भारत आतंकवाद से सर्वाधिक प्रभावित राष्ट्र है। भारत में दिन-प्रतिदिन आतंकी घटनाएँ एवम् खबरें देखने एवम् सुनने को मिलती है जिस आतंकवाद का भारत 1980 के दशक से सामना कर रहा है, उसकी उत्पत्ति, प्रशिक्षण और पूरी सहायता हमारे पड़ोसी के द्वारा की जा रही है। हमारी सीमाओं के पार बड़ी संख्या में नवयुवकों को जिहाद के नाम पर भड़का कर, उन्हें प्रशिक्षित एवम् अस्त्र-शस्त्रों से लैस कर तथा नगदी प्रदान कर भारत में आतंकी गतिविधियों को अंजाम देने के लिये भेजा जाता है। सीमा पार आतंकवाद के परिणामस्वरूप भारत में हजारों निर्दोष लोग मारे जा चुके हैं, आज काश्मीर की समस्या को भला कौन नहीं जानता है 'धरती के इस स्वर्ग' पर आतंकवाद अपनी गिद्ध दृष्टि जमाये हुये है, काश्मीर में आज नौजवानों के खून की नदियाँ बहाई जा रही है आतंक की काली छाया काश्मीर घाटी में इस तरह छाई हुई है जिसने बच्चों का बचपन और उनकी मासूमियत छीन ली है, अतः भारत और जम्मू- काश्मीर में आतंकवाद के संचालन की रूपरेखा सन् 1971 में युद्ध में भारत से पराजय के बाद स्वर्गीय जनरल जिया-उल-हक द्वारा बनाई गई थी। और आज भारत में आतंकी नरसंहार को अंजाम देने का कार्य पाकिस्तान की खुफिया एजेंसी आई.एस.आई. के द्वारा किया जा रहा है। देश की विभिन्न जाँच एजेंसियों की कार्यशैली और लंबी न्याय प्रक्रिया के बीच ज्वलंत सवाल यह है, कि आखिर आतंकवाद के मास्टर माइंड कब गिरफ्त में होंगे।

आतंकवाद से अभिप्राय है, कि हिंसात्मक गतिविधियों के द्वारा लोगों को भयभीत करना एवम् उन्हें हानि पहुँचाना। अर्थात् कुछ व्यक्तियों के समूह, असामाजिक तत्वों अथवा देशद्रोहियों के द्वारा समाज एवम्

राज्य से अपनी माँगे मनवाने के लिये अथवा अपनी स्वार्थपूर्ण कुठित इच्छाओं को पूरा करने के लिये बल प्रयोग करना एवम् हिंसात्मक गतिविधियों को अंजाम देकर लोगों को भयभीत किया जाता है, इसे ही हम आतंकवाद कहते हैं। इसके अन्तर्गत व्यक्ति-समूहों अथवा संगठनों द्वारा हिंसा की किसी घटना को अंजाम देकर, लोगों को डराने-धमकाने का तरीका अपनाकर, हत्या करके, विमानों का अपहरण करके, ज्वलनशील बमों द्वारा विस्फोट करके स्थापित सरकार को दबाव में लाने का प्रयास किया जाता है। आतंकवाद सम्पूर्ण मानव जाति के लिये घातक है, आतंक की न तो कोई जाति है और न ही धर्म। आतंकवादी समूह तो सिर्फ हिंसा और आतंक फैलाने की दिशा में संलग्न है।

भारत और आतंकवाद -

आतंकवाद देश के लिये लगभग तीन दशक से नासूर बना हुआ है। इतिहास गवाह है, कि काफी लम्बे अर्से से भारत आतंकवाद के नरसंहार से जूझ रहा है, कबाईलियों, द्वारा पाक-अधिकृत-काश्मीर पर कब्जा, मुंबई सीरियल ब्लास्ट, अमृतसर स्वर्ण मंदिर में आतंकी हमला, श्रीमति इन्दिरा गाँधीजी, राजीव गाँधी राजनेताओं की हत्या, कारगिल युद्ध, जम्मू-काश्मीर विधानसभा भवन पर हमला, भारतीय संसद पर आतंकी हमला, वाराणसी में गंगा आरती के दौरान बम धमाका, मुंबई ट्रेन बम ब्लास्ट, मालेगाँव ब्लास्ट, दिल्ली की जामा मस्जिद में बम धमाका, 26/11 मुंबई ताज होटल बम धमाका इत्यादि भारत में आतंकी घटनाओं के उदाहरण है। आतंकवाद तभी फलता-फूलता है, जब उसे समर्थन देने वाले विदेशी अथवा पड़ोसी राज्य हो। हमारा जम्मू-काश्मीर राज्य देश विभाजन के बाद से ही पाकिस्तानी, कूटनीति चाल का प्रमुख केन्द्र बिन्दु बना हुआ है। द्विराष्ट्रीय सिद्धांत की संकल्पना के चलते वह अब तक 1947 के विभाजन को अधूरा मानता रहा है उसने इसे हथियाने के लिये आतंक का सहारा लिया है हालांकि हर बार पाकिस्तान को अपने नापाक मंसूबों के चलते मुँह की खानी पड़ी। किन्तु वर्ष 2000 में भारत-पाक के बीच 'संघर्ष-विराम' समझौता तथा 2008 में 'सीमा-विवाद' समझौता होने के बावजूद भी वह सीमा-पार आतंक को अंजाम दे रहा है। वर्तमान समय में, लगातार नियंत्रण सीमा-रेखा पर युद्ध विराम का उल्लंघन करना इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। हद तो उस वक्त हो गई थी। जब 8-9 जनवरी, 2013 को पाकिस्तान समर्थित आतंकी हाफिज सईद के द्वारा एल.ओ.सी. पर आकर दो भारतीय जवानों के सिर कलम कर अपने साथ ले जाये गये। आतंकियों के कृत्य की भारत सरकार एवम् आम जनता के द्वारा घोर निंदा की गई। पाकिस्तान की शह पाकर ही जैश-ए-मोहम्मद, लश्कर-ए-तैयबा, हिजबुल मुजाहिद्दीन, जमात-उद-दावा, तालिबान जैसे आतंकी संगठन पर्याप्त रूप से फल-फूल रहे हैं। वहीं भारत के पूर्वोत्तर राज्यों असम, अरूणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, मिजोरम, नागालैण्ड में भी विद्रोह एवम् हिंसा अपने चरम पर देखने को मिलती है, असम में बोडो जनजाति बोडोलैण्ड की माँग और पश्चिम बंगाल में गारो जनजाति गोरखालैण्ड की माँग को लेकर हिंसा एवम् उग्र प्रदर्शन कर रही है। पृथक खालिस्तान राज्य की माँग के चलते पंजाब भी काफी लम्बे समय तक आतंक एवम् हिंसा से ग्रस्त रहा है।

देश और दुनिया का पहला भीषण सीरियल ब्लास्ट सन् 1993 में मुंबई सीरियल ब्लास्ट था। इसमें पहली बार आतंकी वारदात में घातक आरडीएक्स, विस्फोटक का इस्तेमाल किया गया था। 13 दिसंबर, 2001 को, पाँच हथियारबंद आतंकवादियों ने लोकतंत्र के पवित्र मंदिर, भारतीय संसद पर आतंकी हमला कर सनसनी फैला दी थी। इस हमले के समय तत्कालीन गृहमंत्री लालकृष्ण आडवाणी समेत कई सांसद, संसद में मौजूद थे। लेकिन भारतीय संसद सुरक्षाकर्मियों ने सभी आतंकवादी मार गिराये। संसद हमले की साजिश आतंकी संगठन जैश–ए–मोहम्मद के संस्थापक अजहर मसूद ने रची थी अजहर मसूद फरवरी, 1994 में श्रीनगर से गिरफ्तार किया गया था, किंतु जब सन् 1999 में कंधार एयर इंडिया विमान हाईजैक कर लिया गया तो यात्रियों को हिफाजत के लिये वाजपेयी सरकार को अजहर मसूद को छोड़ने का निर्णय लेना पड़ा। इस प्रकार जम्मू–काश्मीर की विधानसभा एवम् भारतीय संसद भवन पर आतंकी हमला लोकतंत्र की नींव पर चोट पहुँचाना था।

देश के इतिहास में उस दिन को काले अक्षरों में लिखा जायेगा जब २६ नवंबर, 2008 को लश्कर–ए–तैयबा के करांची में प्रशिक्षित लगभग 10 आतंकी समुद्र के रास्ते करांची से मुंबई पहुँचे। अजमल आमिर कसाब सहित इन 10 आतंकियों ने छत्रपति शिवाजी टर्मिनल (सीएसटी), लियोयोल्ड केफे, नरीमन हाऊस, होटल ट्राईडेंट, ओबेराय और ताज होटल में नरसंहार किया। आतंकियों की क्रूरता का अंदाजा इसी से लग जाता है, कि 60 घंटे तक चली इस वारदात में 173 लोगों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा। इनमें पुलिस अफसर, कमांडो, होटल कर्मचारी, उनके परिजन और अन्य नागरिकों के अलावा विदेशी मेहमान भी शामिल थे। इस हमले के तार आई.एस.आई. और पाकिस्तान से जुड़े थे। और इस हमले की साजिश लश्कर–ए–तैयबा के प्रमुख जकीउर–रहमान–लखवी ने की थी। साथ–ही लश्कर के लिये काम करने वाले डेविड हेडली ने मुंबई हमले से पहले घटना स्थलों की रेकी कर जानकारियाँ पाकिस्तान को पहुँचाई थीं। जमात–उद–दावा का मुखिया हाफिज सईद का संबंध भी मुंबई हमले से था।

पिछले बीते वर्षों में भारत को भी कई आतंकी घटनाओं का सामना करना पड़ा। 1 जुलाई, 2015 मे गुरूदासपुर में आतंकी हमला, उसके एक सप्ताह बाद ही जम्मू के ऊधमपुर में भारतीय सुरक्षा बलों पर हमला और जनवरी, 2016 में पंजाब के पठानकोट के वायुसेना के बेस पर हमला, सेना के ऊरी सेक्टर पर आतंकी हमला कर आतंकियों ने देश की सुरक्षा व्यवस्था को चुनौती दी। किंतु पठानकोट हमले के मास्टर माइंड आतंकी मसूद अजहर के खिलाफ भारत संयुक्त राष्ट्र पहुँच गया और यह अपील की थी। कि पाकिस्तान में मौजूद जैश–ए–मोहम्मद के इस सरगना को आतंकी घोषित किया जाये तथा भारत पहले ही संयुक्त राष्ट्र की प्रतिबंध समिति को उन 11 आतंकवादियों की ताजा सूची सौंप चुका है, जिसमें अलकायदा, तालिबान और दूसरे संगठनों से संबंधित पाकिस्तान आधारित समूहों के आतंकी शामिल है। पाकिस्तान भारत के दावों और सबूतों को हमेशा से ही खारिज करता रहा है, बल्कि सीधे–सीधे आतंकियों की करतूतों पर पर्दा डालता रहा है जबकि वह स्वयं भी आतंकवाद से बुरी तरह ग्रस्त है। पाकिस्तान में पेशावर जिले के आर्मी स्कूल पर आतंकियों ने जो बर्बरता दिखाई थी वह इसका ज्वलंत उदाहरण है।

अतः हमारे देश में सीमा सुरक्षा के नाम पर अरबों डॉलर के हथियार हर साल खरीदे जाते हैं, लेकिन भारत को बड़े हथियारों की खरीद पर पैसे लगाने के साथ-साथ अपने इंटेलिजेंस नेटवर्क और सीमावर्ती इलाकों के स्थानीय नेटवर्क को मजबूत करना होगा। आतंकी घटनाओं का शिकार हुये सभी आम लोग यह चाहते हैं, कि आतंकवाद का पूरी तरह खात्मा होना चाहिये क्योंकि जब तक आतंकवाद जड़ से समाप्त नहीं होगा तब तक देश का विकास कोई मायने नहीं रखता है।

ऐसा नहीं है, कि हमारे सैनिक सिर्फ कागज के शेर हैं, बल्कि विभिन्न मोर्चो पर सेना आतंकियों को मुँहतोड़ जबाव दिया। कारगिल संघर्ष में भारतीय सैनिकों ने आतंकियों को परास्त कर कारगिल की सबसे ऊँची चोटी टाइगर हिल्स पर अपनी विजय का पताका लहराया। 26/11 आतंकी हमले में सेना ने अजमल आमिर कसाब आतंकी को जिंदा पकड़ा। सेना ने पठानकोट में एयरबेस पर हमले को विफल कर दिया। लेकिन प्रश्न यह है कि, हमारा नेतृत्व, सुरक्षा एवम् खुफियाँ एजेंसियाँ बेहतर आपसी समन्वय बनाकर इस तरह के आतंकवादी हमलों का समय रहते पता लगाकर उसे अंजाम दिये जाने से पहले उसे रोकने में अपनी कुशलता कब प्रमाणित करेगी।

सुझाव -

आतंकवाद को नियंत्रित करने अथवा उसे समाप्त करने के उपाय निम्न है- **पहला**, आतंकी घटनाओं की साजिश रचने वाले एवम् इन घटनाओं को अंजाम देने वालों के लिये फाँसी की सजा बरकरार रखनी चाहिये। **दूसरा,** सरकार को बजट तैयार करते समय देश की सुरक्षा व्यवस्था में अत्यधिक धन व्यय करने पर ध्यान देना चाहिये। **तीसरा**, आतंकवाद को समाप्त करने हेतु सुरक्षा-परिषद में स्थानीय सदस्यता में बदलाव किया जाना चाहिये। क्योंकि चीन आतंकवाद के मुद्दे पर पाकिस्तान के पक्ष में वीटों का प्रयोग करता रहा है। **चौथा**, आतंकवाद को नियंत्रित करने हेतु हिंसात्मक एवम् विद्रोही तत्वों को नैतिकता की तालीम देनी होगी। **पाँचवा**, शिक्षा का प्रचार-प्रसार कर नवयुवकों की मानसिक प्रवृत्ति में बदलाव लाना होगा। **छटवाँ**, आतंकवाद से निपटने के लिये केन्द्र एवम् राज्य सरकारों को आपसी संबंधों में मधुरता लाकर इस समस्या का समाधान करने पर ध्यान देना होगा। **सातवाँ** देश के विभिन्न राजनैतिक दलों एवम् राजनेताओं को अपनी स्वार्थपूर्ण तथा घरेलू राजनीति को छोड़कर राष्ट्रीय हित की ओर कदम बढ़ाने चाहिये। **आठवाँ**, देश की सुरक्षा एवम् खुफिया एजेंसियों को आतंकी गतिविधियों से निपटने के लिये हमेशा सजग एवम् तत्पर रहकर आपसी तालमेल के साथ कार्य करना चाहिये।

निष्कर्ष -

इतने विचार मंथन के पश्चात यह कहा जा सकता है कि आतंकवाद एक ओर जहां लोकतंत्र एवम् देश की सम्प्रभुता के लिये खतरा है, वही दूसरी ओर यह शांति, सुरक्षा और विकास के लिये भी घातक है। आतंकवाद पर वैश्विक रणनीति बनाकर आतंक का पालन-पोषण करने एवम् एवं उसे संरक्षण देने वाले राष्ट्र को विश्व पटल से अलग-थलग कर देना चाहिये। क्योंकि हमारा पड़ोसी देश एक तरफ स्वयं

आतंकवाद का शिकार हो रहा है वहीं दूसरी तरफ वह भारत में बखूबी, आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम दे रहा है। पाकिस्तान को अपनी इस दोहरी और दोगली नीति को त्यागना होगा। आतंकवाद आज समस्त मानव जाति के लिए एक चुनौती के समान है इसलिये सरकार के साथ-साथ प्रत्येक आम नागरिक का यह कर्त्तव्य है, कि वह आतंकवाद को कुचलने का बीड़ा उठाये। तभी समस्त विश्व में शांति कायम होगी। और हमारी राम राज्य की कल्पना साकार होगी। अंत में यही कहेंगे कि-

''कराह उठी है मानवता, आतंकवाद हटाओ।
जहर है यह मानवता का, इसको दूर भगाओ''।।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. भारद्वाज, रामदेव, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और समसामयिक राजनीतिक मुद्दे, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2010.
2. नारायण, इकबाल, भारतीय राष्ट्रीय आंदोलनःशासन एवम् राजनीति, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कंपनी, आगरा, 1995.
3. फड़िया, बी.एल., भारतीय शासन एवम् राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2003.
4. दुबे, श्यामाचरण, मानव अधिकार का अन्तर्राष्ट्रीय विधेयक, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2008.
5. मिश्र, अशोक कुमार, मानव अधिकार सबके लिये, मध्यप्रदेश मानवाधिकार आयोग', भोपाल, 1980.
6. रस्तोगी, गौरीनाथ, हमारा काश्मीर, सुरूचि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1991.
7. पाण्डेय, ओंकारेश्वर, घाटी में आतंक और कारगिल, अनुभव प्रकाशन, दिल्ली, 2001.
8. मधोक, बलराज, काश्मीरः जीत में हार, हिन्दी साहित्य सदन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997.
9. जोशी, श्रीकांत, जम्मू-काश्मीर-लद्दाख- जैसा मैंने देखा, लोकहित प्रकाशन, लखनऊ, 1999.
10. पाठक, विजया, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादः मीडिया की भूमिका, पत्रकारिता संस्थान, भोपाल, 2000.
11. खण्डेला, मानचन्द्र, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद, अविष्कार प्रकाशन, जयपुर, 2002.
12. मधोक, बलराज, काश्मीर का सच, दिनमान प्रकाशन, दिल्ली, 2004.
13. रन्तू, कृष्ण कुमार, कारगिल संघर्षः नियंत्रण रेखा के आर-पार', अविष्कार प्रकाशन, जयपुर, 2002.
14. सिंह, के.पी., भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन, शासन एवं राजनीति, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 1988.
15. अग्रवाल, एच.ओ., अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवम् मानवाधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, 1999.
16. बाथम, विश्वकर्मा, मनोहर लाल, शिवचरण, आतंकवादः चुनौती और संघर्ष, मेघा बुक्स प्रकाशन, दिल्ली, 2003.
17. जगमोहन, काश्मीर समस्या और समाधान, राजपाल एण्ड संस, नई दिल्ली, 1992.

Uniform Civil Code: A Distant Ray of Hope

Anju

Ph.D Student ,

M.D.university ,Rohtak

Introduction

India is a secular state, world's largest democracy and second most populous country emerged as a major power in the 1990s. It is militarily strong, has major cultural influence and a fast-growing and powerful economy. With its many languages, cultures and religions, India is highly diverse. . Religions not only have been serving as the foundation of the culture of India, but have had enormous effect on Indian politics and society. In India, religion is a way of life. It is an integral part of the entire Indian tradition. A vast majority of Indians, (over 93%) associate themselves with a religion. According to the 2001 census 80.5% of the population of India practice Hinduism, Islam (13.4%), Christianity (2.3%), Sikhism (1.9%), Buddhism (0.8%) and Jainism (0.4%) are the other major religions followed by the people of India.5 There are also numerous minor tribal traditions, though these have been affected by major religions such as Hinduism, Buddhism and Christianity. In India, we have a criminal code that is equally applicable to all, irrespective of religion, caste, gender and domicile. However, a similar code does not exist especially with respect to divorce and succession and we are still governed by the personal laws. These personal laws are varied in their sources, philosophy and application. Thus, a major constraint arises while bringing people governed by different religions under one roof. It is in this diverse context we have to analyse the necessity of Uniform civil code.

The expression is combination of three terms Uniform, Civil and Code. *Uniform* means 'same in Similar conditions', *Civil* derived from Latin word *'civilis'* means 'citizen'; when it is used as Adjective of law it means 'pertaining to private rights and remedies of a citizen'; *Code* means 'Codified laws'. Indeed in legal regime, UCC is confined to having uniform family code for every member across the communities i.e. Hindu, Muslim, Christian, Parsi or Jews residing in India to achieve the goal embodied in the Constitution of India which solemnly resolved to constitute India into Sovereign, socialist, secular, democratic and republic. Thus the concept has two aspects *firstly,* to have uniform law for all communities; *secondly,* similar laws for all and similarity should be regarding equality and gender justice. It implies the same set of secular civil laws to govern all peoples irrespective of their Religion, Caste and tribe. The areas covered under it are the Laws related to Marriage, Divorce, Adoption, and Inheritance and acquisition and Administration of property.6 The need for a uniform civil code is inscribed in Article 44 (Article 35 in the draft constitution). This article is included in Part IV of the Constitution dealing with the directive principles of state policy.

The legal nature of the Directive Principles is such that it cannot be enforced by any court and therefore these are non-judicial rights. The Constitution further calls upon the State to apply these principles in making laws as these principles are fundamental in the governance of the country. Article 44, which deals with the Uniform Civil Code states: "The State shall endeavor to secure for the citizens, a uniform civil code throughout the territory of India". The objective of this article is to effect an integration of India by bringing all communities into a common platform which is at present governed by personal laws which do not form the essence of any religion. Just after Independence the Circumstances were such that it was not feasible to impose a Uniform Civil Code on the citizens. That is why it has been covered under the directive principle of state policy. It is really unfortunate that anybody who speaks of this civil code is branded communalist. The impression is always created by the minority community, that the majority community is exterminating the minority by imposing its personal law on them.

History of Uniform Civil Code

Though it is said the concept of Uniform Civil Code is the child free India (Post Independent) it has its deep roots generally in the history of struggle for independence. In the past, India was scattered into tiny republics, which were ruled, administered and governed by the respective sovereigns or their representatives. With the political unification of India, after the advent of Britishers, necessity of common law governing the whole citizenry of this sub- continent became more acute. Before that, the common law- Civil as well as Criminal, enacted by the territorial heads, according to their conventions, which they inherited from their previous generations, having religious sanctity. Each kingdom had its own law, and its own machinery for administration thereof. There was no uniformity either in law or in procedure as each state was sovereign and there was no cohesive bond which could foster uniformity in the administrative of justice. Uniform Civil Code, An Ignored Constitutional Imperative by M.S Ratnaparkhi, Atlantic Publishers and Distributers, ed 1st, Pg 54. During the British regime urgent steps were taken to bring uniformity in law which could govern whole citizenry of British India, excluding the princely states. They were sovereign as far as their administration was concerned. However the Britishers were conscious of their own limitations in doing exercise. And therefore, the personal law applicable to each community remained untouched and it continued to operate as it would hurt the religious sentiments of the natives and further assured that their religious beliefs and sentiments would be scrupulously honoured. However at the time of drafting our constitution, there were extensive debates regarding these personal laws. For some, they were too divisive. They argued that a Uniform Civil Code would help in constructing an Indian national identity and eradicate those based on caste and religion. But the proposal was also resisted on the grounds that it would destroy the cultural identity of minorities. Subsequently, a compromise was reached. The

UCC was placed under the Directive principles, which the state shall endeavour to achieve but which is non-binding. Quite similarly, during the debates over the Hindu code bills (a set of common laws governing personal matters for all Hindus), large segments of the Hindu population protested and held rallies against the bills. They argued that practices such as divorce were prohibited by Hinduism and that for a Hindu the institution of marriage is indissoluble. They were also against granting equal property rights to women, fearing the concept of a joint family might crumble because of it. These people saw themselves being singled out as the only religious community whose laws were to be reformed. However, Nehru saw such codification as necessary to unify the Hindu community, which he saw as a first step towards unifying the nation. Nehru split the Code Bill into four parts, including the Hindu Marriage Act, the Hindu Succession Act, the Hindu Minority, and Guardianship Act, and the Hindu Adoptions and Maintenance Act.

Need of Uniform Civil Code in India

The supporters of a uniform civil code have been campaigning for it even before the independence of India. India has always been a place of many colours and spices and before independence in 1947 it would have been hard to point out what constituted India. Fighting the British rule and winning our independence also helped in creating this nation we call India. It was known even at that time that to further unite India and make it a truly secular nation we would need a uniform civil code. But even after 69 years of independence we haven't been able to do this. The reasons for why this has not been done are complex and a different topic on its own but it all boils down to political will. Politicians have always found it beneficial to play vote bank politics and try to appease different castes and groups instead of attempting to integrate our nation. Instead of focusing on the negative let's focus on the positive and talk about the reasons why we do need a uniform civil code.

1. It Promotes Real Secularism

What we have right now in India is selective secularism which means that in some areas we are secular and in others we aren't. A uniform civil code means that all citizens of India have to follow the same laws whether they are Hindus or Muslims or Christians or Sikhs. This sounds fair and secular to me. A uniform civil code doesn't mean it will limit the freedom of people to follow their religion, it just means that every person will be treated the same. That's real secularism.

2. All Indians should be Treated Same

Right now we have personal laws based on particular religions, which means that while Muslims can marry multiple times in India, a Hindu or a Christian will be prosecuted for doing the same. This doesn't seem like equality to me. All the laws related to marriage, inheritance, family, land etc. should be equal for all Indians. This is the only way to ensure that all Indians are treated same.10 Ibid 11 Ibid 12 *Ibid*

3. It will give More Rights to the Women

A uniform civil code will also help in improving the condition of women in India. Our society is extremely patriarchal and misogynistic and by allowing old religious rules to continue to govern the family life we are condemning all Indian women to subjugation and mistreatment. A uniform civil code will help in changing these age old traditions that have no place in today's society where we do understand that women should be treated fairly and given equal rights.

4. Every Modern Nation has it

A uniform civil code is the sign of modern progressive nation. It is a sign that the nation has moved away from caste and religious politics. While our economic growth has been the highest in the world our social growth has not happened at all. In fact it might be right to say that socially and culturally we have degraded to a point where we are neither modern nor traditional. A uniform civil code will help the society move forward and take India towards its goal of becoming a developed nation.

5. Personal Laws Are a Loop Hole

The various personal laws are basically a loop hole to be exploited by those who have the power. Our panchayats continue to give judgments that are against our constitution and we don't do anything about it. Human rights are violated through honour killings and female foeticide throughout our country. By allowing personal laws we have constituted an alternate judicial system that still operates on thousands of years old values. A uniform civil code would change that.

6. It Will Help in Reducing Vote Bank Politics

A uniform civil code will also help in reducing vote bank politics that most political parties indulge in during every election. If all religions are covered under the same laws, the politicians will have less to offer to certain minorities in exchange of their vote. Not having a uniform civil code is detrimental to true democracy and that has to change.

7. It Will Integrate India

A uniform civil code will help in integrating India more than it has ever been since independence. A lot of the animosity is caused by preferential treatment by the law of certain religious communities and this can be avoided by a uniform civil code. It will help in bringing every Indian, despite his caste, religion or tribe, under one national civil code of conduct.

Obstacles to Uniform Civil Code

The three objections raised for implementations of UCC in India by communities: ***Firstly,*** Article 44 of Indian Constitution must be repealed because personal laws are sacrosanct and immutable and no legislature can amend it: Such an objection is baseless, irrational and meaningless because there is nothing divine about personal laws. A popular misconception which shrouds the issue of 'personal laws' is that these laws are based on religious texts which lay a claim to 'divine

revelations' and hence pre- ordinate, infallible, sanctimonious and static. While 'divine revelations' can at best be termed as a source of law, they do not contain 'law as we understand the term today. Divine law-making cannot be termed as a legal system in its own right it needs human interventions by way of interpretation, application and live-in experience of people to transform it into law of land hence it would be accurate to state that the diverse laws regulating family relationships are rooted either in customary practices or in interpretations of the divine law by scholars which were later modified through colonial interventions.14 The provision in Art. 44 is nothing but an implementation of the objective of 'fraternity, unity and integrity of the Nation', which is not only enshrined in the Preamble to the Constitution, but also in the Fundamental Duties in Article 51A (c) and (e) of the Constitution.14 Flavia Agnes ,'Family Law :Family laws and Constitutional Claims', Vol 1, Oxford Press, 2011 15 **UNIFORM CIVIL CODE, WOMEN EMPOWERMENT** John Vallamattom and another v. Union of India (2003) ***Secondly,*** UCC is against fundamental right guaranteed under Article 25 and 26 of the Constitution. Both Article 25 of Indian Constitution (the right freely to profess, practice and propagate religion) and Article 26 of Indian Constitution (freedom to manage religious affairs) are, however, "subject to public order, morality and health" and to the values enshrined in all other fundamental rights such equality and social justice. Article 25 of Indian Constitution, while protecting religious freedom, also empowers the State to regulate or restrict "any economic, financial, political or other secular activity which may be associated with religious practice". This introduces an important distinction between sacred and secular. Thus practices such as witchcraft, superstition, ordeals, sati, child marriage, prohibitions against widow remarriage, caste discrimination, casual triple talaq and polygamy may be and have been barred or regulated. However, whether and where a boundary is to be drawn could be contentious. Chief Justice Khare in **John Vallamattom case***16*reminded that there is no necessary connection between religious and personal law in a civilized society. Article 25 of the Constitution confers freedom of conscience and free profession, practice and propagation of religion. The aforesaid two provisions viz. Articles 25 and 44 of Indian Constitution show that the former guarantees religious freedom whereas the latter divests religion from social relations and personal law. It is not matter of doubt that marriage, succession and the like matters of a secular character cannot be brought within the guarantee enshrined under Articles 25 and 26 of the Constitution.' ***Thirdly***, UCC is against fundamental right contained in Art. 29 of Indian Constitution. The defence taken against Art. 44 of the Constitution is of Art. 29 of Indian Constitution that guarantees right as to '*culture*'. It is contended that personal law forms a part of 'culture'. The word 'culture' is not defined in Art. 29. However, one thing is certain that it has to be read with Article 44 & 51A (f) of the Constitution. Firstly, it has to be noted that Articles 25-28 of the Constitution are grouped under the heading 'freedom of religion' and thereafter, comes the heading 'Cultural &

Educational rights' including thereunder Articles 29 & 30 of the Constitution. It would follow that the 'culture' referred to in Art. 29(1) of the Constitution is something which is not founded on religion and which may belong to any section of the citizens' which may not be necessarily a religious minority. The distinction between culture and religion needs to be taken into consideration. The best illustration of this proposition would be a saying "I am Muslim by religion, but a Hindu by culture". If this proposition be true, a Muslim's claim to be governed by a different personal law, alleged to be founded on religion, cannot be defended as a fundamental right under Article 29(1) of the Constitution. A fear is expressed that if Art. 44 of the Constitution is implemented, it would take away the separate identity of Minority communities. This fear is totally unfounded as there are Articles 25-27 of the Constitution to protect one's own religion, religious beliefs & sentiments.

The Hindu Code Bill and Uniform Civil Code

In 1944 itself the government had appointed a Hindu Law Committee under the Chairmanship of B.N. Rao, the purpose of which was to formulate a code of Hindu Law. According to Derret, the Hindu code is a step in the direction of a uniform civil code. However, many felt that instead of Hindu code bill, uniform civil code should have been adopted. But Nehru was against its implementation. He is reported to have said as follows "*If he or anybody else brings a Civil Code Bill, it will have my extreme sympathy. But I confess, I do not think that at the present moment, the time is ripe in India to try to push it through. I want to prepare the ground for it and this kind of thing is one method of preparing the ground.*" Secularism and the Constitution of India, 1971, P.B.Gajendragadkar, The Hindu Code Bill was placed but dropped due to opposition. In 1955 and 1956 the Code was passed in the form of 4 separate bills.

1. Hindu Marriage Bill
2. Hindu Succession Bill
3. Hindu Minority and Guardianship Bill
4. Hindu Adoptions and Maintenance bills.

Many members opposed the Hindu Code Bill. The arguments varied widely. Some of them agreed that the Bill is opposed to Manu's code which they equated as God's will. For many Hindus, marriage was a sacrament which should not be interfered. Some other members pointed but that the Hindu law has emerged from the Vedas which should not be altered. Arguments opposing the bill pointed out the different obligations of men and women. They also argued that the bill is against the Hindu law which will cause disruption to family. Some men even argued that the women themselves did not want these changes. Hence, with great difficulty, the bill was passed. Some of the arguments raised during this debate indicate the fact that it is extremely difficult to carry on reforms pertaining to personal laws. It shows that the Hindu women also were not able to gain equality due to the Hindu orthodox opinion

and secondly due to the strong religious and communitarian identity of the Hindus as a whole. However, the reforms which were made in the Hindu personal law improved the position of women with regard to divorce and inheritance but did not bring about total equality. The reason was that the objective of reform was to codify Hindu law. Women's interests were subordinated to the political interests of the state as well as to the interests of men in the family and society. It is a fact that basic rights of women may be obtained if she is granted equal property rights, custody and guardianship rights etc.. This would empower and prevent violence against women. But through the personal laws, subordination of women to men is obtained. "The society, family and religion put a number of restrictions on women in the name of 'honor' and with a view to keep women dependent on men andfamily.

Even in spite of the Hindu Code Bill, the inheritance rights of women according to Hindu personal law shows that equal rights are not given to woman on the ground that it would disturb family peace, lead to fight between brothers and sisters, result in fragmentation of land and so on. So, patriarchal order of family is promoted. When a woman is denied the ownership, inheritance and matrimonial rights, it indicates male dominance and non-recognition of women's labor at home. Custody and adoption laws also enforce the notion of father as the natural guardian. A married Hindu woman is not allowed to adopt a child in her own name. Thus, there is legitimization of male dominance in a family system. Similarly the Hindu succession law protects son’s rights by keeping the provision of making a will.

In **S.R Bommai v Union of India***29*, it was opined by Justice Reddy as religion was a matter of faith and cannot be mixed with secular activities. The State may regulate secular activities by the enactment of laws. A uniform code has been wrongly thought to be an assault on religion. What it essentially aims at is secular reform of property relations in respect of which all religious traditions have grossly discriminated against women. A uniform civil code is, therefore, foremost a matter of gender justice. But male superiority and greed have joined with religious conservatism to forge an unholy alliance to perpetuate a major source of gender discrimination thereby impeding the modernisation of social relations and national integration.30 A uniform civil code will focus on rights, leaving the rituals embodied in personal law intact within the bounds of constitutional propriety. A uniform civil code should not be constructed, as sometimes suggested, by putting together the best elements from various existing personal codes.

Conclusion

So, it can be inferred from the above judgments that the Hon’ble Supreme Court has reiterated about the need of Uniform Civil Code again and again and has settled the controversies and ambiguities which have arisen due to the apparent conflicts in the personal laws. Being optional, it will provide free choice and facilitate harmonization of social relationships across the country in keeping

with the changing contours of emerging societal realities. If the Uniform Civil Code would have been implemented for whole of the country then such kind of controversial issues would have been resolved by the statutory enactments only. As India is a country of Unity in Diversity having Multi religions and cultures. So, civil matters of the citizens should be taken in the same clutches of law only then the prime constitutional goal of fraternity can be materialized in the real sense otherwise these divisive forces would continue to violate the constitutional spirit. A secular India needs a uniform civil code but urgent need to force any uniform civil code on an unwilling population is not necessary. Most people are not ready to adopt truly secular laws separated from religious custom. Uniform Civil Code can be successfully introduced only after achieving improved levels of literacy, awareness on various socio-political issues, enlightened discussions and increased social mobility. If the Centre is unwilling to move forward, there is no reason why some progressive States should not take the lead as they have done in the case of legislating Freedom of Information Acts. A national uniform civil code could follow. A secular India needs a uniform civil code. To mark time is to march with the communalists. Thus the ultimate aim of reforming uniform civil code should be usher in the new dawn of freedom, dignity and opportunity for both the sexes equally. So, in this sense uniform civil code is the need of the hour. A strong political will is required for the same along with the feeling of religions tolerance and mutual respect on part of each and every citizen of India.

References

1 United Nations , Report of the Committee on the Elimination of All Forms of Discrimination Against Women, 8, 22nd Session 17 Jan-4 Feb 2000 and 23rd Session 12-30 June, General Assembly Official Records, New York, 2000.

2 Kirti Singh, "*Obstacles to women's Rights in India*", Human Rights of Women: National and International Perspectives 375 (1994)

3 V.N. Shukla, *The Constitution of India*, 308 (2001)

4 F. Agnes, "*Hindu Men Monogamy and Uniform Civil Code*" XXX (50) Economic and Political Weekly 32 (1995); B. Karat, "*Uniformity v. Equality*" Frontline 17 Nov, 1995.

5 V.R. Krishna Iyer, "*Unifying Personal Laws*" The Hindu, 6 September 2003 11 B. Shiv Rao (ed.), *The Framing of India's Constitution: Select Documents* Vol. II, The Indian Institute of Public Administration (IIPA), New Delhi, 1968. Debates of 14, 17-20 April 1947.

6 Lok Sabha Secretariat, *Constituent Assembly Debates* Vol. III, 551, 23 Nov. 1948.

7 Virendra Kumar, "*Towards a Uniform Civil Code: Judicial Vicissitudes [from Sarla Mudgal (1995) to Lily Thomas (2000)]*" 42 JILI 31

8 Rajeev Dhawan, "*The Apex Court and Personal Law*" The Hindu, 14 March 1997.

9 Nilanjana Bhaduri Jha, "*Does India really need a Uniform Civil Code?*" from website of Times of India.

10 Dhanajay Mahapatra, "*All marriages must be registered*" The Times of India, 15 Feb. 2006.

11 Satyabrata Rai Chawdhuri, "*A Common Civil Code : It is a Constitutional Obligation*" 10, The Tribune, 30 July 2003.

12 "*Muslim Personal Law: Clearing The Cobwebs*", The Hindu, July 30, 2006.

13 Shabana Azmi, *Women, Stand Up For Your Rights*, The Times of India, 7 July 2005

बघेलखण्ड में 1857 का विप्लव एवं राजनीतिक जागरण

रिया सिंह
शासकीय महाविद्यालय रायपुर कर्चुलियान
जिला रीवा

भारतीय इतिहास में रीवा बघेलखण्ड के नाम से जाना जाता है। बघेलखण्ड की सबसे बड़ी रियासत रीवा है। अन्य रियासतों की भांति बघेलखण्ड भी ई. सन् 1857 के विद्रोह में अशान्त रहा है। 19वीं शताब्दी के आते–आते इस अंचल में मराठों और अंग्रेजों ने अपना वर्चस्व जमाया। ब्रिटिश शासन काल में यह क्षेत्र यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से स्थानीय राजाओं से शासित रहा है। विद्रोह काल में इस रियासत के शासक थे महाराज रघुराज सिंह उस समय उनकी आयु 34 वर्ष की थी। रीवा में विद्रोह पनपने के अनेक कारण थे। इसके अलावा पालीटिकल एजेन्ट रीवा ने 30 अक्टूबर ई. सन् 1857 के पत्र में बताया ''विद्रोह के समय जो कुछ भी हुआ उस पर राजा की सहमति अवश्य थी। वह तो कोटा, सोहाबल आदि को हड़पने के प्रयास में था। यदि ब्रिटिश सरकार हार जाती तो ये इलाके राजा के पास ही रहेंगे और यदि ब्रिटिश सरकार जीत जाती है तो वह उन्हें ब्रिटिश सरकार को दे देगा ताकि ब्रिटिश सरकार के गुस्से से बचा रहे।

ब्रिटिश सरकार राज्यों तथा जागीरों को किसी भी तरीके से हड़पने में लग गई। जब सरकार किसी न किसी बहाने से इन राज्यों में अपना आधिपत्य स्थापित कर रही थी उसी समय से ई. सन् 1857 की विद्रोह की तैयारियाँ प्रारंम्भ हो गई थीं। जो राज्य ब्रिटिश सरकार से अछूते रहे वहाँ भी उन्होंने अपना पदाधिकारी नियुक्त किया, जो कि राज्य व राजा के कामकाज तथा शासन की कमजोरी के बारे में ब्रिटिश सरकार को बताया करते थे। इसी समय मद्रास सेना का लेफ्टीनेंट विलाबी आसवर्न को रीवा के विशेष कर्तव्यस्थ अधिकारी के रूप में पदस्थ किया गया। ब्रिटिश सरकार तो चाहती थी कि राजा अपने असंतुष्ट सरदारों से दूर रहे। महाराज जब जगन्नाथ पूरी की यात्रा पर गए थे तब आसबर्न भी उनके साथ गया था। उसी सयम बेरकपुर छावनी के मंगल पांण्डे ने महाराज से मुलाकात करने की अर्जी दी इस पर गवर्नर जनरल ने आसबर्न को आदेश दिया कि वह मंगल पांण्डे को राजा से न मिलने दे। इस कारण आसबर्न और महाराज रीवा जल्दी लौट आए।

बैरकपुर छावनी का एक सिपाही अमरी खाँ अप्रैल ई. सन् 1857 से सितम्बर ई. सन् 1857 की छुट्टी पर अपने गाँव सिमन नौलेरी (लाहौर) जा रहा था। उसी रेजीमेन्ट के एक सूबेदार अलिफ खाँ ने उस सिपाही को रीवा राजा के लिए एक पत्र दिया था। इस पत्र को लेकर वह 17 अप्रैल को रीवा आया। रीवा आने पर उसे गिरफ्तार कर लिया गया। रीवा अखबार ने अपने 18, 19, 20, 21 अप्रैल के अंको में इस बारे में काफी प्रकाश डाला गया। उस समय मथुरा प्रसाद राज्य के दीवान थे। उन्होंने कामता प्रसाद

बख्शी को आदेश दिया कि वह हीरानांद अखबार नबीस की उपस्थिति में अमरी खाँ के बयान को कलमबद्ध करें। अमीर खाँ के बयान में चर्बीयुक्त कारतूसों के बारे आँखों देखा हाल बयाँ किया गया था। उसने बताया कि 8 मार्च को जनरल ने किस तरह से अलिफ खाँ को चर्बीयुक्त कारतूस को इस्तेमाल करने के लिए बाध्य किया।

अलिफ खाँ का एक मित्र अंग्रेज था जिसने अलिफ खाँ को बताया कि इस कारतूस में गाय और सुअर की चर्बी का उपयोग किया गया है जिसे तुम्हें अपने दाँतों से काटना है। यह सुनकर अलिफ खाँ ने बंदूक पटक दी, जिससे बंदूक टूट गई थी। जनरल ने अलिफ खाँ को गिरफ्तार कर लिया। वहाँ पर अन्य भारतीय सिपाही भी थे। जो कि यह सब जानकर उत्तेजित हो उठे और उन्होंने विद्रोह कर दिया।

अलिफ खाँ ने जो पत्र अमीर खाँ के द्वारा रीवा महाराज को भेजा था उसमें उसने 11 मार्च ई.सन् 1857 का वर्णित किया था उसी पत्र में बैरकपुर घटना का वृतान्त की लिखा था। उसने पत्र के द्वारा रीवा महाराज से प्रार्थना की थी कि यदि आप हमें प्रोत्साहन देते हैं तो हम अपना विद्रोह जारी रखें। आपका आशीष चाहिए ताकि उसके अनुसार हम व्यवस्था कर सकें। ई. सन् 1857 की क्रांति के समय महाराज रघुराज सिंह रीवा राज्य के सिंहासन पर आसीन थे। इनकी क्रांति के प्रति दोहरी नीति प्रतीत हुई। वे जहाँ एक तरफ अंग्रेजों के प्रति अपनी वफादारी दिखा रहे थे वहीं दूसरी तरफ अन्दर से क्रांति के प्रति सहानुभूमि रखते हुए दिखाई देते हैं। वे बघेलखण्ड में शांति स्थापित करने के लिए दो हजार जवान ब्रिटिश सरकार को देने की इच्छा प्रकट करते हैं। इसी सेना का कमाण्ड कर्नल हाईड ने अपने हाथ में लेकर प्रान्त में विद्रोहियों को आने से रोका।

बिहार के प्रमुख नेता कुंवर सिंह जी थे। जब अगस्त ई. सन् 1857 के अन्तिम दिनों में यह खबर मिली कि कुँअरसिंह कटराघाट से डभौरा होता हुआ बांदा कि ओर जा रहा था उन्हीं दिनों रीवा में एक घटना घटी। तेलंगाना का एक ब्राहमण रीवा आया। पालिटिकल एजेंट को उस पर शक हुआ अतः उसने उसे बंदी बना लिया। उस समय यह अफवाह फैल गई कि उस ब्राह्मण को फांसी दे दी जायेगी। रीवा राज्य में किसी ब्राह्मण को फांसी देना घोर पाप माना जाता था। अतः रीवा राज्य के सरदारों को यह बात नगवार लगी। इन सरदारों में धीर सिंह, पंजाब सिंह, श्यामशाह और रणमत सिंह थे। उन्होंने इस ब्राह्मण को छुडाने का हर एक प्रयत्न किया लेकिन आसवर्न ने किसी की नहीं सुनी। बल्कि उसने चारों सरदारों को सेवा मुक्त कर दिया।

ब्राह्मण की गिरफ्तारी का दोष अमान अली पर गढ़ा गया और उससे कहा गया कि अब वहीं एजेन्ट के पास जाकर उस ब्राह्मण को छुडावें। जिस समय सरकार तथा प्रतिष्ठित व्यक्तियों के बीच चर्चा हो रही थी उन्होंने अमान अली से पूछा कि क्या सरकार ने सच में उस ब्राह्मण को फाँसी की सजा देने के लिए ठान ली है जैसे कि अफवाह फैलाई गई है। सन् 1857 के दिसम्बर माह के अन्त तक बघेलखण्ड

के रीवांचल में विद्रोह की अग्नि फैल गई। यहाँ विद्रोह राजपुर की सीमा तक प्रवेश कर गया। उत्तर में रीवा रियासत को सोहागपुर में विद्रोहियों की स्थिति मजबूत थी। पूर्व में संबलपुर के विद्रोह ने रायपुर में खतरा उत्पन्न कर दिया था। निजामी ने लिखा है– ''जून ई.सन् 1857 की क्रांति ने विशेष उग्र रूप धारण कर लिया है और जुलाई और अगस्त में राज्य की स्थिति चिंताजनक हो गई। **प्रो. निजामी** ने लिखा है कि रीवा नगर के देवी के मंदिर में पुजारी नागर ब्राह्मण के मकान में रणमत सिंह छिपे हुए थे। महाराजा रीवा के कहने पर रणमत सिंह ने पालिटिकल एजेंट के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। इस कार्यवाही में तत्कालीन दीवान दीनबन्धु पांण्डे का प्रमुख हाथ था। एजेन्ट ने दो सौ सशस्त्र सिपाहियों के साथ ईश्वर जीत सिंह की देखरेख में बांदा भेजा जहाँ उसे फांसी पर लटका दिया गया। इस प्रकार रघुराज सिंह ने रणमत सिंह को आत्मसमर्पण करवाकर अंग्रेजों के प्रति वफादारी निभाई।

सन् 1857 में नागौद में विद्रोह की अधिक आशंका होने पर नागौद के राजा ने रीवा के राजा को लिखा कि वह अपनी फौज नागौद भेज दे। 8 सितम्बर को नागौद के पोलिटिकल असिस्टेंट को एक द्रुतगति का संदेश मिला कि जगदीशपुर के बाबू कुँवरसिंह ने रीवा राज्य की सोहागी घाट को पार कर लिया एवं वे नागौद की ओर बढ़ रहे हैं। रीवा राजा ने उन्हें रोक पाने में असमर्थता प्रकट की। यह संदेश पाकर मेजर इलियस और भी घबरा गया। दूसरी तरफ नागौद के सिपाहियों को कुंवरसिंह का साथ मिल जाने से उन्हें काफी बल मिल गया और विद्रोह करने की हिम्मत बढ़ गई।

1857 के विप्लव का परिणाम–

ई. सन् 1857 की क्रांति के पश्चात अंग्रेजों ने पुनः अपनी प्रभुसत्ता स्थापित करने का प्रयत्न किया। ई. सन् 1857 का विद्रोह ब्रिटिश शासन को समाप्त करने में सफल नहीं हो पाया। एक वर्ष के भीतर यह स्पष्ट हो गया था कि अंग्रेजी सरकार इसे दबाने में सफल हो जाएगी। कुछ समय के लिये इससे सम्राज्य के अस्तित्व को गंभीर खतरा अवश्य पैदा हो गया था। व्यापक स्तर पर ब्रिटिश सम्राज्यवादी सरकार का विरोध इसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू था। इससे भारत में ब्रिटिश सम्राज्यवाद का स्वरूप यथावत बना रहा। ई. सन् 1858 के पश्चात नीतियों में परिवर्तन किया गया जिसमें ई.सन् 1857–58 के अनुभवों का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। ई. सन् 1858 में ईस्ट इंडिया कंपनी को समाप्त करके भारत के शासन की बागडोर ब्रिटिश शासन के हाथ में आना इस क्रांति का प्रमुख प्रभाव माना गया है। भारत के साथ ब्रिटेन का संबंध अथवा सम्राज्यवाद के स्वरूप में कोई अंतर नहीं आया। ब्रिटेन के उद्योगपति काफी समय से मान रहे थे कि भारत का शासन ईस्ट इंण्डिया कंपनी के हाथ में होने के कारण वे भारत की व्यापक मंडी का लाभ नहीं उठा पा रहे हैं। इसलिए ईस्ट इंडिया कंपनी का अंत करने की मांग पहले से ही कर रहे थे। इस प्रकार से ईस्ट इंडिया कंपनी की समाप्ति इस विद्रोह का परिणाम नहीं था, बल्कि इस विद्रोह से ब्रिटेन में कंपनी के आलोचकों को काफी समय से चल रही मांग को पूरा करवाने का अवसर अवश्य

मिल गया। इस विद्रोह के परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने भारत में अपनी जड़े मजबूत करने के लिए प्रशासनिक परिवर्तन भी किए। सर सैयद अहमद खाँ तथा अंग्रेजों का यह मानना था कि विद्रोह करने का एक प्रमुख कारण इस बात का अभाव था कि कंपनी के पास भारतीयों की इच्छाओं को जानने का कोई तरीका नहीं था।

संदर्भ–

- डॉ. चित्रा आम्रवंशी–बघेलखण्ड की सामाजिक एवं आर्थिक संरचना
- कर्नल जर्नादन सिंह –रीवा राज्य का सैनिक इतिहास, माधव प्रिंटर्स, इलाहाबाद
- डॉ. नागेन्द्र सिंह कमलेश–विंध्याचल का आधुनिक हिन्दी काव्य
- रायबहादुर डॉ. हीरालाल–मध्यप्रदेश का इतिहास
- श्याम सुन्दर सक्सेना–भोपाल राज्य का स्वतंत्रता का इतिहास

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष सितम्बर 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

समीक्षा के कतिपय भारतीय एवं पाश्चात्य मानक

डॉ. बी.एन. सिंह
सह प्राध्यापक, हिन्दी
शासकीय महाविद्यालय रायपुर कर्चुलियान
जिला रीवा

बीसवीं शताब्दी का काव्य–शास्त्र विभिन्न वादों एवं बहुमुखी प्रवृत्तियों से ग्रसित रहा है। इसमें मुख्यतः कलावाद, अभिव्यंजनावाद, प्रतीकवाद, बिम्बवाद, मनोविश्लेषणात्मक विचारधारा, समाजवादी या प्रगतिवादी विचारधारा आदि उल्लेखनीय हैं। इन वादों एवं प्रवृत्तियों के उन्नायकों ने एकांगी दृष्टिकोण से साहित्य की विभिन्न व्याख्यायें प्रस्तुत की हैं, जो परस्पर–विरोधी हैं। ऐसी परिस्थिति में आई.ए.रिचर्ड्स, हरवर्ट रीड, एफ.एल.ल्युकस जैसे विद्वानों ने साहित्य–शास्त्र को विज्ञान एवं मनोविज्ञान के आधार पर व्यवस्थित रूप देने का प्रयास किया है,। किन्तु, इस क्षेत्र में अभी भी बहुत कार्य बाकी है। 'अतः आज काव्य–चिंतन के क्षेत्र में अराजकता की सी स्थिति चल रही है–हर आलोचक का काव्य के सम्बन्ध में अपना अलग सिद्धान्त है। अतः कह सकते हैं कि हर आलोचक की अलग–अलग ढ़पली और अलग–अलग राग है। यह स्थिति स्वयं स्वस्थ एवं संतुलित समीक्षा के लिए भी घातक है।'

'समीक्षा' शब्द अत्यन्त प्राचीन काल से विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त किया जा रहा है। इसमें किसी कृति को देखने, समझने या मीमांसा करने का भाव निहित है। संस्कृत साहित्य में समीक्षा–कर्म के सन्दर्भ में कहा गया है कि 'अंतर्भाष्यं समीक्षा, अवांतरार्थ विच्छेद च सा'[16] अर्थात् कृति की व्याख्या के अनन्तर उसका विवेचन–विश्लेषण करते हुए उसमें निहित गूढ़ अर्थ को व्यक्त करना ही समीक्षा कार्य है। भारतीय समीक्षा साहित्य को दो भागों में विभक्त माना जाता है– संस्कृत समीक्षा और हिन्दी समीक्षा।

संस्कृत समीक्षा–पद्धति काव्यशास्त्रीय समीक्षा पद्धति के नाम से भी जानी जाती है, जिसमें सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों पक्ष सम्मिलित हैं। संस्कृत के काव्यशास्त्रीय समीक्षा–ग्रंथों में काव्य का सौन्दर्य, लक्षण, काव्यात्मा आदि की तलाश तथा स्थापनाओं के रूप में रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि एवं औचित्य–सिद्धान्त को प्रतिष्ठित करने का प्रयास दिखाई पड़ता है। इन्हीं काव्य–सिद्धान्तों को केन्द्र में रखकर काव्य की परिभाषा, स्वरूप, तत्त्व, वर्ण्य–विषय, काव्यास्वाद तथा काव्य के प्रयोजन का सम्यक् विवेचन प्रस्तुत किया गया है। अतः काव्य–सृजन के ये सभी सिद्धान्त समीक्षा–सिद्धान्त के रूप में मान्य हुए। इन्हीं के आधार पर काव्य के विवेचन–विश्लेषण का श्री गणेश हुआ।

प्राचीन भारतीय समीक्षा–दृष्टि काव्य में पूर्णत्व की चेतना से युक्त वाली दृष्टि रही है। जिसके चलते हमारी परम्परा में नैतिकता तथा आनंद, धर्म और काव्य का वैसा द्वन्द्व नहीं है जैसा पाश्चात्य समीक्षा में रहा है। हमारी परम्परा जीवन के लिए चार पुरूषार्थ– अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष को आवश्यक मानती रही है। काव्य के लिए ये ही लक्ष्य माने गये थे। आचार्य भामह ने कहा–

'धर्मार्थ काम मोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।

करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधु काव्य निबंधनम्।।'[17]

'नाट्यशास्त्र' के रचनाकार आचार्य भरतमुनि को भारतीय साहित्य–शास्त्र की स्थापना का श्रेय दिया जाता है। साहित्य–शास्त्र में उनकी सबसे बड़ी देन रस–सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार साहित्य का लक्ष्य पाठक का श्रोता की भावनाओं को उद्वेलित करके उसे आनन्द प्रदान करना है– इसी आनन्द को साहित्य शब्दावली में 'रस' कहा गया है। आचार्य भरत ने कहा था– 'विभावानुभाव व्यभिचारि संयोगाद् रस–निष्पतिः' अर्थात् विभाव, अनुभाव एवं व्याभिचारी के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। परवर्ती व्याख्याताओं ने इस सूत्र को अपने–अपने दृष्टिकोण से व्याख्या करते हुए रस–सिद्धान्त का विकास कई रूपों में किया। इस क्षेत्र में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य आचार्य भट्टलोल्लट (8–9वीं शती), शंकुक (9वीं शती), भट्टनायक (9–10वीं शती) एवं अभिनवगुप्त (10–11वीं शती) का है। आचार्य भट्टलोल्लट ने भरत के रस सूत्र की नयी व्याख्या करते हुए अपने 'उत्पत्तिवाद' की स्थापना की। उन्होंने रस निष्पत्ति को यांत्रिक रचना व्यापार के स्थान पर क्रमिक विकासवादी रूप प्रदान किया। आचार्य शंकुल ने भट्टलोल्लट की व्याख्या का खण्डन करते हुए 'अनुमितिवाद' की स्थापना की। उन्होंने न्याय–शास्त्र के अनुमानवाद को आधार बनाते हुए रस की प्रत्यक्ष अनुभूति के स्थान पर उसकी अप्रत्यक्ष अनुमिति की सम्भावना को सिद्ध किया। आचार्य भट्टनायक ने रस–निष्पत्ति की क्रिया को तीन मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं– अभिधा (अर्थ–बोध), भावकत्व एवं भोजकत्व–में विभाजित करते हुए साधरणीकरण के सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की। अभिनवगुप्त ने भट्टनायक की अनेक मान्यताओं का खण्डन करते हुए भी साधारणीकरण को स्वीकार किया। अभिनवगुप्त ने पहली बार इस ओर ध्यान दिया कि थोड़ा बहुत योगदान रहता हैं इस ओर ध्यान देते हुए अभिनवगुप्त का अभिव्यक्तिवाद अरस्तू वे विरेचन सिद्धान्त, फ्रायड के वासना सिद्धान्त एवं क्रोचे के अभिव्यंजनाद के बहुत समीप पड़ता है।

भारतीय संस्कृत–साहित्य का सर्वतोन्मुखी विकास 6ठीं शती ई. से ग्यारहवीं शती ई. के बीच हुआ। इस काल में भामह (6ठवीं शती), दंडी (7वीं), वामन (8वीं), आनन्दवर्धन (10वीं) एवं क्षेमेंद्र (11वीं शती) जैसे मौलिक चिंतक उत्पन्न हुए, जिन्होंने साहित्य के नये–नये तत्त्वों का अन्वेषण करते हुए अनेक नवीन सिद्धान्तों की स्थापना की। इनमें अलंकार–सिद्धान्त, रीति–सिद्धान्त, ध्वनि–सिद्धान्त, वक्रोक्ति–सिद्धान्त और औचित्य–सिद्धान्त प्रमुख हैं। यद्यपि ये सिद्धान्त पर्याप्त मौलिक हैं किन्तु इनमें से अधिकांश का प्रेरणा–स्रोत आचार्य भरतमुनि का नाट्य शास्त्र ही है। इन पाँचों सिद्धान्तों में क्रमशः पाँच पक्षों पर बल दिया गया है। अलंकार में काव्य शैली की बाहय साज–सज्जा पर, रीति में काव्य के स्वाभाविक गुणों जैसे– शुद्धता, संक्षिप्तता, स्पष्टता, नाद–सौन्दर्य आदि पर, ध्वनि में उसके अर्थ की व्यंग्यात्मकता पर, वक्रोक्ति में अर्थ की लाक्षणिकता पर और औचित्य में विषय और शैली के पारस्परिक संतुलन पर सर्वाधिक बल दिया गया है। इस दृष्टि से प्रथम चार सिद्धान्तों को रूपवादी (Formalist) तथा अंतिम को वस्तुवादी कहा जा सकता है।

ग्यारहवीं शती से सत्रहवीं शती के काल में आचार्य मम्मठ (11वीं–12वीं,), रूय्यक (12वीं शती), हेमचंद्र (12वीं शती), रामचन्द्र गुणचंद्र (12वीं शती), जयदेव (13वीं शती), विश्वनाथ (13वीं–14वीं शती), भानुदत्त (13वीं–14वीं शती) और आचार्य जगन्नाथ (17वीं शतीं) आदि आचार्य हुए, जिन्होंने किसी नये सिद्धान्त की स्थापना न करके पूर्व प्रचलित सिद्धान्तों में किंचित् संशोधन एवं समन्वय प्रस्तुत किया। 17वीं से 19वीं शती के काल में संस्कृत का स्थान आधुनिक भारतीय भाषाओं ने ले लिया था। भारतीय साहित्य–शास्त्र अनेक प्रादेशिक भाषाओं में विभक्त हो गया। इस युग में केशवदास, चिंतामणि, कुलपति, सोमनाथ, भिखारीदास आदि आचार्य हुए, जिन्होंने पद्यबद्ध रीतिग्रंथ लिखे। इनमें कविरूप ही प्रधान हैं आचार्यत्व या शास्त्रीय विवेचन का प्रयत्न बहुत सफल नहीं रहा। इस निष्कर्ष की पुष्टि डॉ. सत्यदेव चौधरी के शब्दों में इस प्रकार है। 'चिंतामणि आदि आचार्यों ने भारतीय काव्य–शास्त्र के विकास में कोई योग्य योगदान नहीं दिया– यह स्पष्ट है। हिन्दी के वर्तमान काव्य–शास्त्रीय सिद्धान्तों के निर्माण में भी इनका योगदान नहीं है– यह भी स्पष्ट है।'[18]

19वीं शती के अन्तिम चरण से अब तक के काल को हिन्दी समीक्षा का काल कहा जाता है। सामान्यतया इसे तीन युगों में विभक्त किया जा सकता है–

1. भारतेन्दु–द्विवेदी युग (1875 ई. से 1925 ई. तक)

2. शुक्ल युग (1926 ई. से 1940 ई. तक)

3. शुक्लोत्तर युग (1941 ई. से अब तक)

इसमें से प्रथम युग में भरतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मिश्रबंधु, बाबू श्याम सुन्दर दास आदि विद्वान् आते हैं। इन लोगों ने अपने लेखों और पुस्तकों में साहित्य–सिद्धान्तों का विवेचन प्रस्तुत किया है। भरतेन्दु जी ने अपने 'नाटक' ग्रंथ में नया दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए प्राचीन सिद्धान्तों के नवीनीकरण या प्राचीन और नवीन के समन्वय पर बल दिया। इस युग के अन्य विद्वानों ने भी भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य–शास्त्र की सामग्री को हिन्दी गद्य में प्रस्तुत किया। शुक्ल युग में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने परम्परागत साहित्य–शास्त्र को नया रूप प्रदान किया। इन्होंने आधुनिक युग की परिवर्तित परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्राचीन सिद्धान्तों की निजी दृष्टि से व्याख्या की। विशेष रूप से रस–सिद्धान्त की। शुक्ल जी ने आनन्द और रस–सिद्धान्त को नीतिवादिता से समन्वित करते हुए रस की दो कोटियाँ निर्धारित की है। जहाँ हमारे काव्य का आश्रय से तादात्म्य हो जाता है, वहाँ उच्चकोटि की रस दशा प्राप्त होती है। अन्यथा नायक के दुष्चरित होने की स्थिति में मध्यम कोटि की रसानुभूति होती है। शुक्लोत्तर युगीन साहित्य–शास्त्रीय विद्वानों में डॉ. गुलाबराय, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। डॉ. गुलाबराय ने भारतीय एवं पाश्चात्य सिद्धान्तों को सरल एवं सुबोध शैली में प्रस्तुत करके परवर्ती अनुसंधानकत्ताओं का मार्ग प्रशस्त किया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मुख्य कार्य ऐतिहासिक एवं व्यावहारिक समीक्षा का

है। आचार्य वाजपेयी का भी मुख्य क्षेत्र व्यावहारिक समीक्षा का ही है। डॉ. नगेन्द्र का असली क्षेत्र साहित्य–शास्त्र है।

उपर्युक्त विद्वानों के अतिरिक्त हिन्दी समीक्षकों की एक लम्बी श्रृंखला आलोचना के क्षेत्र में गतिशील है। इनमें आचार्य बलदेव उपाध्याय, श्री राम दहिन मिश्र, डॉ. भगीरथ प्रसाद मिश्र, डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत, डॉ. राम लाल सिंह, डॉ. भोला शंकर व्यास, डॉ. आनन्द प्रकाश दीक्षित, श्री राममूर्ति त्रिपाठी, डॉ. सत्यदेव चौधरी आदि विद्वानों ने भी अपने ग्रंथों में भारतीय साहित्य–शास्त्र के विभिन्न पक्षों एवं सिद्धान्तों का विवेचन आधुनिक दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है।

आज हिन्दी–समीक्षा–चिंतन के केन्द्र में मानव है। इसी मानव–हित–साधन में मार्क्सवादी, प्रगतिवादी, समकालीन या फिर अन्य सभी श्रेणी के हिन्दी आलोचकों की आलोचना–यात्रा गतिशील है।

पाश्चात्य समीक्षा–सिद्धान्त के इतिहास को सामान्यतः तीन कालों में विभाजित किया जाता है–

1. प्रचीन काल (5वीं शती ईसा पूर्व से 4थी शती ई. तक)
2. मध्यकाल (5वीं शती ई. से 15वीं शती ई. तक)
3. आधुनिक काल (16वीं शती ई. से अब तक)

प्रथम विभाजित काल अर्थात् प्राचीन काल के विद्वानों में प्लेटो (427 ईसा पू. से 347 ईसा पूर्व तक), अरस्तू (384 ईसा पूर्व से 322 ईसा पूर्व तक), लोंजाइनस (पहली शती), होरेस, सिसरो, डिमैट्रियस आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। काव्य के सम्बन्ध में प्लेटो का विचार था कि वह (कला) मिथ्या संसार की मिथ्या अनुकृति है, अतः वह सत्य से दूर होता है। प्लेटो ने काव्य का विरोध करते हुए उसके सम्बन्ध में दो तथ्यों पर प्रकाश डाला– एक, काव्य प्रकृति की अनुकृति है। दूसरे, काव्य हमारी भावनाओं को उद्वेलित करता है।

प्लेटो के शिष्य अरस्तू ने उपर्युक्त दोनों तथ्यों को स्वीकार करते हुए भी काव्य को महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया। उन्होंने दो महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को जन्म दिया। पहला, 'अनुकरण सिद्धान्त' और दूसरा, 'विरेचन सिद्धान्त'। जहाँ प्लेटो ने अनुकृतिजन्य आनन्द को मिथ्या वस्तु पर आधारित घोषित किया था, वहाँ अरस्तू ने इसे ज्ञानार्जन आनन्द माना। उन्होंने प्रतिपादित किया–''जिन वस्तुओं के प्रत्यक्ष दर्शन में हमें क्लेश होता है, उन्हीं की यथावत् अनुकृति की भावना आह्लादकारी बन जाती है। जैसे किसी जघन्य पशु अथवा शव की रूप–आकृति का उदाहरण लिया जा सकता है। इसका कारण यह है कि ज्ञान के अर्जन से अत्यन्त प्रबल आनन्द प्राप्त होता है।''[19] प्लेटो के दूसरे आक्षेप का निराकरण करते हुए अरस्तू ने विरेचन सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने त्रासदी का विवेचन करते हुए लिखा–''त्रासदी किसी गम्भीर, स्वतः पूर्ण तथा निश्चित आयाम से युक्त कार्य की अनुकृति का नाम है... जिसमें करूणा तथा त्रास के उद्रेक द्वारा इन मनोविकारों का उचित विरेचन किया जाता है।''[20]

इस काल के तीसरे प्रमुख आचार्य लोंजाइनस (Longinus) थे, जिन्होंने अपने ग्रंथ 'On the sublime' में 'उदात्त तत्त्व' का विवेचन किया। उन्होंने उदात्त या औदात्य को ही काव्य का आत्म—तत्त्व के रूप में प्रतिष्ठित किया। आचार्य होरेस ने काव्य के विभिन्न तत्त्वों पर प्रकाश डालते हुए औचित्य पर विशेष बल दिया। आगे चलकर सिसरो, क्विण्टिलियन, डिमैट्रियस आदि आचार्यों ने शैली पक्ष पर बल देते हुए अलंकार एवं गुण—दोषों की विवेचना विस्तार से की है।

पश्चात्य साहित्य—समीक्षा का मध्यकाल बौद्धिक चिंतन की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं रहा। यहाँ तक कि इतिहासकार इसे 'अंधकार युग' की संज्ञा देते हैं। इस युग के साहित्य—चिंतकों में मुख्यतः इटैलियन साहित्यकार दांते का नाम उल्लेखनीय है। उन्होंने अपनी रचना 'डिवाइन कॉमेडी' में अन्योक्ति पद्धति की सम्यक् रूप से प्रतिष्ठा की। उन्होंने जन—भाषा का समर्थन किया तथा काव्य के विभिन्न पक्षों पर नये विचार प्रस्तुत किये।

पाश्चात्य काव्य—शास्त्र के क्षेत्र में आधुनिक युग का सूत्रपात करने का श्रेय सर फिलिप सिडनी (15वीं शती) को है। उन्होंने अपने निबंध 'The Defence of Poetic' के माध्यम से यह तर्क दिया कि कविता मनुष्य को सभ्य और सुसंस्कृत बनाती है, वह नैतिकता की शिक्षा प्रभावशाली ढंग से दे सकती है तथा एक आदर्श एवं श्रेष्ठ जगत् की कल्पना प्रस्तुत करती है। इस प्रकार सिडनी ने अपने लेख के द्वारा काव्य सम्बन्धी परम्परागत दृष्टिकोण को बदलने का स्तुत्य प्रयास किया। सत्रहवीं शती के आलोचकों में जॉन ड्रायडन महत्त्वपूर्ण हैं, जिन्होंने अपनी नयी मान्यताओं के द्वारा अनेक परम्परागत धारणाओं पर तीखा प्रहार किया। अठरहवीं शती के साहित्य—चिंतकों में पोप, जॉनसन, लेसिंग, शिलर और गेटे का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पोप ने परम्परागत तत्त्वों को अपनाते हुए भी नये दृष्टिकोण का परिचय दिया। उन्होंने कविता में स्वाभाविकता तथा भावनात्मकता को प्रमुखता दी।

डॉ. जानसन अपने युग के सबसे अधिक प्रभावशाली आलोचक माने जाते हैं। उनकी महत्त्वपूर्ण स्थापना यह है कि 'साहित्य में जब सामान्य मानव—स्वभाव का उद्घाटन होता है तो दर्शक या पाठक उसके साथ तादात्म्य का अनुभव करता है।'[21] साथ ही उन्होंने यह भी प्रतिपादित किया कि काव्य न केवल आनन्द प्रदान करता है, वह हमें शिक्षा भी देता है। लेसिंग, गेटे, शिलर आदि आलोचक मूलतः साहित्य—सर्जक थे। किन्तु, इन लोगों ने साहित्य की समस्याओं पर गौड़ रूप से विचार किया। लेसिंग ने कला की प्रेषणीयता पर, गेटे ने कला के विभिन्न रूप—भेदों और उसकी प्रवृत्तियों पर तथा शिलर ने सौन्दर्य सिद्धान्तों के आधार पर काव्य—कला की व्याख्या की। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन जर्मन साहित्यकारों ने साहित्य की व्यावहारिक समस्याओं को युगीन परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में रखकर विचार किया।

उन्नीसवीं शती में स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन का प्रवर्तन एवं विस्तार हुआ। जिसमें वर्डस्वर्थ, कॉलरिज, और शैली का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इन लोगों ने साहित्य के क्षेत्र में रूढ़िवादिता, शास्त्रवादिता, नियमबद्धता, विचारात्मकता और पूर्वाभ्यास की पद्धति का विरोध करते हुए

नवीनता, स्वच्छन्दता, वैयक्तिकता, भावात्मकता एवं सहजता की प्रतिष्ठा की। वर्डस्वर्थ ने लोकभाषा को ही काव्यभाषा के रूप में स्वीकार किए जाने पर बल दिया। उन्होंने कवि के लिए शिक्षा, नैतिकता एवं उपदेश देने के बंधन को अनुचित बताते हुए आनंद को ही काव्य का मूल लक्ष्य स्वीकार किया। कॉलरिज ने कल्पना सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की, जिससे प्रमाणित हो जाता है कि कल्पनाजन्य कृति होने के कारण काव्य को नूतन सृष्टि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। शैली ने भी वर्डस्वर्थ और कॉलरिज के सिद्धान्तों का समर्थन किया।

उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में कुछ ऐसे विचारकों का आविर्भाव हुआ जिन्होंने अतिस्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों को नियंत्रित करते हुए स्वच्छन्दता, वैयक्तिकता एवं आनन्दवादिता के स्थान पर पुनः मर्यादा, सामाजिकता एवं उपयोगिता को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया। इनमें मैथ्यू आर्नल्ड, रस्किन, तॉल्सतॉय आदि प्रमुख थे। आर्नल्ड ने साहित्य को जीवन की आलोचना के रूप में स्वीकार करते हुए नैतिक मूल्यों एवं मानव–हित को काव्य के लिए श्रेयस्कर सिद्ध किया। आर्नल्ड की ही भाँति रस्किन और तॉल्सतॉय ने भी कहा और साहित्य को जीवन के उच्चादर्शों से जोड़कर देखा।

बीसवीं शताब्दी का काव्य–शास्त्र विभिन्न वादों एवं बहुमुखी प्रवृत्तियों से ग्रसित रहा है। इसमें मुख्यतः कलावाद, अभिव्यंजनावाद, प्रतीकवाद, बिम्बवाद, मनोविश्लेषणात्मक विचारधारा, समाजवादी या प्रगतिवादी विचारधारा आदि उल्लेखनीय हैं। इन वादों एवं प्रवृत्तियों के उन्नायकों ने एकांगी दृष्टिकोण से साहित्य की विभिन्न व्याख्यायें प्रस्तुत की हैं, जो परस्पर–विरोधी हैं। ऐसी परिस्थिति में आई.ए.रिचर्ड्स, हरवर्ट रीड, एफ.एल.ल्युकस जैसे विद्वानों ने साहित्य–शास्त्र को विज्ञान एवं मनोविज्ञान के आधार पर व्यवस्थित रूप देने का प्रयास किया है,। किन्तु, इस क्षेत्र में अभी भी बहुत कार्य बाकी है। 'अतः आज काव्य–चिंतन के क्षेत्र में अराजकता की सी स्थिति चल रही है–हर आलोचक का काव्य के सम्बन्ध में अपना अलग सिद्धान्त है। अतः कह सकते हैं कि हर आलोचक की अलग–अलग ढ़पली और अलग–अलग राग है। यह स्थिति स्वयं स्वस्थ एवं संतुलित समीक्षा के लिए भी घातक है।'[22]

सारांश यह है कि मनुष्य अलग–अलग रूचि और मनोवृत्तियों का संवाहक है। प्रत्येक युग की जीवन–पद्धति एवं मूल्यगत आदर्श निरन्तर विकासमान प्रक्रिया से गुजरते हैं। अतः कोई सार्वकालिक समीक्षा–पद्धति निश्चित कर पाना दुष्कर कार्य है। इसीलिए सैद्धान्ति–समीक्षा के स्थान पर अब व्यावहारिक–समीक्षा की बात ज्यादा होने लगी है, क्योंकि यह पद्धति अनन्त सम्भावनाओं के द्वार खोलती है।

संदर्भ–

16. डॉ. रतन कुमार पाण्डेय : आलोचक और सिद्धान्त, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करणः 2008, पृ. 18

17. डॉ. रतन कुमार पाण्डेय : आलोचक और सिद्धान्त, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करणः 2008, पृ. 19
18. डॉ. सत्यदेव चौधरी : हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य, पृ. 750
19. गणपतिचंद्र गुप्त : पाश्चात्य एवं भारतीय काव्य सिद्धान्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संशोधित संस्करणः 2009, भूमिका, पृ. 15
20. डॉ. नगेन्द्र : अरस्तू का काव्यशास्त्र, भारती भण्डार लीडर प्रेस, इलाहाबार, चतुर्थ संस्करणः 1981, पृ. 86
21. शिवदान सिंह चौहान : आलोचना के सिद्धान्त, स्वराज प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करणः 1960, पृ. 100
22. गणपतिचंद्र गुप्त : पाश्चात्य एवं भारतीय काव्य सिद्धान्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संशोधित संस्करणः 2009, भूमिका, पृ. 22

———————————————————————————————

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका
युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649
खंड 08 अंक 33 वर्ष सितम्बर 2017 आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

संस्कृत शिक्षा अथवा संस्कृत भाषा के उत्थान हेतु संस्कृत पत्रकारिता एवं वर्तमान चुनौतियाँ

डॉ.धीरज प्रकाश जोशी
सहायक–आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग
सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी संकाय
जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ (मान्य विश्वविद्यालय) उदयपुर (राज.)

पत्रकारिता लोकतन्त्र का चतुर्थ स्तम्भ माना जाता है। पत्रकार समसामयिक विषयों पर अपनी बेवाक राय रखते है। पत्रकारिता द्वारा जनता की समस्या और जनता की सोच को जनता के समक्ष रखकर, उन्हें जागरूक किया जाता है। आज की पत्रकारिता में राजनीति, खेल–कूद, प्राकृतिक आपदा, सामाजिक तथा राजनैतिक समस्याएँ, आध्यात्म, ज्योतिष, मनोरंजन, खान–पान, शिक्षा, स्वास्थ आदि से जुडे मुद्दें समाहित रहते है।

यदि संस्कृत पत्रकारिता की बात करे तो सर्वप्रथम संस्कृत पत्रकारिता के विषय में कुछ कहने से पहले मैं पाठकों को यह बताना चाहुँगा कि भले ही सामान्य रूप से हिन्दी, अंग्रेजी या अन्य प्रचलित भाषाओं की पत्रकारिता के समान संस्कृत पत्रकारिता की चर्चा नही होती हो, लेकिन आपको यह जानकर अत्यन्त हर्ष होगा कि इस समय भारत के प्रायः सभी राज्यों और कुछ विदेशों में भी संस्कृत पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही है।

पत्रकारिता के विषय में जब भी हिन्दी पत्रकारिता की बात होती है तो हिन्दी के प्रथम पत्र 'उदन्त–मार्तण्ड'[i] जो कि 30 मई 1826 को कलकत्ता से पं. जुगलकिशोर शुक्ल द्वारा प्रकाशित पत्रिका का सन्दर्भ अवश्य दिया जाता है। ठिक उसी तरह से संस्कृत पत्रकारिता के इतिहास में ईस्वी सन् 1866 में पहली जून को काशी से प्रकाशित 'काशीविद्यासुधानिधिः' संस्कृत पत्रिका का उल्लेख अवश्य होता है। संस्कृत पत्रकारिता की इस प्रथम पत्रिका का दुसरा नाम 'पण्डित पत्रिका' भी था।[ii] यदि इस पत्रिका के विकास की बात करे तो इस संस्कृत–पत्रिका की यात्रा में अनेक छोटे–बडें पडाव आये। मुद्रण के लिए पूँजी की समस्या थी। उस दौर में भाषाई पत्रकारिता के लेखक, सम्पादक बहुतायत संख्या में या तो संस्कृत के जानकार या विशेषज्ञ थे, या संस्कृत के प्रति निष्ठावान् थे और पत्रकारिता के समर्पित कार्य के लिए संस्कृत के समृद्ध साहित्य का आश्रय लेते थे। भारत में एक हजार से भी अधिक साल तक संस्कृत बौद्धिक जगत की भाषा रही है। लगभग 2700 साल पहले पाणिनी ने इस भाषा के व्याकरण को सुव्यवस्थित किया था तथा आज भी उसी व्याकरण के अनुरूप चल रही है।

संस्कृत की विकास यात्रा में संस्कृत से अनेक भाषाओं का उद्‌भव हुआ एवं इन भाषाओं ने व्याकरण से लेकर शब्द–भण्डार तक, बहुत कुछ संस्कृत से ग्रहण किया। समय बीतने के साथ संस्कृत कमजोर हुई और इससे निकली अन्य भाषाओं का विस्तार होता गया। पिछली कुछ शताब्दियों में यह मान लिया गया कि संस्कृत अब मृत भाषा है। लेकिन संस्कृत तो अन्य सभी भाषाओं की जननी है अतः संस्कृत को मृत भाषा कहना यहाँ उचित नही होगा, हाँ यह कह सकते है कि स्वाधीनता प्राप्ति के लिए जन–सामान्य की भाषा में संचार और संवाद करना

जरूरी था, इसलिए विभिन्न भारतीय भाषाओं में तुलनात्त्मक रूप से अधिक एवं संस्कृत में कम पत्र–पत्रिकाएॅ छपती रही, जिसके कारण संस्कृत भाषा का उपयोग कम होने लगा था।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद संस्कृत के अकादमिक अध्ययन–अध्यापन एवं सभी राज्यों से प्रकाशित होने वाली संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं तथा देश के राज्यों में संस्कृत विश्वविद्यालयों की स्थापना ने जोर पकडा और वर्तमान में यह परिणाम सामने आया कि आज देश के लगभग सभी राज्यों में संस्कृत पत्र–पत्रिकाएॅ प्रकाशित एवं विश्वविद्यालय[iii] संचालित किये जा रहे है।

मुख्यतः संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं का अध्ययन करे तो दो प्रकार की संस्कृत पत्रिकाएॅ बहुतायत से मिलती है जिनमें मुख्यरूप से शोध–पत्रिका के रूप में प्रकाशित होती रही है और शोध–लेखों, प्राचीन–ग्रन्थों एवं पाण्डु–लिपियों का ही प्रकाशित करती रहीं। दूसरी वें, जो एक सामान्य साप्ताहिक, पाक्षिक या मासिक, द्विमासिक, षण्मासिक या वार्षिक पत्रिका के रूप में प्रकाशित की जाती थी। आज स्थिति में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है, ऐसा लग रहा है कि संस्कृत भाषा एवं संस्कृत पत्रकारिता का भविष्य उज्जवल है। अतः यह कहा जा सकता है कि वह दिन दूर नहीं जब युवा पीढ़ी के अधिकाधिक युवक–युवतियॉ संस्कृत पढना–लिखना और बोलना पसन्द करेगें और सामाजिक संचार माध्यमों में सभी भाषाओं की अपेक्षा संस्कृत विद्या का अधिक प्रयोग होगा।

विगत एक दशक में एक बडा बदलाव यह आया है कि 2001 के मुकाबले 2011 की जनगणना में संस्कृत बोलने वालों की संख्या में वृद्धि हुई है।[iv] इसमें सन्देह नही कि संस्कृत का प्रयोग करने वालों की संख्या बढ़ रही है और संस्कृत साहित्य लेखन का दौर नये सिरे से आरम्भ हो गया है। इसके साथ ही विभिन्न स्तरों पर संस्कृत को सामान्य व्यवहार की भाषा बनाने हेतु प्रयास किये जा रहे है।[v] इन प्रयासों का परिणाम संस्कृत पत्रकारिता के रूप में भी सामने आया है। यू तो संस्कृत पत्रकारिता का इतिहास 150 वर्षों[vi] से भी पूराना है, लेकिन अपने प्रारम्भिक वर्षों में उसकी उपस्थिति सांकेतिक ही रही है।

यदि हमारे मेवाड़ (उदयपुर) की बात की जाये तो बिहार का पहला संस्कृत पत्र 1878 ई. में 'विद्यार्थी' के नाम से पटना से निकला था। यह मासिक पत्र 1880 ई. तक पटना से नियमित निकलता रहा और बाद में मेवाड़ (उदयपुर) आ गया, यहॉ से पाक्षिक रूप में प्रकाशित होने लगा एवं कुछ समय बाद यह पत्रिका श्रीनाथद्वारा से प्रकाशित होने लगा। आगे चलकर यह हिन्दी की 'हरिश्चन्द्र–चन्द्रिका' और ''मोहन चन्द्रिका'' पत्रिकाओं में मिलकर प्रकाशित होने लगा। यह संस्कृत भाषा का पहला पाक्षिक पत्र था, जिसके सम्पादक पं॰ दामोदर शास्त्री थे। इस पत्रिका में प्रायः विद्यार्थियों की आवश्यकता और हित को ध्यान में रखते हुये सामग्री प्रकाशित की जाती थी।[vii]

इसी क्रम में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद कुछ अकादमिक संस्थानों द्वारा संस्कृत में शोध पत्रिकाओं का भी प्रकाशन किया जाता रहा। अकादमिक लेखन के साथ ही संस्कृत अब पत्रकारिता की भाषा के रूप में भी विकसित हो रही है। विगत 60 वर्षों में संस्कृत में प्रकाशित होने वाले पत्र–पत्रिकाओं की संख्या बढ़ रही है।[viii] 15 जुलाई 1970 संस्कृत पत्रकारिता के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक घटना हुई, जिसके महानायक मैसुर, कर्नाटक के सुप्रसिद्ध संस्कृत विद्वान पं॰ कलाले नांदुर वरदराज आयंगर महोदय, जिन्होंने मैसुर से 'सुधर्मा' नामक संस्कृत का एकमात्र दैनिक समाचार[ix] पत्र प्रकाशित करके विश्व पत्रकारिता के मंच पर संस्कृत पत्रकारिता का ध्वज फहरा दिया।

संस्कृत पत्रकारिता के विकास और विस्तार का अनुमान हम इस भाषा में प्रकाशित समाचार पत्रों से लगा सकते है। संस्कृत पत्रकारिता के विस्तार के साथ ही व्यवस्थित रूप में एवं इसकी चुनौतियों को समझने की जरूरत भी पैदा हुई है। बड़ा प्रश्न यह है कि वर्तमान में संस्कृत पत्रकारिता का स्वरूप चुनौतियॉ एवं भविष्य की सम्भावनाएँ क्या है? क्या संस्कृत पत्रकारिता की चुनौतियॉ भाषायी पत्रकारिता जैसी ही है या इससे भिन्न, यह प्रश्न एक शोधविषयक है।

संस्कृत पत्रकारिता का अधुनातन स्वरूप

भारत के समाचार–पत्रों के पंजीयक कार्यालय (RNI) के अनुसार[x] सम्पूर्ण राष्ट्र में इस समय संस्कृत में 149 पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही है। इनमें यदि हमारे राजस्थान की बात करें तो 06 संस्कृत पत्र–पत्रिकाएँ, जिनमें 'भारती' (जयपुर), 'धरोमति' पाक्षिक पत्रिका (जयपुर), 'कल्याणी' (जयपुर), 'शास्त्रसुधानिधिः' (जोधपुर), 'स्वाध्याय शिक्षा' (जोधपुर) 'स्वर मंगला' (जयपुर), पत्र–पत्रिकाएँ प्रकाशित की जा रही है। साथ ही उत्तर प्रदेश से 32, गुजरात से 10, बिहार से 06, दिल्ली से 17, हरियाणा से 02, कर्नाटक से 05, मध्य प्रदेश से 22, महाराष्ट्र से 11 तथा अन्य राज्यों से भी संस्कृत पत्रिकाओं का प्रकाशन हो रहा है, जिनमें मुख्य रूप से सुधर्मा (दैनिक) मैसुर, विश्वस्य वृत्तानम् (दैनिक) सुरत–गुजरात, प्रभातम् (दैनिक) लखनऊ, सृजनवाणी (दैनिक) दिल्ली, गाण्डीवम् (दैनिक) वाराणसी, संस्कृत भवितव्यम् (साप्ताहिक) नागपुर, प्रयागम् (साप्ताहिक) इलाहाबाद, श्री भट्टसत्ता (साप्ताहिक) इलाहाबाद, वाक् (पाक्षिक) देहरादून, संस्कृतवाणी (पाक्षिक) दिल्ली, संस्कृतवर्तमानपत्रम् (पाक्षिक) प्रतापगंज–वडोदरा, संस्कृतसंवाद (पाक्षिक) दिल्ली, ऋतम् (मासिक) मध्य प्रदेश, भारतोदय (मासिक) उत्तराखण्ड, संस्कृतचन्द्रिका (मासिक) नई दिल्ली, सम्भाषण संदेशः (मासिक) बेंगलूरू, संस्कृतरत्नाकरः (मासिक) नई दिल्ली, लोकभाषा सुश्रीः (मासिक) ओडिशा, गीर्वाणसुधाः (मासिक) गिरगॉव–मुम्बई, अतुल्य भारतम् (मासिक) भोपाल, काव्यामृतवर्षिणी (षाण्मासिक) वागपत, कथासरित् (षाण्मासिक) इलाहाबाद, सुसंस्कृतम्–वाराणसी तथा 'वीथिका' नामक वार्षिक पत्रिका आदि संस्कृत पत्रिकाएँ प्रचलित है।

मैसुर से प्रकाशित होने वाला 'सुधर्मा' 47 वर्षों से संस्कृत पत्रकारिता की अलख जगा रहा है। 'सुधर्मा' संस्कृत विद्यापीठ और कई शिक्षण संस्थानों, केन्द्रिय विद्यालयों और कर्नाटक, जम्मू कश्मीर, उड़िसा, तमिलनाडु, केरल, असम और राजस्थान के पुस्तकालयों में पढ़ा जाता है। दुनिया की प्राचीनतम भाषा संस्कृत आज भारत में ही अपना अस्तित्व बचाने के लिए जुझ रही है, जिसका एक उदाहरण 47 वर्षों से संस्कृत भाषा में प्रकाशित होने वाला 'सुधर्मा' समाचार पत्र खराब आर्थिक हालातों के चलते बंद होने के कगार पर आ गया। लेकिन दुसरी ओर 09 अगस्त 2017 को राजस्थान से 'शास्त्रसुधानिधिः'[xi] नामक पत्रिका का आरम्भ हुआ है।

इसी क्रम में राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान और श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ़ जैसे संस्थानों और विश्वविद्यालयों ने संस्कृत पत्रकारिता के पाठ्यक्रमों का संचालन आरम्भ कर दिया है। आशा की जा सकती है कि कुछ ही समय में संस्कृत पत्रकारिता के क्षेत्र में ओर अधिक प्रगति हो, जिससे संस्कृत की विकास यात्रा ओर अधिक मजबुत एवं प्रगतिशील हो सकें।

न्यू मीडिया (ब्लागिंग, सोशल साइट्स, माइक्रोब्लागिंग) एवं संस्कृत –

बीसवीं सदी में कम्प्युटर के विकास के साथ–साथ एक नये माध्यम ने जन्म लिया, जो न्यू मीड़िया है। और इसी न्यू मीड़िया में संस्कृत प्रभावपूर्ण ढ़ंग से मौजूद है। यह बात आश्चर्यजनक है कि संस्कृत ब्लॉग को किसी भी सर्च इंजन में टाइप करने पर 3 करोड़ से अधिक रिजल्ट[xii] सामने आते है। ट्विटर आदि माइक्रोब्लागिंग की दूनिया में भी संस्कृत की मौजूदगी तलाशने पर दस हजार से अधिक परिणाम प्रकट[xiii] होते है। दुरवाणीयन्त्र (मोबाइल) एप्लीकेशन की दूनिया में संस्कृत अनुप्रयोगों को खोजा जाए तो लगभग दस हजार परिणाम देखने को मिलते है। संस्कृत ब्लॉगों में संस्कृत स्टडीज, संस्कृत बुक्स, प्रैक्टिकल संस्कृत, संस्कृत ब्लॉग–विकिपीडियॉ, संस्कृत सेट्रल ब्लाग, जयतु जयतु संस्कृतम्, संस्कृतजगत, वदतुसंस्कृतम्, संस्कृतमुक्तकानि, संस्कृतजालिकानाम् आदि ब्लॉग उल्लेखनीय है। संस्कृत ऑनलाइन दूनिया में वेद, उपनिषद्, विभिन्न भाष्य, पुराण तथा अन्य प्राच्य ग्रन्थ एवं संस्कृत पुस्तकें उपलब्ध है। उपरोक्त वर्णित संस्कृत से सम्बन्धित सामग्री के प्रसार के लिए भी अनेकों मुहिम चलाई जा रही है। यू ट्यूब की दूनिया में संस्कृत से सम्बन्धित अनेक विडियों प्राप्त किये जा सकते है, जिनमें हिन्दी गीतों का संस्कृत में रूपान्तरण तथा संस्कृत ज्ञान वर्धन हेतु बनाये गये अनेक विडियों सम्मिलित है, जो प्रत्येक व्यक्ति में संस्कृत ज्ञान को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित करते है। इसके साथ ही फेसबुक आदि सोशल साइट्स पर संस्कृत पर सैकडों पेज मौजूद है। वस्तुतः न्यू मीडिया संस्कृत प्रिंट मीडिया, रेडियों–टीवी की तुलना में कहीं अधिक प्रभावशाली रूप से मौजूद है।

इलैक्ट्रानिक मीडिया एवं संस्कृत –

इन्टरनेट के आ जाने से संस्कृत के अनेक रेडियों चैनल बेवसाइट्स पर संस्कृत वार्ता दृश्य–श्रव्य माध्यम से प्रसारित होने लगे है। संस्कृत की या तो आम लोगों को जानकारी नहीं होती या जानकारी होने पर भी अपेक्षित रूचि का अभाव होता है। इसी क्रम में संस्कृत में दृश्य–श्रव्य वार्ता पर दृष्टिकोण डाला जाये तो हमने देखा है कि संस्कृत पत्रकारिता लगभग 150 वर्षो से गतिमान है और इसी शृंखला में एक और ऐतिहासिक घटना तब हुई जब भारत सरकार के सूचना प्रसारण मन्त्रालय ने आरम्भ में प्रयोगात्मक रूप से 30 जून 1974 को प्रातः 09 बजे आकाशवाणी के दिल्ली केन्द्र से संस्कृत समाचारों का प्रसारण करके उन तमाम भ्रान्तियों को ध्वस्त कर दिया गया, जो कहते थे कि संस्कृत आम बोलचाल की भाषा नहीं हो सकती है। इस राष्ट्रीय समाचार प्रसारण की लोकप्रियता के कारण कुछ महिनों उपरान्त पॉच मिनिट का एक अन्य बुलेटिन शाम 6:10 बजे प्रसारित किया जाने लगा। इतना ही नहीं 1994 में 21 अगस्त, रविवार को दुरदर्शन ने साप्ताहिक संस्कृत समाचार प्रसारण आरम्भ करके एक नवीन कीर्तिमान स्थापित किया एवं कुछ वर्षो बाद यह प्रसारण प्रतिदिन पॉच मिनिट के लिए प्रसारित किये जाने लगा।[xiv] संस्कृत की लोकप्रियता निरन्तर बढ़ती रहीं, जिसके फलस्वरूप एक नवीन क्रान्ति '16वें विश्व संस्कृत सम्मेलन' 28 जून के दिन घटित हुई। इस दिन संस्कृत दर्शकों की मॉग पर डी डी न्यूज ने रविवार दोपहर बारह बजे से संस्कृत में आधे घण्टे का सप्ताहांत कार्यक्रम पेश किया,[xv] जिसमें समाचार, रिपोर्ट, परिचर्चा आदि शामिल किये गये। देश–विदेश की घटनाओं की वार्ता हेतु 10 फरवरी 2011 से संस्कृत भाषा में 'संस्कृतवार्ताः' नामक कार्यक्रम डी डी नेशनल चैनल द्वारा प्रातः 06:55 बजे प्रतिदिन प्रसारित किया जाता है। संस्कृत श्रव्य वार्ता प्रसारण को बढ़ावा दिलाने की दिशा में संस्कृत विश्वविद्यालय एवं राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान

पहल कर रहे है। वो दिन दूर नहीं जब पूर्णतः संस्कृत पर केन्द्रित कम्युनिटी रेडियों एवं समाचार प्रसारण सिर्फ संस्कृत का ही होगा।

संस्कृत पत्रकारिता की चुनौतियॉ

वित्तीय चुनौतियॉ एवं तकनीकि चुनौतियॉ

समय के साथ पत्रकारिता का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। आज डिजीटल का दौर है, हमने ई–समाचार पत्रों का प्रयोग करना भी आरम्भ कर दिया है। संस्कृत ई–पत्रिकाओं में 'संस्कृतसर्जना' (त्रैमासिक) लखनऊ से, 'सम्प्रति वार्ताः' (दैनिक) केरला से, 'सुधर्मा' (दैनिक) मैसुर से, 'जाह्नवी' प्रयाग से, 'पत्रकीर्ति' वाराणसी से, 'प्राचीप्रज्ञा' हिमाचल प्रदेश से तथा 'सृजन वाणी' दिल्ली से प्रकाशित होने वाली ई–पत्रिकाओं का उपयोग भी हमारे लिए अतुलनीय है। भारत में पत्रकारिता का महत्त्व दिनों–दिन बढ़ रहा है और संस्कृत पत्रकारिता को बढ़ावा दिलाने हेतू आर्थिक पहलू बडी चुनौति के रूप में मौजूद है। कुछ ही असंगठित लोग उत्साह में आकर एक पत्रिका निकालना आरम्भ करते है। परन्तु निश्चित धनागम के अभाव से कुछ दिनों बाद पत्रिका बंद हो जाती है। बड़े स्तर पर अखबारों और पत्रिकाओं के प्रकाशन हेतु बड़े सेटअप की आवश्यकता होती है। चूॅकि प्रिंट मीडिया मे दो तिहाई से अधिक धन विज्ञापनों से प्राप्त होता है और संस्कृत अखबारों–पत्रिकाओं के पास कुछ ही या न के बराबर विज्ञापन होते है। आय में दुसरी हिस्सेदारी प्रसार या बिक्री से मिलती है। इस मामले में भी संस्कृत का आधार सुदृढ़ नही है, क्योंकि संस्कृत के दैनिक पत्र जब तक एक स्थान से प्रकाशित होकर पाठक के समक्ष पहॅुचता है, तब तक समाचार पुराना हो जाता है। इसका कारण यह है कि संस्कृत के पत्र–पत्रिकाओं के पाठक कम मात्रा में किसी दुर स्थित प्रान्त या देश के विविध भू–भाग मे फैले हुए है।

अनुदान और बाह्य सहायता आदि के आधार पर संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं का खुले बाजार में प्रतिस्पर्धा बनाये रखना आसान नहीं है। प्रकाशन के लिहाज से देखे तो एक छोटे सेटअप के लिए बड़ी राशि का होना आवश्यक है तभी संस्कृत पत्रकारिता में स्थायित्व लाया जा सकता है। धनाभाव के कारण हमारे समक्ष एक उदाहरण 'सुधर्मा' जैसा 45 वर्षों से संस्कृत को बढ़ावा दिलाने वाला अखबार भी मंहगी मशीनरी के कारण ही बन्द होने के कगार[xvi] पर आ गया था।

भाषिक या माध्यम की चुनौतियॉ

भाषिक चुनौति में एक चुनौति यह भी है कि ज्यादातर घरों में एक ही व्यक्ति संस्कृत को जानता समझता है। दूरगामी क्षेत्रों में तो यह समस्या और भी अधिक हो जाती है। ऐसे में यदि संस्कृत की कोई पत्र–पत्रिका खरीदी जाती है तो वह सम्बन्धित व्यक्ति के उपयोग तक ही सीमित हो जाती है। जबकि हिन्दी या अन्य भाषाओं के मामले मे ऐसा नही है, क्योंकि घर में प्रायः सभी लोग उस भाषा को पढ़ने–समझने में सक्षम होते है।

एक भाषा के रूप में संस्कृत बोलने–समझने वालों की संख्या कम मात्रा में है। क्षेत्रीय भाषाओं या बोलियों की तरह संस्कृत बोलने–समझने वाले लोग किसी खास क्षेत्र में नही रहते। वें भारत या यू कहें कि राजस्थान से पूर्वी क्षेत्रों, उत्तरी क्षेत्रों तथा दक्षिणी क्षेत्रों में अर्थात् जम्मू–कश्मीर से लेकर केरल तक सम्पूर्ण भारत में फैले हुए है। यह फैलाव संस्कृत पत्रकारिता की दृष्टि से चुनौति पैदा करता है। उदाहरण के लिए 'सम्प्रति वार्ताः' दैनिक समाचार पत्र जो एर्णाकुलम् (केरल) से प्रकाशित होता है, यदि उसी दिन या अगले दिन राजस्थान या श्रीनगर

भेजना हो या कोई पाठक अरूणाचल प्रदेश में इस पत्रिका की प्रतिक्षा करता है तो यह असम्भव है कि सम्बन्धित अखबार पाठक को उसी दिन मिल जाये। जबकि अंग्रेजी के 'टाइम्स ऑफ इंडिया' या 'द हिन्दु' अखबार के लिए यह कठिन नही है, क्योंकि उनका आर्थिक तन्त्र इतना मजबुत है कि वें उस क्षेत्र में भी आसानी से अखबार पहुॅचा सकते है जहॉ इनके पाठकों की संख्या 10 से 15 ही क्यों न हो।

संस्कृत पत्रकारिता में प्रशिक्षण एवं प्रौद्योगिकी सम्बन्धी चुनौतियॉ

संस्कृत पत्रकारिता के संदर्भ में भारतीय जन संचार संस्थान, नई दिल्ली के द्वारा एक सराहनीय कार्य यह किया गया कि संस्कृत माध्यम से पत्रकारिता की पढाई करने की इच्छा रखने वाले विद्यार्थियों के लिए तीन महिनें का प्रमाण पत्र कार्यक्रम संचालित किया गया है तथा प्रवेश के लिए श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ के साथ अनुबन्ध[xvii] किया है। जबकि विगत दो दशक में ऐसा पाठ्यक्रम उपलब्ध नही था जिससे संस्कृत पत्रकारिता को बढावा मिले।

संस्कृत पत्रकारिता में इस समय ऐसे लोगों की आवश्यकता है जो आम लोगों की समझ में आने लायक संस्कृत का प्रयोग करते हुये समाचार प्रस्तुत कर सकें, लेख लिख सकें और रोचक जानकारियॉ उपलब्ध करा सकें। एक बडी चुनौति यह भी है कि अभी कुछ ही लोग है जो संस्कृत माध्यम में कम्प्यूटर व अन्य गैजेट्स के साथ काम करते है। ऐसी स्थिति में कुछ ऐसे भी है जिन्हें संस्कृत माध्यम में तकनीकी ज्ञान पूरा नही है जिसके चलते एक व्यक्ति लेखन का कार्य संम्भालता है तो दूसरा तकनीकी पहलू को। अर्थात् इस प्रक्रिया से लागत दोगुनी हो जाती है, जिसका सीधा प्रभाव संस्कृत पत्रकारिता पर पडता है। अतः आवश्यकता उन लोगों की है, जो संस्कृत पत्रकारिता पर उसी महारत के साथ काम कर सकें, जैसे कि दुसरी भाषा की पत्रकारिता पर लोग करते है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संस्कृत पत्रकारिता एवं भविष्य

किसी भी विद्या की भविष्य की सम्भावनाऍ उसकी उपयोगिता और महत्ता के साथ भी जुडी है। केवल मिशन या सेवा के लक्ष्य को सामने रखकर संस्कृत पत्रकारिता का भविष्य सुरक्षित नही हो सकता है। यह उसी स्थिति में संभव है जब संस्कृत में व्यावसायिक पत्रकारिता की स्थिति मजबूत हो। जब संस्कृत पत्रकारिता की बात हो तो संचार व्यवस्था और संचार की चर्चा भी स्वाभाविक है। आज माना जाता है कि जनसंचार की अवधारणा पश्चिम से आयी है। देश में संस्कृत साहित्य में उपलब्ध जनसंचार के अनेक उदाहरण है जिन पर शोध अपेक्षाकृत कम हुए है। माखनलाल पत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय में संस्कृत साहित्य में जनसंचार की अवधारणा का विषय भी शामिल है। और पूर्व में वर्णित श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ (मानित वि. वि.) के द्वारा सितम्बर 2017 से संस्कृत पत्रकारिता में त्रैमासिक पाठ्यक्रम का संचालन किया जा चुका है। यह सभी कार्य भविष्य की संस्कृत पत्रकारिता में महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगें, जिससे संस्कृत भाषा व संस्कृत पत्रकारिता को मजबुती प्रदान होगी।

संस्कृत एकमात्र भाषा है जिसमें शब्द बनाने की अनन्त संभावनाऍ है साथ ही कम्प्यूटर में भी संस्कृत भाषा की अनन्त संभावनाऍ है। अभी चौथी और पॉचवी पीढी के कम्प्यूटर चल रहे है और नासा वैज्ञानिकों के लम्बे समय तक के अनुसंधान से यह सिद्ध हुआ है कि छटी और सातवीं पीढी के कम्प्यूटरों की भाषा संस्कृत होगी,

क्योंकि उनकी प्रोगामिंग केवल संस्कृत में ही संभव हो पायेंगी, दुसरी भाषा इतनी वैज्ञानिक नही है जितनी की संस्कृत भाषा है।

अतः संस्कृत भाषा व पत्रकारिता में आने वाले समय में अपार संभावनाएँ है, केवल आवश्यकता यह है कि हमस भी संस्कृत भाषा एवं संस्कृत पत्रकारिता के प्रति सजग रहें। संस्कृत पत्रकारिता की स्थिति मजबूत करने हेतू बडे ट्रस्ट और मठ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है, उनके पास पूंजी की कमी नही है। इस पूंजी का उपयोग तकनीकी उपकरणों के लिए किया जा सकता है तथा साथ ही देशभर में फैले संस्कृत भाषी लोगों को भी इसके लिए आगे आना होगा, ताकि वें प्रोत्साहन की दृष्टि से ही सही, कुछ समय के लिए नियमित तौर पर संस्कृत पत्रिकाओं को खरीदें, जिससे संस्कृत पत्रकारिता की आर्थिक स्थिति सुदृढ हो सकें।

अंत में यह उम्मीद है कि भारत व राज्य सरकार संस्कृत को संरक्षण एवं संस्कृत पत्रकारिता के प्रति सजग होकर पुनः भारत को विश्वगुरू बनाने में संस्कृतानुरागियों का सहयोग करें तथा आगामी जनगणना के आकडों में संस्कृत बोलने, पढने और समझने वालों की संख्या में पिछली जनगणना के मुकाबले वृद्धि पायी जाये।

---

[i] **उदन्त–मार्तण्ड (समाचार–पत्र) : गूगल सर्च इंजन (विकिपीडिया) 25 दिसम्बर, 2017**

[ii] **पं॰ बलदेव उपाध्याय : काशी की पाण्डित्य परम्परा, पृ॰ 94–96**

[iii] **ऑल इंडिया सर्वे ऑन हायर एज्युकेशन** (MHRD), **2015–16**

[iv] **भारत की जनगणना, 2011 के प्रांरम्भिक आकड़े**

[v] **डभ्त्क की वेबसाइट्स पर भाषा संबंधी लिंक पर उपलब्ध विवरण**

[vi] **डॉ॰ हीरालाल शुक्ल : ए सेंचुरी ऑफ संस्कृत जर्नलिज्म (आलोक प्रकाशन, रायपुर)**

[vii] **डॉ॰ बलदेव सागर : संस्कृत पत्रकारिता का इतिहास व स्वरूप**

[viii] **डॉ॰ रामगोपाल मिश्र : संस्कृत पत्रकारिता का इतिहास (विवेक प्रकाशन, दिल्ली)**

[ix] **http://sudharmasanskritdaily.in/**

[x] **भारत के समाचार पत्र महापंजीयक की रिपोर्ट, 2017**

[xi] **भारत के समाचार पत्र महापंजीयक की रिपोर्ट, 2017**
http://www.rni.nic.in/main50.asp

[xii] **संस्कृत ब्लॉग रिजल्ट : गूगल संर्च इंजन, 25 दिसम्बर, 2017**

[xiii] **गूगल संर्च इंजन, 25 दिसम्बर, 2017**

[xiv] **डॉ॰ बलदेव सागर : संस्कृत पत्रकारिता का इतिहास व स्वरूप**

[xv] NDTV News, 28 twu, 2015 (10:15 – 10:28 AM)

[xvi] **'सुधर्मा' समाचार पत्र द्वारा जारी** APPEAL, **11 जनवरी, 2016**
sudharma.epapertoday.com/files/2015/06/Sudharma-19b-May-15.pdf
sudharma.epapertoday.com/files/2016/06/Sudharma-03b-June-2016.pdf

[xvii] **सहमतिज्ञापनपत्रम् : विद्यापीठवार्ता (slbsrsv) अंक–04, पृ॰ 10, दिनांक 22/09/2017**
http://www.slbsrsv.ac.in/documents/VidyapeethVartaJuly-Sept2017.pdf

---

डूंगरपुर जिले की जनसंख्या घनत्व प्रतिरूप का सामाजिक–आर्थिक विकास पर प्रभाव

डॉ. पंकज रावल

सहायक प्राध्यापक (भुगोल)

JRN, R.V. UDAIPUR

डूंगरपुर जिले की जनसंख्या का यहाँ के क्षेत्रफल से पारस्परिक अनुपात ज्ञात करने के तथा जिलें की विभिन्न पंचायत समितियों व नगरों में जनाधिक्या जनअल्पता की स्थिति के आंकलन हेतु जनसंख्या घनत्व कापरिकलन किया गया है। इस अध्याय में जिले में जनसंख्या घनत्व को प्रभावित करने वाले कारकों, ग्रामीण व नगरीय गणितीय घनत्व (Airthmetic Density) तहसील के अनुसार में कार्यिक (Physiological), तथोपोष्टिक (Nutrition) घनत्व वितरण, जिले में आवृति निम्न (Very Low) निम्न (Low) मध्यम (Medium) उच्च (High) तथा अति उच्च (Very High) घनत्व के क्षेत्र घनत्व का परिवर्तित परिदृश्य (Hanging Scenario) आदि का विस्तृत विवरण दिया गया है।

जनसंख्या घनत्व (Density of Population)

जनसंख्या घनत्व किसी प्रदेश की जनसंख्या ओर उसी प्रदेश के कुल क्षेत्रफल के अनुपात को जनसंख्या का घनत्व कहते है। जनसंख्या में क्षेत्रफल का भाग देने से उस प्रदेश का जनसंख्या घनत्व ज्ञात हो जाता है जन घनत्व को प्रति वर्ग कि.मी. या प्रति वर्ग मील में व्यक्त किया जाता है।

जनसंख्या घनत्व प्रदेश के निश्चित क्षेत्र में आवासित जनसंख्या के वितरण को दर्शाता है। इस प्रकार प्रदेश में जनसंख्या वितरण में पायी जाने वाली विभिन्नताओं को दर्शाता है। जनसंख्या घनत्व को भी जनसंख्या के वितरण को प्रभावित करने वाले कारक ही प्रभावित करते है, जैसे उच्चावच, वर्षा, अधिवास का प्रतिरूप, आवश्यकता पूर्ति के साधन व आर्थिक एवं राजनीतिक कारक आदि। इस पकार डूंगरपुर जिले के जनसंख्या घनत्व को देखने से जिले के जनसंख्या की सघनता या विरलता का पता लगाया जा सकता है इससे जिले की आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक प्रगति के विकास योजनाओं बनानें में आवश्यक होता है।

तालिका 1 : जनसंख्या घनत्व के प्रकार

क्र.स.	घनत्व का नाम	सूत्र	विवरण या लक्षण
1ण	गणितीय या वास्तविक घनत्व	जन घनत्व = कुल जनसंख्या / कुल क्षेत्रफल	सबसे अधिक प्रचलित
2ण	कायिक घनत्व	कायिक घनत्व = कुल जनसंख्या / कुल कृषि योग्य भूमि	वीसेन्ट को जनक कहते है।
3ण	कृषिहर घनत्व	कृषिहर घनत्व = खेतीहर जनसंख्या / कृषि भूमि	–
4ण	पोष्टिक घनत्व	पोष्टिक घनत्व = कुल जनसंख्या / खाद्यान्न फसलों के	–

		अन्तर्गत क्षेत्रफल	
5ण	काष्ठा घनत्व	काष्ठा घनत्व = क्षेत्र की भूमि उपयोग क्रम / क्षेत्र की मानव पोषण क्षमता	एलान महोदय को जनक कहा जाता है।
6ण	आर्थिक घनत्व	आर्थिक घनत्व = कुल जनसंख्या / संसाधनों की उत्पादकता	सीमन महोदय इस विधि के जनक है।

स्त्रोत : शर्मा आर.के. (2009), राजस्थान का भूगोल, हिमांशु पब्लिकेशन, प. 98

तालिका 2 : डूँगरपुर में जनसंख्या घनत्व (1981 से 2011)

(व्यक्ति प्रति वर्ग किमी.)

जिला / तहसील	वर्ष				विचरण (प्रतिशत)
	1981	1991	2001	2011	
थ्जला					
डूँगरपुर	181	232	294	368	103.31
तहसील					
डूँगरपुर	207	222	320	360	73.91
आसपुर	179	212	267	324	81.00
सागवाड़ा	148	305	360	447	202.02
सीमलवाड़ा	-	202	214	348	72.28*

स्त्रोत – जिला सांख्यिकीय रूपरेखा (1984, 1994, 2004, 2013) डूंगरपुर,

* *सीमलवाड़ा का विचरण 1991 से परिकलित है। (मानचित में आरेख तहसील के अन्दर)*

**वर्ष 1981 में सीमलवाड़ा तहसील का अस्तित्व नहीं था इसलिए विचरण 1991 से 2011 तक का निकाला गया है।*

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि डूँगरपुर जिले का जनसंख्या घनत्व 1981 में 181 से बढ़कर 2011 में 368 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. हो गया। इस अवधि में घनत्व में 103.31 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जबकि इस अवधि में राज्य में 100.00 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी है।

तहसील स्तर पर जन घनत्व देखने से जिले में सर्वाधिक विचरण सागवाड़ा तहसील में 202.02 प्रतिशत रहा है। जबकि सबसे कम आसपुर तहसील में 81.00 प्रतिशत दर्ज किया गया है। सागवाड़ा तहसील में जन घनत्व में सर्वाधिक वृद्धि का कारण नगरीकरण, उपजाऊ मृदा के कारण कृषि के लिए अनुकुल दशाएँ, सिंचाई सुविधा के लिए माही बजाज सागर परियोजना की वितरिकाओं द्वारा सिंचाई हो रही है। इस कारण से जनसंख्या केन्द्रीकरण के रूप में बड़े–बड़े गांवों का विकास हो रहा है जैसे गलियाकोट, चितरी, खड़गदा, चिखली आदि गांवों के रूप में सघन जनघनत्व देखने को मिलता है।

डूँगरपुर जिले में सागवाड़ा तहसील में 1991 से लगातार 2011 तक जन घनत्व में प्रथम स्थान पर मौजूद है। सीमलवाड़ा में जनजाति जनसंख्या का प्रतिशत जिले में सर्वाधिक 84.35 प्रतिशत होने के कारण जनसंख्या वृद्धि दर अधिक है। पूर्व में बताया जा चुका है कि 2011 में 33.78 प्रतिशत रही है जो जिले के 25.36 प्रतिशत से

काफी अधिक है। इस कारण से भी जन घनत्व में वृद्धि लगातार हो रही है। जनजाति की जनसंख्या अपने अधिवास को एकाकी झोपड़ी के रूप बनाते है जिससे अधिवासों का प्रर्कीण रूप होता है।

राज्य के जनसंख्या घनत्व से जिले के सभी तहसील व जिले का जन घनत्व अधिक है। सन् 2011 में राज्य का जन घनत्व 200 है वही सागवाड़ा तहसील में दो गुना से अधिक (447) व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. रहा है। जो देश कि जनसंख्या घनत्व 382 (2011) से भी अधिक रहा है।

घनत्व को प्रभावित करने वाले कारक

(Factors Affecting Density of Population)

जिले में जनसंख्या के वितरण व घनत्व को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों भौतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, तकनीकि आदि को चौथे अध्याय में चार्ट 4.1 में पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है। यहां यह उल्लेख काला उपयुक्त होगा कि भौतिक कारकों में मुख्य रूप से वर्षा, तापमान, धरातल, नदी बेसिन, मिट्टी आदि ने ग्रामीण क्षेत्रों में घनत्व को सर्वाधिक प्रभावित किया है। इसी तरह परिवहन व सांस्कृतिक कारकों ने नगरीय व ग्रामीण घनतव को प्रभावित किया है।

उदाहरण के लिए जिले में सागवाड़ा तहसील (2011) में सर्वाधिक घनत्व के निम्न कारण है –

1. उपर्युक्त स्थिति जिले के मैदानी भाग में स्थिति
2. पर्याप्त जलपूर्ति में माही तथा दक्षिण में आवास नदी के प्रवाह के कारण
3. उपजाऊ मिट्टी – कृषि के लिए उपयुक्त कार्य मिट्टी उपलब्ध तथा
4. आर्थिक विकास – समतल क्षेत्र होने से सिंचाई, कृषि, परिवहन तथा औद्योगिक विकास अधिक हुआ है।

इसके विपरित जिन क्षेत्रों में प्रतिकूल भौगोलिक कारक (परिस्थितियों) के कारण न्यूनतम घनत्व पाया जाता है। यहां का अधिकांश धरातल पर्वतीय व पहाड़ी है तथा वर्षा की कमी के उच्च तापमान, नदियों का अभाव, पथरीली मिट्टी आदि कारकों ने यहां के घनत्व पद प्रतिकूल प्रभाव डाला ळें

ग्रामीण जनसंख्या घनत्व (Population Density Rural)

ग्रामीण जनसंख्या घनत्व का विश्लेषण करना अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि भारत गांवों का देश है, देश में दो तिहाई से अधिक जनसंख्या गांवों में निवास करता है। भारत का सम्पूर्ण विकास करना है तो गांवों के विकास के बिना संभव नहीं है।

अध्ययन क्षेत्र (डूंगरपुर) में अनुपातिक दृष्टि से देखते है तो राज्य में ग्रामीण जनसंख्या प्रतिशत में प्रथम स्थान पर है जिसमें सर्वाधिक 93.60 प्रतिशत जनसंख्या जनगणना 2011 के अनुसार गांवों में निवास करती है। इसलिए ग्रामीण जनसंख्या घनत्व का अध्ययन और भी महत्वपूर्ण हो जाता है।

तालिका 3 : डूंगरपुर जिले का ग्रामीण जनसंख्या घनत्व

(व्यक्ति प्रति वर्ग किमी.)

जिला / तहसील	1981	1991	2001	2011	विचरण (प्रतिशत)
राजस्थान	100	120	165	200	200
जिला					
डूँगरपुर	170	217	274	347	104.12
तहसील					
डूँगरपुर	190	197	288	330	73.68
आसपुर	177	212	267	324	83.05
सागवाड़ा	137	274	319	412	200.72
सीमलवाड़ा	-	202	214	348	72.28

स्त्रोत – जिला सांख्यिकीय रूपरेखा (1984, 1994, 2004, 2013) डूंगरपुर

**सीमलवाड़ा के विचरण प्रतिशत की गणना वर्ष 1991–2011 के बीच की है।*

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि डूँगरपुर जिले का ग्रामीण जन घनत्व 1981 में 170 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. था जो बढ़कर 2011 में 347 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. हो गया अर्थात् पिछले 30 वर्षो में जनघनत्व में 104.12 प्रतिशत विचरण (Variation) रहा है अतः दो गुना से कुछ अधिक हो गया।

तहसील के आंकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट है कि 1981 से 2011 के जनघनत्व में 1981 में सर्वाधिक डूंगरपुर (190) तहसील में और सबसे कम सागवाड़ा तहसील का घनत्व 412 हो गया जो जिले में सर्वाधिक था। डूँगरपुर तहसील में 330 (2011) व आसपुर तहसील में 1981 में 177 से बढकर 2011 में 324 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. हो गया।

विचरण (Variance) प्रतिशत के आधार पर देखने से स्पष्ट होता है कि 200.72 प्रतिशत के साथ सागवाड़ा तहसील में सर्वाधिक विचरण (Variance) देखा गया। क्योंकि यहां पर उपजाऊ मैदानी भाग में जनसंख्या कृषि कार्य को करती है। आय का मुख्य स्त्रोत कृषि है इस कारण इस मैदानी में जनसंख्या को केन्द्रीकरण को बढ़ावा दिया है। अर्थात यहां पर 5000 से अधिक आबादी वाले गांवों की संख्या 1981 में 0.77 प्रतिशत थी। 2000 से 4999 जनसंख्या वाले गांवों की संख्या 38¤31 थी। इस कारण से सागवाड़ा तहसील में जन घनत्व अधिक है। सीमलवाड़ा में जन घनत्व में विचरण (Varience) 72.28 प्रतिशत रहा है जन घनत्व कम रहने का कारण जिले का अधिकांश वन क्षेत्र इस तहसील में विद्यमान है। जिससे कृषि भूमि की उपलब्धा कम है जिससे रोजगार के अन्य विकल्पों निर्भरता के कारण घनत्व कम पाया जाता है। साथ ही जिला मुख्यालय से दूर स्थित होने से, शिक्षा, चिकित्सा, खनिज संसाधनों के अभाव से जन घनत्व में विचरण जिले के औसत 104.12 प्रतिशत से कम है।

नगरीय जनसंख्या घनत्व (Population Density Rural)

तालिका 4 : डूंगरपुर जिले का नगरीय जनसंख्या घनत्व

(व्यक्ति प्रति वर्ग किमी.)

जिला/तहसील	1981	1991	2001	2011	विचरण (प्रतिशत)
जिला					
डूँगरपुर	2560	2340	2918	3254	27.10
तहसील					
डूँगरपुर	2691	3484	3256	4659	73.13
आसपुर	-	-	-	-	-
सागवाड़ा	1128	1652	2097	2005	77.75
सीमलवाड़ा*	-	-	-	-	-

स्त्रोत – जिला सांख्यिकीय रूपरेखा (1984, 1994, 2004, 2013) डूंगरपुर,एवं परिकलित

**सीमलवाड़ा तहसील मं 2011 में पहली बार नगरीय क्षेत्र में सम्मिलित हुई है। अतः आंकड़े अनुपलब्ध है।*

उपर्युक्त तालिका एवं आरेख से स्पष्ट है कि डूंगरपुर जिले का नगरीय घनत्व 1981 में 2560 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था जो बढ़कर 2011 में 3254 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी हो गया। इसका कारण जनसंख्या की वृद्धि दर ज्यादा है। क्यों जिला जनजातिय बाहुल्य है। इसके अलावा साक्षरता (59.5 प्रतिशत) का निम्न स्तर के साथ ही महिला साक्षरता की स्थिति तो ओर भी दयनीय (46.2) प्रतिशत है। रोजगार की उपलब्धता के कारण ग्रामीण जनसंख्या का शहर में आकर बस जाना भी नगरीय जनसंख्या वृद्धि का मुख्य कारण है।

तहसीलवार आंकडों को देखने से स्पष्ट है डूंग्ररपुर तहसील का घनत्व 1981 में 2691 व्यक्ति से बढ़कर 2011 में बढ़कर 4659 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. हो गया। वही सागवाड़ा तहसील का नगरीय घनत्व 1981 में 1128 था जो 2011 में 2005 अंकित किया गया। जिले में ग्रामीण जनसंख्या राजस्थान के सभी में देखते तो सर्वाधिक प्रतिशत है।

कायिक घनत्व (Physiological Density)

यह घनत्व कुल जनसंख्या और कृषित क्षेत्र के अनुपात को प्रकट करता है। इससे प्रति हैक्टेयर अथवा प्रति वर्ग किमी. भूमि पर जनसंख्या का भार ज्ञात होता है। इसका सूत्र निम्नानुसार है –

$$\text{कायिक घनत्व} = \frac{\text{कुल जनसंख्या}}{\text{कृषित क्षेत्र}}$$

यह गणितीय घनत्व की तुलना में अधिक अच्छा सूचकांक प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के घनत्व में केवल कृषि अन्तर्गत क्षेत्र को आधार बनाया जाता है तथा अकृषि भूमि को छोड़ दिया जाता है। इस तरह यह विभिन्न भागों की कृषि भूमि की उर्वरता में जो अन्तर पाया जाता है। उसकी भी अवहेलना करता है। सभी कृषि भूमि को

समान महत्व देता है। इसे भी छोटी यदि इकाईयों के अनुसार ज्ञात करें। घनत्व वितरण का प्रतिरूप बहुत स्पष्ट हो जाता है।

तालिका 5 : डूंगरपुर जिले का तहसीलवार कायिक घनत्व

(1982—83 से 2012—13

(व्यक्ति/वर्ग किमी.)

जिला/तहसील	वर्ष			
	1982—83	**1992—93**	**2006—07**	**2012—13**
जिला				
डूंगरपुर	536	708	867	1036
तहसील				
डूंगरपुर	522	8423	1084	1298
आसपुर	537	750	441	1005
सागवाड़ा	583	827	961	1097
सीमलवाड़ा	—	490	608	770

स्त्रोत : जिला साख्यिकीय रूपरेखा (1984, 1994, 2008 व 2013) डूंगरपुर से परिकलित

उपरोक्त तालिका एवं आरेख से स्पष्ट है कि वर्ष 1982—83 में डूंगरपुर जिले में कायिक घनत्व 536 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. अंकित किया गया। जबकि तहसील स्तर के आंकड़ों से स्पष्ट है कि डूंगरपुर, आसपुर व सागवाड़ा, तहसील में क्रमशः 522, 537 व 583 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. कायिक घनत्व रहा है।

वर्ष 1992—93 में जिले में कुल कायिक घनत्व 708 प्रति वर्ग किमी. रहा है जबकि इसी वर्ष में डूंगरपुर, आसपुर, सागवाड़ा व सीमलवाड़ा तहसील में क्रमशः 843, 750, 827 व 490 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. रहा है अर्थात 1991—92 की तुलनाओं में वृद्धि हो रही है। इसका कारण जनसंख्या लगातार बढ़ रही है। लेकिन कृषि क्षेत्र में इसके अनुरूप वृद्धि नहीं हो पायी है। वर्षा सिंचाई साधनों की कमी प्रमुख कारण है।

वर्ष 2006—07 में कायिक घनत्व बढ़कर जिले में 867 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी हो गया जकि तहसील वार आंकड़ों में स्पष्ट है कि डूंगरपुर, आसपुर, सागवाड़ा व सीमलवाड़ा में क्रमशः 1084, 441, 961 व 608 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. अंकित किया गया है। अर्थात सर्वाधिक डूंगरपुर तहसील व न्यूनतम आसपुर तहसील में कायिक घनत्व रहा है।

2012—13 में कायिक घनत्व जिले में बढ़कर 1036 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. हो गया है। तहसील स्तर के आंकड़ों से स्पष्ट है कि डूंगरपुर, आसपुर, सागवाड़ा व सीमलवाड़ा में क्रमशः 1298, 1005, 1097 व 771 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी हो गया है। निष्कर्ष रूप कायिक घनत्व में जिलें में लगातार वृद्धि हो रही है इसका कारण उच्च जनसंख्या वृद्धि दर है।

पौष्टिक घनत्व (Nutrition Density)

पोषण या पौष्टिक घनत्व यह प्रदर्शित करता है कि सी प्रदेश में खाद्यान्नों के अन्तर्गत प्रयुक्त प्रति इकाई भूमि पर मनुष्यों की औसत संख्या कितनी है। इस प्रकार यह साधारणः खाद्यान्न भूमि और जनसंख्या का अनुपात होता है। यह इस कल्पना पर आधारित है कि मनुष्यों का पोषण खाद्यान्न के रूप में ही प्राप्त होता है। जिन कृषि प्रधान देशों में कोई, एक खाद्यान्न भी अधिकांश भूमि पर उगाया जाता है, वहां कुल खाद्यान्न भूमि के स्थान पर केवल प्रधान खाद्यान्न के अन्तर्गत प्रयुक्त भूमि को ही सम्मिलित किया जाता है। अर्थात पोषण घनत्व की गणना निम्न सूत्र द्वारा की जाती है।

$$\text{पोषण घनत्व} = \frac{\text{प्रदेश की कुल जनसंख्या}}{\text{प्रदेश की प्रमुख खाद्यान्नों अथवा कुल खाद्यान्न भूमि}}$$

यहाँ ऐसे देश या प्रदेश के लिए पोषण घनत्व की उपयोगिता कम हो जाती है। जहां की जनता मुख्यतः आयातित खाद्यान्नों पर निर्भर होती है अथवा जहां भोजन में खाद्यान्न का गौण महत्व होता है तथा पोषण का अधिकांश, भाग मांस, फल, दूध आदि पदार्थों से प्राप्त होता है।

अध्ययन क्षेत्र (डूंगरपुर) में पर्वतीय व पहाड़ी क्षेत्र अधिक है, साथ ही कृषि मानसून पर निर्भर करती है। अर्थात् अधिक वर्षा वाले वर्षं में खद्यान्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल बढ़ जाता है। इसका पोष्टिक घनत्व का महत्व पिछड़ी ग्रामीण जनजातिय बाहुल्य क्षेत्र के लिए और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। साथ ही कृषि लोगों के जीवन निर्वाह का मुख्य साधन है। जिले में पोष्टिक घनत्व निम्न सारणी में प्रदर्शित है।

तालिका 6 : डूंगरपुर जिले का तहसीलवार पोष्टिक घनत्व

(व्यक्ति / वर्ग किमी.)

जिला / तहसील	वर्ष			
	1981–82	**1991–92**	**2001–02**	**2011–12**
जिला				
डूंगरपुर	399	564	955	737
तहसील				
डूंगरपुर	839	694	1192	980
आसपुर	242	457	412	611
सागवाड़ा	393	547	992	738
सीमलवाड़ा	–	380	788	598

स्त्रोत : जिला साख्यिकीय रूपरेखा (1984, 1994, 2004 व 2013) डूंगरपुर से परिकलित

तालिका एवं आरेख से स्पष्ट है कि 1981–82 में डूंगरपुर जिले में कायिक घनत्व 399 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. था जो बढ़कर 2011–12 में 737 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. हो गया। अर्थात् लगातार इसमें वृद्धि हो रही है। इसका कारण जनसंख्या में तीव्र वृद्धि होना है इसकी अनुरूप खाद्यान्नों के अन्तर्गत क्षेत्रफल नहीं बढ़ रहा है।

वहां तहसील वार आंकड़ों से स्पष्ट है कि 1981—82 में डूंगरपुर, आसपुर व सागवाड़ा में क्रमशः 839, 242 व 393 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. घनत्व इन्ही क्षेत्रों में 1991—1992 में क्रमशः 564, 694, 457 व्यक्ति प्रति था जबकि सीमलवाड़ा में मात्र 380 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. पोष्टिक घनत्व अंकित किया गया है।

प्रादेशिक विकास को प्रभावित करने वाले कारकों के बीच सहसम्बन्ध (Correlation between the factors affecting regional development)

यहाँ हमने डूंगरपुर जिलें के विकास को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारण चरों के बीच सहसम्बन्ध ज्ञात किया है। जो यह प्रदर्शित करता है कि ये चर प्रादेशिक विकास को कितना प्रभावित करते है। इनका विवरण इस प्रकार है ;

विभिन्न कारण चरों के बीच सहसम्बन्ध (Correlation between Exploratory Variables) :

डूंगरपुर जिले में जनसंख्या सरंचना, वृद्धि दर का विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने हेतु हमने निम्न सहसम्बन्ध मेट्रीक्स की गणना की है जो विभिन्न कारण चरों के बीच सहसम्बन्ध को व्यक्त करती है।

कारण चर :

X_1 : क्षेत्र का विकास

Y_1 : साक्षरता

Y_2 : पुरूष साक्षरता

Y_3 : महिला साक्षरता

Y_4 : जनसंख्सा घनत्व

Y_5 : जनसंख्या वृद्धि दर

Y_6 :अनुसूचित जनजातिया की जनसंख्या

Y_7 : अनुसूचित जाति की जनसंख्या

Y_8 : लिंगानुपात

तालिका 7 : सहसम्बन्ध मेट्रीक्स

	X_1	Y_1	Y_2	Y_3	Y_4	Y_5	Y_6	Y_7	Y_8
X_1	1								
Y_1	.28	1							
Y_2	.48	.26	1						
Y_3	.39	.28	.42	1					
Y_4	.42	.68	.68	.41	1				
Y_5	¼ &	.49	.31	.62	.42	1			

	½.62							
Y_6	.39	.58	.51	.49	.62	.71	1	
Y_7	.28	.39	.41	.61	.72	.62	.49	1
Y_8	.24	.36	.28	.21	.64	.62	.38	.49	1

स्त्रोत : आगणित

(i) क्षेत्र का विकास (X_1) : सहसम्बन्ध मैट्रीक्स द्वारा क्षेत्र क विकास एवं इसके निर्धारक तत्वों के अन्तर्सम्बन्ध का विवेचन करने पर पता चलता है कि X_1 चर का Y_1, Y_2, Y_3, Y_4, Y_5, Y_6, Y_7 एवं Y_8 चरों के साथ सहसम्बध क्रमशः .28, .48, .39, .42, .62, .39, .28 एवं .24 आया है जो घनात्मक है। स्पष्ट है कि कारण चरों एवं क्षेत्र के विकास के बीच घनात्मक सहसम्बन्ध पाया जाता है। जिन क्षेत्रों में साक्षरता जनसंख्या घनत्व, अनुसूचित जाति एवं जनजातियों की संरचना तथा लिंगानुपात अधिक है। उन क्षेत्रों में विकास का स्तर भी ऊंचा है।

यहां जनसंख्या वृद्धि दर एवं विकास के बीच सहसम्बन्ध गुणांक ऋणात्मक है अर्थात् जनसंख्या की वृद्धि दर के बढ़ने पर क्षेत्र का विकास अवरूद्ध होता है।

(ii) Y_1 : साक्षरता का अन्य चरों के साथ सहसम्बंध गुणांक देखने पर यह पता चलता है कि साक्षरता का, पुरूष एवं महिला साक्षरता, घनत्व, लिंगानुपात जनसंख्या वृद्धि दर एवं अनुसूचित जाति तथा जनजातियों के संख्या के साथ सहसम्बंध है। अर्थात् इन चरों एवं क्षेत्र में साक्षरता की स्थिति के धनात्मक सम्बन्ध पाया जाता है। पुरूष व महिला साक्षरों की अधिक संख्या क्षेत्र में साक्षरता के प्रतिशत को बढ़ाती है।

(iii) Y_2 : पुरुष साक्षरता का अन्य चरों के साथ सम्बन्ध देखने पर पता चलता है कि अन्य कारण चरों एवं पुरूष साक्षरता के बीच धनात्मक सहसम्बंध पाया जाता है। जनघनत्व, महिला साक्षरता, जनसंख्या वृद्धि दर, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की जनसंख्या एवं लिंगानुपात का पुरूष साक्षरता दर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। स्पष्ट है कि ये चर पुरूष साक्षरता की वृद्धि को प्रेरित करते है।

(IV) Y_3 : महिला साक्षरता का भी अन्य कारक चरों साथ सहसम्बंध गुणांक धनात्मक ही प्राप्त हुआ है। महिला साक्षरता का साक्षरता, पुरुष साक्षरता, जनसंख्या घनत्व, जनसंख्या वृद्धि दर, अनुसूचित जाति एवं जनजातियों की जनसंख्या एवं लिंगानुपात में धनात्मक एवं सकारात्मक सम्बन्ध पाया गया है अर्थात् में चर महिला साक्षरता को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते है। महिला साक्षरता का बढ़ता हुआ स्तर क्षेत्र के विकास हेतु अच्छा कदम है।

(V) Y_4 : जनसंख्या घनत्व का अन्य चरों के साथ सम्बंध देखने पर पता चलता है कि साक्षरता, पुरूष एवं महिला साक्षरता बढ़ने पर जनसंख्या घनत्व में वृद्धि होती है। जनसंख्या वृद्धि दर, अनुसूचित जाति एवं जनजातियों की जनसंख्या एवं लिंगानुपात बढ़ने से भी जनसंख्या घनत्व में वृद्धि होती है। सभी चरों के सहसम्बंध गुणांक घनात्मक है अतः ये चर जनसंख्या घनत्व को सकारात्मक रूप से प्रभावित करते है।

(VI) Y_5 : जनसंख्या वृद्धि का अन्य चरों के साथ सहसम्बंध देखे तो क्षेत्र का विकास होने पर जनसंख्या वृद्धि में कमी आती है। अर्थात दोनों के ऋणात्मक सम्बंध है। अन्य सभी चर जनसंख्या वृद्धि को सकारात्मक रूप से

प्रभावीत करते है अर्थात साक्षरता, अनुसूचित जाति एवं जनजाति की जनसंख्या एवं लिंगानुपात के बढ़ने पर जनसंख्या वृद्धि बढ़ती है।

(VII) Y_6 :अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या का अन्य सभी चरों के सह सम्बंध गुणांक धनात्मक आया है अतः इन चरों एवं अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या में धनात्मक (सकारात्मक) सम्बन्ध पाया जाता है। इन चरों में वृद्धि होने पर जनसंख्या बढ़ती है।

(VIII) Y_7 : अनुसूचित जातियों की जनसंख्या का भी अन्य स्वतंत्र चारों के साथ घनात्मक सहसम्बंध पाया गया है जो सिद्ध करता है कि इन चरों में वृद्धि होने पर अनुसूचित जातियों की जनसंख्या बढ़ती है।

(IX) Y_8 : लिंगानुपात एवं अन्य चरों के सम्बंध को देखे तो पता चलता है कि विकास की वृद्धि के साथ–साथ लिंगानुपात बढ़ता है। साक्षरता में वृद्धि के साथ भी लिंगानुपात में वृद्धि होती है। जनसंख्या वृद्धि दर एवं अनुसूचित जाति एवं जनजातियों की संख्या के बीच भी घनात्मक सम्बंध है जो यह सिद्ध करता है कि लिंगानुपात पर अन्य सभी चरों में परिवर्तन का धनात्मक प्रभाव पड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ (BIBLIOGRAPHY)

Ackerman, E.A. (1959) : Geography and Demography in Hauser and Duncan (eds.)The study of Population (Chicago : The University of Chicago Press).

Aurousseu, M. (1923) : The Geographic Study of Population Geography; Geographical Review, PP. 266-282.

Bogue, D.J. (1970) : Population Distribution in Population Geography : A Reader, George D. Demko ed. al. (eds); Mcgraw Hill Book Co., New York.

Chandna, R.C. and Kant, Surya (1985) : Distribution and Density of Population in India; Asian Profile, Hongkong, Vol. 13, No.4, PP. 339-351.

Chandna, R.C. (1986) : A Geography of Population : Concepts, Determinants & Patterns; Kalyani Publishers, Delhi.

Chatterjee, S.P. (1962) : Regional Pattern of Density and Distribution of Population in India; Geographical Review of India 24, PP. 1-28.

Clarke, J.I. (1981) : Population Geography and the Developing Countries; Pergaman Press Oxford.

Gosal, G.S. (1984) : "Population Geography in India" in Geography and Population, Approaches and Applications by John I. Clarke (ed); Pergaman Press, Oxford, PP. 203-214.

Hauser, P.H. and Duncan, J.D. (1961) : The Study of Population; Asia Publishing House, Delhi.

Jarmali, F.Z. (1995) : Population Geography of Nimar; Vasundhara Prakashan, Gorakhpur.

Jones, H.R. (1983) : A Population Geography; Harper and Row Publishers, London.

Joshi, Hemlata (1991) : Economy of Bhils in Rajasthan –A Geographical Analysis, Agricultural and Economic Aspects of Tribal Landscapes Ed. G.P. Gupta; Arihant Publication, Jaipur, PP. 296-304.

Ojha, R.P. (1984) : Jansankhya Bhoogol; Pratisha Prakashan.

Thompson, W.S. (1953-70) : Population Problem; Mcgraw Hill, Chicago.

खंड 08 अंक 33 वर्ष 2017 (सितम्बर 2017) आईएसएसएनः 2320-2467 आईएफः 4.0

राजस्थानी कहावतों में वर्षा का पूर्वानुमान

सुरेश कुमार सांदू (व्याख्याता)
डॉ. नवल किशोर उपाध्याय
राजकीय कन्या महाविद्यालय,
अजमेर (राज.)

सृष्टि के सारे जीवों का आधार जल को माना गया है, इसीलिये कहा जाता है कि **''जल ही जीवन है।''** जल के अभाव में किसी भी प्रकार के जीव या वनस्पति का विकास संभव नहीं है। अतः हमारी धरती पर जल का महत्व है इसी कारण प्राचीन मानव सभ्यता एवं संस्कृतियों का विकास नदी-घाटियों में हुआ। वर्ष भर जल प्रदान करने वाली नदियां ही मानव सभ्यता के विकास का प्रथम केन्द्र बनी। आज के युग में भी जहां जल की प्रचुरता एवं सुलभता है वहां औद्योगिक विकास के केन्द्र स्थापित हुए है इसलिये समय के साथ मूलभूत आवश्यकताओं में मानव के लिए जल सदैव पहली एवं प्रमुख आवश्यकता रही है।

राजस्थान में वर्षा की शुरू से कमी रही है। राजस्थान के लोग पेय जल, कृषि एवं पशु-पालन के लिए वर्षा के जल पर निर्भर रहते थे, इस तरह वर्षा पर आश्रित होने के चलते जाहिर है राजस्थानवासी वर्षा का बेसब्री से इंतजार करते थे, इसी बेसब्री ने उन्हें मौसम विज्ञान समझने की प्रेरणा दी और राजस्थान के लोगों ने अपने मौसम ज्ञान को जो कि वैज्ञानिक कसौटी पर भी खरा था को कहावतों में सहेज लिया ताकी आने वाले समय में ये पारम्परिक ज्ञान कहावतों में बचा रहे व आमजन इसे आसानी से समझ सके। वर्षा को लेकर प्रचलित कुछ कहावतें जो यहां के प्रमुख कहावतकारों जिसमें विक्रम सिंह राठौड़ गुन्दौज, विजय दान देथा एवं भागीरथ कानोडिया आदि ने संकलित की हैं।

आगम सूझे सांढणी, दौड़े थला अपार।
पग पटकै बैसे नहीं, जद मेह आवणहार।।

सांढणी (ऊंटनी) को वर्षा का पूर्वाभास हो जाता है, सांढणी जब इधर-उधर भागने लगे, अपने पैर जमीन पर पटकने लगे और बैठे नहीं तब समझना चाहिए कि बरसात आने वाली है। यह वैज्ञानिक तथ्य है कि वर्षा, आंधी, तूफान, बाढ़, भूकम्प, ज्वालामुखी आदि पर्यावरणीय एवं भूगर्भीय घटनाओं से पूर्व पशु-पक्षियों के व्यवहार में परिवर्तन देखने को मिलता है। अतः राजस्थान के कहावतकारों ने अपनी कहावतों में इसी वैज्ञानिक तथ्य को उजागर करने का प्रयास किया है।

तीतर पंखी, बादली, विधवा काजळ रेख।
बा बरसै बा घर करै, ईमें मीन न मेख।।

यदि तीतर पंखी बादली हो (तीतर के पंखों जैसा बादलों का रंग हो) तो वह जरूर बरसेगी। विधवा स्त्री की आंख में काजल की रेखा दिखायी दे तो समझना चाहिए कि वह अवश्य ही नया घर बसायेगी, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। बादलों के रंग, आकार, ऊंचाई आदि के आधार पर बादलों का वैज्ञानिक वर्गीकरण किया गया है तथा वर्षा का पूर्वानुमान बादलों के रंग के आधार पर आज भी वैज्ञानिक यंत्रों के माध्यम से किया जाता है। अतः राजस्थान की कहावतों में इसी वैज्ञानिक, तार्किक एवं यांन्त्रिक तथ्य को समाहित किया गया है जो आज भी प्रासंगिक है।

मावां पोवां धोधूंकार, फागण मास उड़ावै छार।
चैत मास बीज लह्कौवे, भर बैसाखां केसू धौवै।।

माघ और पोष में कोहरा दिखाई पड़े, फाल्गुन में धूल उड़े, चैत्र में बिजली न दिखाई दे तो बैशाख में वर्षा होती है।

अक्खा रोहण बायरी, राखी सरबन न होय।
पो ही मूल न होय तो, म्ही डूलंती जोय।।

अक्षय तृतीया पर रोहणी नक्षत्र न हो, रक्ष्झा बंधन पर श्रवण नक्षत्र न हो और पौष की पूर्णिमा पर मूल नक्षत्र न हो तो संसार में विपत्ति आने की संभावना रहती है।

अत तरणावै तीतरी, लक्खारी कुरलेह।
सारस डूंगर भमै, जद अत जोरे मेह ।।

तीतरी जोर से बोलने लगे, लक्खारी कुरलाने लगे, सारस पहाड़ों की चोटियों पर चढ़ने लगे तो ये सब जोरदार वर्षा आने के संकेत है।

अगस्त ऊगा मेह पूगा।

अगस्त्य तारा उदय होने पर वर्षा का अंत समझना चाहिए।

अगस्त ऊगा मेह न मंडे।
जो मंडे तो धार न खंड़े।।

अगस्त तारा उदय होने पर प्रायः वर्षा नहीं होती, लेकिन कभी हो तो फिर खूब जोरों से वर्षा होती है।

अम्बर पीलो।
मेह सीलो।।

वर्षा ऋतु में आसमान का रंग पीलापन लिए हुए दिखाई दे तो ये वर्षा के मंद पड़ जाने का संकेत है।

अम्बर रातों।
मेह मातो।।

वर्षा ऋतु में यदि आसमान लाल दिखाई पड़े, लालिमा छाई हो, तो अत्यधिक वर्षा होने की ओर संकेत करता है।

अम्बर हरियौ, चुवै टपरियौ।

वर्षा ऋतु में आकाश का हरापन सामान्य वर्षा का द्योत्तक है।

धुर बरसालै लूंकड़ी, ऊंची घुरी खिणन्त।
भेली होय ज खेल करै, तो जळधर अति बरसन्त।।

यदि वर्षा ऋतु के आरम्भ में लोमड़िया अपनी धूरी (निवास स्थान) ऊंचाई पर खोदे एवं परस्पर मिलकर क्रीडा करे तो जानो वर्षा भरपूर होगी।

आगम चौमासै लूंकड़ी, जै नहीं खोदे गेह।
तो निहचै ही जांणज्यों, नहीं बरसैलों मेह।।

वर्षाकाल से पूर्व लोमड़ी यदि अपनी धुरी नहीं खोदे तो निश्चय ही इस बार वर्षा नहीं होगी।

घट में पानी गरम व्है, चिड़ियां न्यावे धूर।
चींटी ले अण्डा चढ़ै, तो बरखा भरपूर।।

यदि घड़े का पानी गरम होने लगे, चिड़ियां धूल में नहाने लगे और चिंटिंया अपने अण्डो को लेकर उपरी स्थानों में जाने लगे तो समझ लेना चाहिए कि वर्षा भरपूर होने वाली है।

बेरी बाजे सर्यो; तो हालों कियोन पूरियों।
घर बैठी जानियों, तो भाता कियोन आनियों।।

एक किसान अपनी पत्नी से पूछ रहा है कि जब उसे घर बैठे ही मालूम है कि उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर हवाएं चल रही है तो क्यों उसने जुताई वालें को (हळी) खेत में भेजा तथा क्यों उसका खाना (भाता) खेत में लेकर आई है। अर्थात् यदि जुलाई के महिने में हवाएं उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर चल रही है तो इसका मतलब है कि अब बारिश नहीं होने वाली है।

बरसे भरणी, छोड़े परणी।

यदि भरणी नामक नक्ष् में यानि 25 अप्रैल से 8 मई के बीच वर्षा होती है तो पति को अपनी पत्नी को छोड़ना पड़ेगा। अर्थात् ऐसा भीषण अकाल पड़ेगा कि पति अपनी पत्नी को भी साथ नहीं रख पाएगा।

अत पित्त वाळो आदमी, सोवै निद्रा घोर।
अणपढ़िया आतम थकी, कहै मेघ अति जोर।।

अधिक पित प्रकृति वाला रोगी मनुष्य यदि दिन में घोर निद्रा में सोये तो वर्षा जोरों से होगी।

आदरा भरै खादरा, पुनरबसु भरै तलाब।
न बरस्यों पुखै तो, बरसै ही घणा दुखै।।

आर्द्रा नक्षत्र में साधारण वर्षा होती है, पुनर्वसु में वर्षा की बहुलता होती है, लेकिन यदि पुष्य नक्षत्र में वर्षा न हो तो फिर बड़ी मुश्किल से ही वर्षा होती है।

आसाढां धुर अष्टमी, चंद उगंतों जोय।

काळो व्है तो कुरियौ, धोळो व्है तो सुगाळ।।

जो चंदों निरमल हुवै तो पड़े अचित्यों काल ।।।

आषाढ़ कृष्ण पक्ष की अष्टमी को यदि चांद का उदय काले बादलों में हो तो जमाना साधारण होगा, श्वेत बादलो में उदय होने पर भरपूर जमाना होगा, और यदि बादल न हो तो दुर्भिक्ष पड़ेगा।

ऊमस कर घृत माट गमावै, इंडा कीड़ी बाहर लावै।

नीर बिनां चिड़ियां रज न्हावै, मेह बरसै घर मांह न मावै।।

यदि उमस के कारण बिलौने (माट) में पड़ा घी पिघल जाये, चीटियां अपने अण्डों को बाहर लाने लगे और चिड़ियां रेत में स्नान करे तो भरपूर वर्षा होती है।

अे परवाई बाई, गाढ़ा मेह कठै सूं ल्याई ?

सुन रे सूरया भाई, अेक घड़ी में चालन पाऊ,

तो खूंटे बंध्या पाड़ा प्याऊं।।

परवा (पुरवैया) हवा थोड़ी भी चले तो इतनी अधिक वर्षा करवा देती है कि खूंटे बंधे हुये पाड़ो (भैंस के बच्चों) को पानी पिला देती है।

कंचन जैड़ी ऊजळी, उतर बीज सुहाय।

अग्गम देवै सूचना, बेगी बिरखा आय।।

स्वर्ण आभा जैसी बिजली उत्तर दिशा में चमके तो जानों की वर्षा शीघ्र ही आने वाली है।

कीड़ा पड़ै गोबर कै मांय, पपैयों मीठो बोल सुणाय।

अमल चामड़ो गीलो होय, बिरखा हुवै न संसै कोय।

यदि गोबर में कीड़े पड़े, पपैया मीठी वाणी में बोले, अफीम और चमड़े में गीलापन आ जाये तो निश्चय ही वर्षा होगी।

गाजै बाजै करै डफांण, वाय लंकाऊ दूध उफाण।

रंग-रूप जे घणां जतावै, तो यूं ग्वाळयों काळ बतावै।।

आकश में बादलों की गरजना हो, बिजलियां चमके, बादल विभिन्न प्रकार के रूप-रंग दिखाये और उस समय यदि दक्षिण दिशा की वायु हो तो उस वर्ष अकाल पड़ेगा।

चिड़ियां जे माळौ करै, कोठां कमरां मायं।

बिरखा आयां आगमच, तो च्यार मास बरसाय।।

वर्षा ऋतु के आगमन से पूर्व यदि चिड़ियां अपने घोसले घरों के कमरों में बनाने लगे तो जानों कि चौमासे के चारों महिने बरसात में निकलेंगे।

चिड़ी ज न्हावै धूळ में, मेहा आवण हार।
जळ में न्हावै चिड़कळी, मेह विदातिण बार।।

चिड़ियों का धूल में नहाना वर्षा के आममन का सूचक है तो उनका जल में नहाना, मेह की विदाई की सूचना देती है।

छह ग्रह एक रास पर आवै।
महाकाल में नूंतर ळावै।।

एक राशि पर छः ग्रह एकत्रित हो तो घोर दुर्भिक्ष पड़ता है या महाविनाश होता है।

जै दिन जेठ बहै परवाई, तै दिन सावन धूड़ उड़ाई।

जेठ के महिने में पूरवाई हवा चले तो अगला सावन सुखा ही निकलेगा, इसमें कोई संशय नहीं है।

जे भीज्यों कोनी काकड़ो, तो क्यूं फेरे हाळी लाकड़ो ?

कर्क संक्रांति पर वर्षा न हो तो हल जोतना व्यर्थ है। क्योंकि अकाल पड़ेगा।

दक्खण धनुष करै मेह हाण, बिग्रह टीडी पड़े सुकाळ।

दक्षिणी दिशा में इन्द्र धनुष दिखाई पड़े तो अकाल पर उत्पात के संकेत देता है।

नींबोळी सूकै नीम पर, पड़ै न चीने आय।
अन्न न निपजै एक कण, काल पड़ेगो आय।।

यदि नींबोलिया पककर नीम के पेड़ पर ही सूक जाए, नीचे न गिरे तो जानों कि अकाल पड़ेगा।

पपीहो पिउ पिउ करै, मोरां घणी अजग्ग।
छत्र करै मोर्‌यो सिरै, नदियां बहै अथग्ग।।

पपीहा बार-बार पिउ-पिउ करे, मोर अधिक बोले और छतरी ताने तो वर्षा इतनी अधिक होगी कि नदियों में उफान आ जाएगा।

पीतळ कांसी लोह नै, पड़यो काट चढ़ जाय।
जळधर आवै दौड़तो, इण में संसै नांय।।

पीतल, कांसी और लोह पर जंग चढ़ने लगे तो वर्षा शीघ्र हो जायेगी।

इस प्रकार राजस्थान के लोगों ने पक्षियों के व्यवहार में परिवर्तन, हवाओं की दिशा, बादलों के रंग, ऊंचाई एंव आकार, ग्रह नक्षत्रों की स्थिति, राशियों का ज्ञान, वार-दिवस आदि के आधार पर वर्षा का पूर्वानुमान लगाते थे, जो कि काफी हद तक वैज्ञानिक, तार्किक एवं व्यवहारिक है तथा जिनकी उपादेयता आज भी प्रासंगिक है। हमारे कहावतकारों ने इस वैज्ञानिक ज्ञान को अपनी कहावतों में संजोकर सुरक्षित रखा है।

आज मौसम विज्ञान जो पूर्वानुमान अनेक जटिल उपकरणों, सेंसर, कम्प्यूटर आदि से हवा में मौजूद आर्द्रता, दबाव, हवा की दिशा आदि से लगाते है वह पूर्वानुमान हमारे पूर्वज अपनी कहावतों में संचित उपर्युक्त ज्ञान के आधार पर लगाते थे।

संदर्भ

1. राजस्थानी हिन्दी कहावत कोश (12 भाग) - पदम श्री विजयदान देथा।
2. राजस्थानी कहावतें - डॉ. कन्हैयालाल सहल।
3. राजस्थानी कहावते एक अध्ययन - डॉ. कन्हैयालाल सहल।
4. राजस्थानी कहावत कोश - भागीरथ कानोड़िया, गोविन्द अग्रवाल।
5. राजस्थानी कहावतों में वर्षा - डॉ. विक्रम सिंह राठौड़।
6. मेवाड़ की कहावतें - डॉ. लक्ष्मीलाल जोशी।
7. मारवाड़ी कहावते - श्यामसुन्दर जोशी।
8. हाड़ौती कहावतें - नाथूलाल पाठक।
9. राजस्थानी कृषि कहावते (भाग-4) - जगदीश सिंह गहलोत।
10. राजस्थानी कहावतें (4 भाग) - मनोहर सिंह राठौड़।
11. लोक विरासत खरी कहावतें - हरदान हर्ष।
12. कहावती कथाएं (कहावतों के साथ कथाएं) - पदमश्री विजयदान देथा।
13. कहावतों की कथाएं - सी.ए. पूजा सिंघवी।
14. जाटों की कहावती कथाएं - लखन लाल।
15. प्रेरक कहावत कथाएं - दीपाली भण्डारी।
16. राजस्थानी कहावतें मारवाड़ की सांस्कृति धरोहर - दिनेश चन्द्र ओझा।
17. राजस्थानी कहावते (दो भाग)-प्रो० नरोत्तम स्वामी, पं. मुरलीधर व्यास।
18. इन्टरनेट।

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

युजीसी के अनुमोदित पत्रिका सं. 64649

वर्ष 08 अंक 33 सितम्बर 2017 **ISSN: 2320-2467**

अनुक्रमनिका

01	संयुक्त परिवार के बदलते प्रतिमानों के सामाजिक कारण (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)/अनुराधा पाण्डेय	01-07
02	आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा संचालित योजनाओं का जनजातीय शिक्षा पर प्रभावों का अध्ययन–विशेष शहडोल जिला/ डॉ. अरूण कुमार सिंह	08-12
03	भारतीय संस्कृति में महिला सशक्तिकरण के विविध उपकरण/डॉ. पुष्पा	13-25
04	हरियाणा व भारत छोड़ो आंदोलन : प्रैस पर आधारित एक अध्ययन/ डॉ॰ नीलम रानी	26-41
05	दूरस्त शिक्षा में तकनीकी का योगदान/डा0 (श्रीमती) अंजू लता	42-45
06	हिन्दी तथा छत्तीसगढ़ी में हास्य–व्यंग्य (विमर्श)/डॉ. सत्येन्द्र कुमार कश्यप	46-49
07	अध्यापक शिक्षाः मूल्य शिक्षा हेतु पाठ्य सहगामी क्रियायें/डा0 (श्रीमती) अंजु लता	50-53
08	लिंग असमानता–एक अध्ययन/इन्दुलता सिंह	54-57
09	ग्रामीण महिलाओं के धार्मिक क्रियाकलापों में परिवर्तन–एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (शहडोल जिले के विशेष संदर्भ में)/डॉ. अमृता सिंह चौहान	58-66
10	पत्नी के रूप में नारी के सन्दर्भ एवं महत्ता/देवव्रत यादव	67-68
11	माता के रूप में नारी के सन्दर्भ एवं महत्ता/देवव्रत यादव	69-70
12	उच्च शिक्षा के वैश्वीकरण के प्रति भावी शिक्षकों की अभिवृत्ति का अध्ययन/डॉ0 सुषमा अग्रवाल एवं नीलम यादव	71-79
13	व्यक्तित्व विकास में संस्कृत साहित्य की भूमिका/डॉ. राजू प्रसाद अहरवाल	80-88
14	बघेली कहानी : वस्तुविन्यास और जीवन दर्शन/डॉ. राधवेन्द्र तिवारी एवं कमलेश तिवारी	89-97
15	English Historiography Of Medieval India : A Brief Survey/ Dr. Neelam Rani	98-101
16	हिन्दी कविता में व्यंग्य/ डॉ. अंजलि शर्मा	102-109
17	Role Of Agriculture in Green Economy/ Dr.Paras Jain	110-118
18	रायपुर जिले में महिला उद्यमिता (समस्याएं एवं संभावनाएं)/श्रीमती प्रीति कंसारा	119-124
19	भारत में आतंकवादः एक समस्या/ कु. चॉदनी नायक	125-129
20	Uniform Civil Code: A Distant Ray of Hope/ Anju	130-137
21	बघेलखण्ड में 1857 का विप्लव एवं राजनीतिक जागरण/रिया सिंह	138-141
22	समीक्षा के कतिपय भारतीय एवं पाश्चात्य मानक/डॉ. बी.एन. सिंह	142-148
23	संस्कृत शिक्षा अथवा संस्कृत भाषा के उत्थान हेतु संस्कृत पत्रकारिता एवं वर्तमान चुनौतियाँ/डॉ.धीरज प्रकाश जोशी	149-155
24	डूंगरपुर जिले की जनसख्ं या घनत्व प्रतिरूप का सामाजिक–आर्थिक विकास पर प्रभाव/डॉ. पंकज रावल	156-166
25	राजस्थानी कहावतों में वर्षा का पूर्वानुमान/सुरेश कुमार सांदू	167-172

आरती पब्लिशिंग हाउस एंड ड्रिस्ट्रीब्यूटर्स

युगांतर अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

मुख्य कार्यालयः आर जेड 394, गली नं. 16

कैलाशपुरी एक्सटेंसन, नई दिल्ली–110045

ई मेलः akhilesh_tiwari1979@yahoo.com वेबसाइटः http://yugantar.co.in